

UNIVERSAL
LIBRARY

OU_180521

UNIVERSAL
LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

H 83
Call No. R16D

Accession No. 2111

Author ब्रह्मसिंह, दत्त .

Title दुःख-विधा .

This book should be returned on or before the date
last marked below.

दुःखी-विधवा

(सामाजिक उपन्यास)

मूल लेखक—

स्व० सर रमेशचन्द्र दत्त

अनुवादक—

कमलाप्रसाद राय शर्मा, बी. ए.

प्रकाशक—

वैदिक पुस्तकालय, नीचीबाग, बनारस

मूल्य ३)

प्रकाशक—
वैदिक पुस्तकालय,
नीचीबाग, बनारस ।



मुद्रक—
पं० जानकी शरण त्रिपाठी
सूर्य प्रेस, काशी ।

आरा से बक्सर को जो रास्ता गया हुआ है उससे थोड़ी ही दूर पर कुन्दनपुर नाम का एक गाँव है। यहाँ से आरा कोई छः मील होगा। कुन्दनपुर छोटा सा गाँव है, कुल तीस-चालीस घर की बस्ती होगी। दस-पन्द्रह घर ब्राह्मण, पाँच चार घर क्षत्री और बनिये, पन्द्रह-बीस घर धाँवा, नाई, किसान ग्वाले, कोइरी वगैरः के हैं। दो-चार घर भर तेली-कहार और चमारों के भी हैं। पहले ज़माने में सम्पन्न जमींदार लोग अकसर ग्रामों में बड़े बड़े तालाब बनवा दिया करते थे जिनके चिह्न अब तक कहीं कहीं मौजूद हैं। इस गाँव में भी एक तालाब है जिसके दोनों किनारों पर लम्बे लम्बे ताड़, सुपारी और नारियल के पेड़ खड़े हैं।

सन्ध्या का समय है। एक विधवा ब्राह्मणी इस तालाब की सीढ़ी उतर रही है। इसकी गोद में एक तरफ मिट्टी की एक गगरी है और एक तरफ चार वर्ष की सुन्दरी बालिका है। मूरज डूब चुका है, तालाब में अँधियारा हो आया है और बड़े बड़े पेड़ों की डालियों से ढका हुआ तालाब इस सन्नाटे में कुछ भयावना सा मालूम पड़ रहा है। इस ब्राह्मण नारी की उम्र करीब अड़तीस वर्ष की होगी पर चिन्ता और गरीबी से सिर के बाल कुछ कुछ श्वेत हो चले हैं। यह रमणी धीरे-धीरे मानो संसारिक चिन्ता और भार से थकित हो सिर नीचा किये तालाब की सीढ़ी उतर रही है। इसके पीछे एक श्या-

मांगी बालिका, जिसकी उम्र करीब दस वर्ष की होगी। तालाब में पेड़ों की परछाहीं देखती हुई चली आ रही है। सीढ़ी उतर कर इस रमणी ने पीछे आती हुई बालिका से कहा—“बेटी, बसन्ती तू ज़रा चम्पा को तो पकड़ तब तक मैं दो गोते लगा लूं”।

बसन्ती—मां, मैं भी नहाऊंगी।

माता---ना, बेटी, इस समय तेरा नहाना ठीक नहीं।

यह कह कर माता ने छोटी कन्या को बसन्ती का गोंद में दे दिया और आप तालाब में उतर कर नहाने लगी।

यहाँ इस रमणी का कुछ परिचय दे देना उचित समझ पड़ता है। यह रमणी विश्वनाथ की विधवा है। विश्वनाथ को मरे दो वर्ष हो चुके हैं। इस दरिद्र परिवार के पास केवल पांच-सात बीघे जमीन थी। विश्वनाथ खुद तो जमीन जोतना नहा था, गल्ले का दिस्सा लेकर दूसरे किसानों से जमीन जोतवाता था। इसमें लगान बीज वगैरह का खर्च इत्यादि देकर बहुत थोड़ा ही बचता था। जिससे ज्यों त्यों कर काम चलता रहता था। विश्वनाथ के चचेरे भाई रमनाथ बांकीपुर में अमीन हैं, दो पैसे की अच्छा आमदनी है। आजकल के जमाने में सगे भाई ही अपने नहीं होते, चचेरे भाई का कौन कहे। पर हाँ कभी रोग दुख या ऐसी ही किसी आफत-बिपत के समय रमनाथ छोटे भाई को पांच-सात रुपया कज दे देते थे। और रुपया पटनेपर भाई होने की सबब से सूद छाड़ देते थे। विवाह के पन्द्रह-सोलह वर्ष बाद विश्वनाथ को एक लड़की हुई। माता-पिता लड़की का बड़ा लाड प्यार करने लगे, पर खाली लाड-प्यार से क्या होता है। इतने दिनों के बाद एक लड़की हुई। उसे गहने, कपड़े, पहनाने की लालसा, पैसा न होने से मनही में रह जाती थी।

किसी तरह विश्वनाथ ने बड़ी मुश्किल से दो सोने के कड़े कर्ज लेकर बनवाये, कर्जा पटाना मुश्किल हो गया। आखार में एक बैल बेचकर कर्जा पटाया गया। विश्वनाथ के बड़े भाई रमानाथ को भी एक लड़की थी। विश्वनाथ की बड़ी लड़की वसन्ती अक्सर अपने ताऊ के यहां खेलने जाती थी। ताऊ का लड़की का नाम था तारा। वह बड़ी सुशील लड़की थी। मेले तमाशे कहीं से भी चार खिलौने लाती तो वसन्ती को उसमें से एक जरूर देती।

वसन्ती का जन्म होने के छः वर्ष बाद विश्वनाथ को एक और कन्या हुई। वसन्ती का रंग कुछ काला था। यह लड़की बड़ी सुन्दरी हुई। चम्पक वर्ण देख कर पिता-माता ने चम्पा नाम रखा। दारद्र दम्पती बड़ी चाह से कन्या को पालने लगे। इच्छा था कि कन्या को दो एक गहने बनवा दें। पर क्या करते लाचारी थी, पैसे के बिना यह क्योंकर हो सकता था। बेचारे चुपचाप कन्या को छाती से लगा कर घूमते और मन मसोस आँसू बहा कर रह जाते थे। किसी तरह से वसन्ती की मा दुःख को दुःख और सुख का सुख न समझ कर गृहस्थों चलाता हा थी। सूरज के पहले उठता, जूठे वर्तन मांजती, भाड़ बहारू देती। दोनों कन्याओं का खिला-पला कर पति के लिए रसाई चढ़ाता फिर स्वामी को भाजन करा कर आप तालाब पर जा कर स्नान करके पानी लाती और दो पहर के बाद भाजन कर के दोनों कन्याओं को लेकर जेठ बैसाख का दुपहरियां में हरे भरे पेड़ को छाया में कपड़ा बिछा कर तनिक विश्राम करती। शाम होने पर फिर रसाई और घर के काम-धन्धे में लग जाती और इससे निश्चिन्त हो कर तालाब में स्नान कर जल भर लाती। इसी तरह गृहस्था के धन्धे में बेचारा

का दिन बीतता जाता था । यद्यपि धन नहीं था सुवर्ण के आभूषण नहीं थे, चौमंजिला मकान नहीं था, पर इन लोगों का जीवन गरीबी में भी सुखपूर्वक बीत रहा था । पर विधाता से इस परिवार का यह सुख भी नहीं देखा गया । चंपा के जन्म के तीन वर्ष बाद सहसा विश्वनाथ की मृत्यु हो गई । बेचारी वसन्ती की मां के करम फूट गये । विधाता का हृदय विदारक रोना और विलाप सुन कर सारे ग्रामवासी व्याकुल हो गये । खेत में जाते हुए किसान भी विधवा की कुटीया के सामने एक क्षण खड़े हो कर दो बूंद आंसू बहा देते थे ।

विश्वनाथ को मरे एक वर्ष हो चुका है । अब रमानाथ अपनी जमीन के हा साथ विश्वनाथ की जमीन भी जुतवाते हैं । वर्ष के अन्त में हाथ उठा कर अनाथ विधवा को जो कुछ दे देते हैं वही उसे मिलता है । इससे उस बेचारी का मुश्किल से गुजारा होता है । दोनों लड़कियों को पालना पोसना, अपना पेट भरना, हर साल मोपड़ी पर नई छाजन डलवाना, कुटिया का बांस का घेरा हर साल मरम्मत करवाना यह सब उतनी थोड़ी-सी आय से होना कठिन हो गया, अन्त में लाचार हो कर विधवा ने अपनी मोपड़ी बेंच कर जेठ के घर आश्रय लिया । वहां उनके घर में टहलनियों की तरह काम करना पड़ता, अपनी लड़कियां चाहे पड़ी लुड़कें उनके घर के बच्चों को गोद में लादे रहना पड़ता, पानी भरना रसोई करना यह सब तो करना पड़ता ही था, इस के सिवा चुपचाप जेठानी जी का दम्भपूर्ण वाक्य-वाण भी सहना पड़ता था । बेचारी निराले में आहें भरती और आंसू बहा कर कहती कि “हे भगवान, बेटी वसन्ती, चम्पा बड़ी हों, तू इन्हें सुखी करना । एक दिन वसन्ती की माता ने स्नान कर अस्त होते हुए सूर्य को

प्रणाम किया, और गगरी भर कर गीले ही वस्त्र से ऊपर चढ़ने लगी। चढ़ते चढ़ते उसने लड़की से कहा—बेटी बसन्ती, चम्पा को मेरी गोद में दे दे।

बसन्ती—ना माँ, मैं ही ले चलूँगी, देख यह सो गई है।

माता—देख बेटी, बड़ा अन्धेरा है मेरा आंचल पकड़कर धीरे धीरे चली आ। कहीं गिर न पड़ना कल रात तारा कहीं मेले से आती हुई रस्ते में गिर पड़ी थी आह! बेचारी का सिर इतना सा कट गया है।

बसन्ती—माँ, किस मेले में गई थी? कैसे अच्छे अच्छे खिलौने लाई थी एक काठ का घोड़ा लाई थी, एक मिट्टी का शेर लाई थी और माँ, एक कैसा तो कल लाई है वह घूमती है?

माता—अरे तू नहीं जानती वे लोग रथ-यात्रा के मेले में गई थीं। हर साल वहाँ बड़ा भारी मेला होता है। हजारों लोग जाते हैं। कितने तमाशे वाले जाते हैं, कितने खिलौने की दूकानें, हलवाईयों की दूकानें जाती हैं।

बसन्ती—माँ, क्या तू भी वहाँ गई थी?

माता—हाँ बेटी, एक बार जब छोटी थी तब बाबूजी के साथ गई थी। एक आम के पेड़ के नीचे डेरा डाला था, रसोई भी बनी थी।

बसन्ती—माँ आम के पेड़ के नीचे क्यों रसोई बनायी, क्या घर नहीं मिला?

माता—वहाँ हजारों आदमी जाते हैं सबको घर कहाँ मिलेगा, एक बड़ा भारी बर का पेड़ है उसी के नीचे ठाकुरजी का रथ खड़ा होता है।

बसन्ती—माँ मैं भी मेला देखने जाऊँगी, मेरी बड़ी इच्छा है।

माता—मेरे ऐसे नसीब कहाँ बेटी, कि तुझे लेकर जाऊँ। बहुत रुपया खर्च होता है।

बसन्ती—नहीं माँ, मैं अगले बरस जाऊँगी, तारा जो जातो है, क्या मैं नहीं जाऊँगी ?

माता—छिः बेटी, तू अब सयानी हुई, तुझे क्या ऐसी जिद अच्छी लगती है ? तेरी ताई बड़े घर की हैं, उसकी लड़की चाहे जहाँ जाए, तू गरीब की लड़की ठहरी, तुझे यह बात शोभा नहीं देती। आह ! यदि भगवान् ने तुम लोगों के भाग्य में सुख ही लिखा होता तो क्या रोटी-कपड़े के लिए तुम लोगों को दूसरे का मुँह ताकना पड़ता, फिर क्या मेरी सोने की पुतलियाँ फूल ऐसी वस्त्रियों को दूसरों के दरवाजे भटकना पड़ता। हा ! भगवान् जी, तेरी मरजी !

चारों तरफ अन्धेरा अच्छी तरह छा गया था। सिर पर काले काले बादल घिर आए, पेड़ों की सघन छाया से अन्धेरा और भी दूना हो चला। हवा रह-रह कर एकआध भोंका मार देती थी। बादलों के बीच कहीं कहीं एकआध तारा दिख जाता फिर छिप जाता, कहीं कहीं बिजली भी चमक जाती और बीच बीच में कहीं पेड़ों पर से चमगीदड़ या ऐसे ही कोई पत्ती बोल उठते थे। बसन्ती अपनी छोटी बाहन को गोद में लिये माँ का आँचल पकड़े धीरे धीरे उसी वन के बीच से चली जा रही थी। अन्धेरा था, नहीं तो बसन्ती देखती कि उमकी माँ की आँखों से टपाटप आँसू की धँदे गिर रही हैं।



कुन्दनपुर में एक छोटी सी साफ-सुथरा भोपड़ा दिखाई दे रही है। दोपहर का समय है चारों तरफ खेत में सूर्य की प्रचण्ड धूप फैल रही है। किसान सबेरे का काम समाप्त करके कन्धे पर हल लिये हाथ में बैल की डोरी थामे अपनी कुटिया की तरफ चले आ रहे हैं या कहीं पेड़ों की छाया में बैठे हुए हैं। घर से उनकी माता, बाहन या स्त्रा थाल में भात लिए आ रही हैं। वहीं दही या मट्ठे के साथ परम तृप्त हाकर भोजन कर रहे हैं, कहीं किसी आम की बारी में, जहाँ कई बाघ तक कतार के कतार आम के पेड़ लगे हुए हैं सूरज का किरणें पत्तों को छेदकर कहीं कहीं धरती पर पड़ रही हैं, दो चार किसान खा-पी कर मैला अंगोछा बिछाए लेटे हैं या बैठकर हुक्का तम्बाकू पी रहे हैं। भिल्लों की लगातार झनकार के सिवा इस समय कहीं किसी पेड़ पर से भी किसी पक्षी का आवाज नहीं सुनाई देती। चारों तरफ एक अप्रति शांतिदायक सन्नाटा छाया हुआ है।

एक तरफ एक छोटी सी कुटिया दिखाई दे रही है। इसके चारों तरफ बांस की भाड़ियाँ हैं और आम कटहल के कई पेड़ हैं जिन का छाया से कुटिया के आंगन में धूप बिलकुल नहीं पड़ने पाती। इसी के पास नारियल के भी चार पाँच पेड़ हैं। जिनमें चार पाँच डाय लगे हुए हैं। कुटिया के पीछे एक सहन है, उस पर पेड़ों की छाया पड़ रही है। एक तरफ एक साफ सुथरा लिपा पोता लंबासा दालान है जिसकी

फूस की छाजन पर लौवे, कोहँड़े की बेलें चढ़ी हुई हैं। इसी दालान के सामने एक और कोठरी है जिसमें रसोई होती है और इसके पिछवाड़े बाँस की बखारियों से घिरी हुई एक और भोपड़ी है जिसमें एक मात्र गाय बँधी हुई है।

घर वाले सब खा-पाकर निश्चिन्त हो चुके हैं। चून्हे का आग बुझ चुकी है। बाँस के घेरे पर दो एक धोतियाँ सूख रही हैं और कुटिया के लम्बे दालान में एक चौका और दो एक चरखे पड़े हुए हैं। भोपड़ी के पिछवाड़े एक छोटी सी कच्चा पाखरी है जिस में थोड़ा सा धरसार्ता पानी है और चारों तरफ तरह तरह के घास फूस उगे हुए हैं। पोखरी में चार पाँच पत्तल के बरतन पड़े हुए हैं। अभी माँजे नहीं गये हैं। घर के हाते के चारों तरफ पेड़ और जंगल हैं जिससे इस दुपहरिया का कड़ा घूप में भी घर छाया से भरा हुआ और शीतल है। इसी लम्बे दालान में जहाँ दिन के समय भी थोड़ा थोड़ा अन्धेरा है, घर की स्वामिना टहल रही है इस को एक तीन वर्ष की कन्या जमीन में चटाई पर सो रही है और एक छः महीने के लड़के को माता गोद में लिए टहल रहा है। वह मुलाने के लिए लड़के को थपथपा रहा है और बीच बीच में धीरे धीरे कुछ गुन गुनानी हुई गाती हुई टहल भी रही है।

इस स्त्री की उम्र आठारह वर्ष का होगी। उज्ज्वल श्याम वर्ण, दुबला पतला मुडोल वदन, बड़ी बड़ी काली धीरे शान्त आंखें हैं। आठारह वर्ष की युवतियों की जैसा सुन्दरता, जा छवि हम उपन्यासों में पढ़ते हैं वह सब इस स्त्री में कुछ भी नहीं है। युवावस्था का सर्वांगपूर्ण मौन्दर्य हमी से दमकता हुआ चेहरा, प्रसन्न ललाट, आंखों की चंचलता, हरेक चाल

पर अदा अपूर्व लावण्य इस रमणी में बिलकुल ही नहीं दिखाई पड़ती ।

थोड़ी देर में माँ की गोद में बच्चा सो गया । माता ने सावधानी से बच्चे को चटाई पर सुला दिया और आप पास बैठकर कुछ देर तक पंखा झलने लगी ।

शान्त मलीन चेहरे पर घर की धीमी रोशनी पड़ रही है । काली काली बड़ा बड़ी आंखों से माता सोते हुए बच्चे की तरफ एक टक निहार रही है, जिससे माता की स्नेह-चिन्ता, धीरता और सहनशीलता टपक रही है । इस निराले घर में बंठी हुई इस स्त्री के हृदय में न जाने कितनी तरह की चिन्ताएं लहर मार रही हैं । गृह की चिन्ता, दुख सुखमय संसार की चिन्ता और कभी कभी अतीत काल की स्मृति की चिन्ता उम्र युवती के मन में एक के बाद एक आ-जा रही हैं ।

बच्चा अच्छी तरह सो गया, तब माता ने भी हाथ से पंखा छोड़ दिया और सिरहाने बांध रख, वहीं जमीन पर बच्चे के पास लेट गई । धीरे धीरे दोनों पलकें बन्द हो आईं और थोड़ी देर में युवती सो गई । दुपहरिया का गर्मी में सारी दुनिया चुप है, इस कुटिया में भी कोई शब्द नहीं है । चारों तरफ के सन्नाटे में स्नेहमयी माता दोनों बच्चों के पास सो रही है । घर-गृहस्थी की सारी चिन्ता कुछ देर के लिये इसके हृदय से बिदा हुई और उस शान्त चिन्ताशील ललाट से चिन्ता की कई रेखाएँ मिट गयीं ।

स्त्री प्रायः घण्टे भर सोई होगी, फिर किसी शब्द से उसका आँखें खुल गईं तो उसने देखा कि बगल ही में एक हँसमुखी सुन्दरा बालिका एक बिल्ला के बच्चे से खेल रहा

है। बच्चा उछल उछल कर उसके हाथ का खिलौना लिया चाहता है और लड़की हाथ से बार बार हटा लेती है। काली काली चमकीली आंखें कभी इधर कभी उधर तेजी से घूम जाती हैं। होठों से लाली चू पड़ती है गोल गोल सुडौल बाहें कभी उठती कभी गिरती हुई अपूर्व शोभा दे रही हैं। इस लड़की की उम्र करीब तेरह वर्ष की होगी पर चेहरे का भोलापन, हँसती हुई आंखें, चिन्ता शून्य उद्वेग रहित मन, अभी बालिका ही का है, युवती का नहीं।

नांद से जागकर यह स्त्री बहुत देर तक स्नेह-भरी दृष्टि से इस सुन्दरी बालिका की तरफ देखती रही। फिर धीरे से पूछा—चम्पा, तुम कब आई ?

चम्पा—जीजी, मैं तो बहुत देर से आई हूँ, तुम सोती थीं इसी लिये जगाया नहो। और देखो यह बिल्ला का बच्चा जहां मैं जाती हूँ वहीं मेरे पीछे चला आता है मैं इसे चौके में बन्द कर आई थी पर यह मेरे साथ चला आया।

बसन्ती—अच्छा, इतनी देर से आई हो, जरा सो रहो न कल रात को तुम्हें अच्छी तरह नींद नहीं आई अब जरा सा सो जा।

चम्पा—नहीं जीजी, दोपहर को मुझे नींद नहीं आती। रात को तो खूब नींद आई थी। खाली एक दफे जब बच्चा रोने लगा था तब नींद खुली थी। आज बच्चा कैसा है ?

बसन्ती—अब तो अच्छा है, रात होते ही शरीर गरम हो जाता है। वह आज आरा से एक दवाई लाने के लिये कह गये हैं, उससे नांद भी आवेगी और बुखार भी नहीं आवेगा।

चम्पा—बैजनाथ कब आवेंगे ?

बसन्ती—कह तो गये हैं, कि सन्ध्या को आवेंगे, क्यों ?

चम्पा—आज उन्हें आने तो दो एक तमाशा करूँगी, तुम्हें अभी नहीं बतलाती, उन्हें आ जाने दो, फिर आप ही देखोगी ।

बसन्ती—क्या करेगी बतला न ?

चम्पा—नहीं, तुम कह दोगी ।

बसन्ती—नहीं कहूँगी ।

चम्पा—सचमुच नहीं कहोगी ?

बसन्ती—सचमुच नहीं कहूँगी ।

इस पर चम्पा ने अपने आंचल से खोल कर एक चीज निकाली । यह वस्तु अन्दाज से एक हाथ लम्बी था ।

बसन्ती—अरे ! यह क्या है, ?

चम्पा—कभी देखा नहीं था ?

बसन्ती—हाँ देख चुकी हूँ, यह क्या पाट है ?

चम्पा—हाँ पाट है, देखो कैसा कुसुम के फूल में रंगा है ।

बसन्ती—इससे क्या होगा ?

चम्पा—अच्छा बतलाओ तो क्या होगा ?

बसन्ती—क्या जाने ?

चम्पा—इतना भी नहीं अटकल लगा सकी । आज जब रात को जीजा जी सो जायेंगे, तो यह उनकी दाढ़ी में बांध दूँगी, फिर जब उठेंगे जटाधारी साधू कहके उन्हें चिढ़ाऊँगी । बड़ा तमाशा होगा । यह कह कर बालिका ताली बजाकर हँस पड़ी ।

बसन्ती भी हँस पड़ी, फिर स्नेह पूर्ण दृष्टि से अपनी बहिन की ओर निहारने और मनही मन कहने लगी ।

चम्पा, पेरी अमृत भरी हँसी से संसार में अमृत बरसाता है । आहा ! बेचारी बच्ची को अपने फूटे करम का हाल अभी कुछ मालूम नहीं है । जानती हुई भी अनजान है । हे ! निर्दय, विधाता इस नन्हीं सी बच्ची के करम में तुमने इतना भारी

दुख लिखा—क्यों कर इस अमृतकी कटोरी में जहर मिलाया ?

प्रथम अध्याय में हमने जो कुछ कहा दूसरे अध्याय में उसके नौ वर्ष बाद की बात हो रही है हमारी कहानी यहीं से शुरू है। इस नौ वर्ष के बीच की घटनाएँ कुछ कुछ तो ऊपर ही जाहिर हो चुका हैं, बाकी के लिए और कुछ थोड़ा सा कह देना भी अनुचित न होना। बसन्तो का माता अपने जेठ के यहाँ रह कर बड़े दुख से दोनों लड़कियों को पालती पोसती रही। पाँते की मृत्यु के बाद उस ने सब तरह के सुख की आशा को तिलांजलि दे दी था। पर मनमें यह इच्छा सदा बनी रहती थी कि मरने के पहले दोनों कन्याओं का ब्याह करती जाऊँ। जिस समय दोनों लड़कियों के साथ बसन्ती की माँ ने अपने जेठ के यहाँ आश्रय लिया उस समय बसन्ती की उम्र नौ वर्ष की हो चुकी थी, अतएव बसन्ती की माँ वर की खोज करने लगी। पर गराब की लड़की का ब्याह जल्दी नहीं होता। सब ही लड़के वाले चाहते हैं कि लड़के का ब्याह बड़े आदमी के घर हो जिससे पोटली भर रुपया गहना मिले। इसलिए जा विधवा विचारी अपने जेठ के घर दुकड़े तोड़ती हुई अनाथ बालिकाओं का पालन कर रही हैं, उसकी लड़का से भला कौन कुलीन अपने लड़के का ब्याह करता। सगे सम्बन्धियों ने भी इस बारे में कुछ ध्यान नहीं दिया। लड़की का रंग भी गोरा नहीं था, पर चेहरे पर सलोनापन था। आंखें दोनों बड़ी बड़ी और सुन्दर थीं और शरीर का गठन भी सुडौल था, पर लड़की दुबली पतली थी।

बसन्ती की माँ से एक दिन शाम को उसकी जेठानी ने कहा—मैं अपनी तारा को ऐसे घर दूँगी कि लोग भी कहेंगे कि

हाँ, ऐसे घर में लड़की देनी होती है। मेरी तारा का रंग गोरा है, और तुम्हारी लड़की जरा काली है, और बहिन, तुम्हारे पास कुछ ऐसा रुपया पैसा भी तो नहीं है। मेरा देवर जरा चालाक नहीं था, कुछ जमा पूँजी नहीं छोड़ गया, इसी-लिये जो कुछ कह लो, पर क्या हुआ, तुम कुछ चिन्ता मत करो बहिन, जब मैंने इस काम में हाथ डाला है तो बसन्ती के ब्याह के लिए निश्चिन्त रहो।

जेठानी जी की बातें सुन कर, उनकी भूषण-विभूषित बाहुओं का लगातार हिलना देखकर बसन्ती की मां को कुछ ढाढ़स हुआ, पर ताई जी की बांह हिलाने से बसन्ती का कुछ भला न हुआ। बसन्ती का ब्याह नहीं हुआ। दसहरे की छुट्टी में रामनाथ घर आये। अपनी स्त्री के लिये नये नये फैशन के कपड़े-गहने, न जाने कितनी चीजें लाये। घर के लड़कों के लिए कितनी तरह की टोपियाँ, रेशमी कोट खिलौने ले आये। तारा के लिये बनारसी साड़ी, जूड़े में लगाने का नकली फूल और कितनी तरह की चीजें आईं। सारे गांव में धूम मच गई। कितने ही लोग मुलाकात करने आये, कितनी ही खुशामदी टट्टू आ-आ कर लम्बी लम्बी तारीफें करने लगे। किसी को दसहरे के त्योहार में दस-पाँच रुपया कर्ज चाहिये, किसी पर कुछ आफत आई है, अमीन साहब से सलाह पृछने आये हैं, कोई अपने लड़के की नौकरी लगवाने के लिए अमीन साहब को हाथ जोड़ रहे हैं, और कोई ऐसे हैं कि उन्हें इस समय कुछ चाहिये तो नहीं, केवल बड़े आदमियों की खुशामद के आदी हैं। इस धूम-धाम के बीच में बेचारे बसन्ती की बात भला कौन सुने और कौन कहे। पन्द्रह दिन की छुट्टी बीत गई। अमीन साहब बांकीपुर चले गये। बसन्ती के ब्याह की कुछ

भी बात न होने पाई। जब अड़ोस-पड़ोस की किसी स्त्री से बसन्ती की मां मिलने जाती तो अपनी बेटी के व्याह के लिये कितनी ही वृद्धियों के हाथ पांव जोड़ती। वे सब भी बड़े चाव से जवाब देतीं। एक दिन किसी वृद्धिया ने सान्त्वना देकर कहा—क्यों नहीं क्यों नहीं, तुम्हारी लड़की का व्याह भला नहीं करावेंगी तो और किसका करावेंगी ? पर बहिन जानती तो हो, लड़की का व्याह कुछ मुँह का खेल तो है नहीं है और तुम कुछ ऐसा वैसा दहेज भी तो नहीं दे सकोगी। बसन्ती का बाप ता कुछ छोड़ नहीं गया, वह तुम्हारे जेठ ऐसा होता और उसके ऐसा दो पैसा कमाना जानता ता फिर क्या चिन्ता थी। मैं तो उसी समय कहती थी, पर मेरी सुने कोन, अब मालूम पड़ रहा है न। भाई गरीब का बाते बासी होने ही से अच्छी लगता है। तो भा क्या हुआ बहिन, व्याह तो करा ही दूँगी तुम्हारी लड़की का व्याह करा दूँगी यह भला कौन सी बड़ी बात है। दूसरी वृद्धा ने एक दिन कहा—इसकी क्या चिन्ता है। पर, एक बात यह है कि बसन्ती जरा देखने सुनने में अच्छी होती तो यह काम जल्दी हो जाता। पर क्या हुआ लड़की के मुँह पर पानी है। पानी है, पर हां, रंग जरा कुछ काला है और आखें जरा निकली हुई हैं और सिर के बाल भी कुछ छोटे हैं। नहीं तो, और बातों में लड़की बुरी नहीं है। मुँह पर सलोनापन है, किन्तु जरा दुबली पतली है, सारी हड्डियाँ दिखाई देती हैं, हाथ-पैर जरा लम्बे लम्बे हैं और अभी ही से कुछ लम्बी हो गयी है। पर बहिन, तुम कुछ चिन्ता मत करो काली लड़की का क्या व्याह नहीं होता है ? क्या व्याह रुका रहेगा। कुछ भी नहीं अटका रहेगा, बहिन, कुछ नहीं अटका रहेगा, जब हम लोग हैं तो कुछ नहीं रुका रहेगा।

इसी तरह गांव की बुढ़ियों की पेट भर मनसमझौती बातें और साथ ही अपनी निन्दा अपने पति और बसन्ती की पेट भर निन्दा सुन-सुन कर बसन्ती की मां घर फिर आती। गांव में दो एक पुराने बूढ़े लोग भी थे। इन्होंने बहुत जमाना देखा था, वे सभी ग्रामों में आया जाया करते थे, बहुतों से जान पहचान थी कई लड़कियों का व्याह भी करा दिया था। बसन्ती की मां ने कई रोज तक इन महात्माओं के घर भी दौड़-धूप की। कभी उनके घर के लड़कों के लिये दो चार पैसे का बताशा ले जाती या कभी मिश्रों के कूजे या कुछ मिठाई के दोने ले जाती, घर की माल-किनों के हाथ-पैर जोड़ती, खुशामद करती।

अन्त में बसन्ती की मां ने धूँघट काढ़ कर इन महात्माओं को रास्ते-चौराहे में, तालाब के किनारे घेरना और हाथ जोड़ना, खुशामद करना शुरू किया। वे लोग कहते—ओहो, यह बात हमसे तुमने इतने दिन कही नहीं? यह सब काम क्या बिना हम लोगों से कहे होता है। देखो न, वही उस मुहल्ले के शुक्ल जी के घराने की लड़की के व्याह के लिये, उन लोगों ने कितनी दौड़ धूप की, अन्त को जब बड़ी बहू जी ने हमें बुला कर कहा। बस् तुरन्त ही काम हो गया। कैसा व्याह करवा दिया है। पाण्डे जी कुलीन वंश के हैं। रोटी कपड़े की कोई कमी नहीं, रुपये की कमी नहीं, मानो कुवेर का भण्डार है; ऐसे घराने के लड़के से शुक्ल जी की लड़की का व्याह कर दिया। लड़के का दूसरा व्याह है। जरा दुबला-पतला है और जरा बड़ा भी है। पर क्या हुआ अभी चार्लिस बयालिस वर्ष से ज्यादा उम्र नहीं है और कार्मिनी आठ वर्ष ही की है। वह भी जल्दी बड़ी हो जायगी, कलियुग की लड़कियों को बड़ी होते क्या देर होती है? इस व्याह की सभा बड़ाई कर

रहे हैं। लड़का वांकीपुर में रहता है, बड़ा आलिम-फाजिल नहीं है तो क्या हुआ, इज्जत है, नाम है। साहबों को दावत देता है, हरदम दस बीस लोग घेरे ही रहते हैं, गाड़ी-घोड़ा साज-सामान ठाट-बाट देख कर लोग कहते हैं कि हां क्यों नहीं, बड़ा आदमी तो है। पर, बिना हम लोगों के हाथ डाले क्या ऐसा सम्बन्ध होता है। तुम अब तक कहां दौड़ धूप कर रही थी ? हम लोगों से पूछा तक नहीं ? आज कल का जो जमाना हुआ है, सब अपने आप मनमानी करते हैं, इससे क्या काम चलता है। तो भी आज हमारी याद आयी यही गुनीमत है। आंखों में आंसू भर कर बेचारी बसन्ती की माँ ने अपना अपराध माना और मनही सोचने लगी कि ऐसे लोगों के पास पहले ही से न आकर मैंने बड़ी मूर्खता की।

विधवा बेचारी के आंसू और हाथ पैर जोड़ने से गांव के चौधरी जी ने एक दिन खुश होकर कहा—क्या हुआ कुछ चिन्ता मत करो। देखो न, मैं दो ही चार दिनों में सब ठीक ठाक किये देता हूँ। बसन्ती की माँ बेचारी को मोनों आकाश का चन्द्रमा हाथ लगा। खाना, पीना, सोना छोड़ कर चौधरी जी की आशा किए बैठी रही, पर दो चार दिन गये, दो चार महीने भी बीत गये बसन्ती का व्याह ठीक नहीं हुआ। गरीब की लड़की को किसी ने नहीं अपनाया। बसन्ती की माँ ने भी देखा कि कुन्दनपुर के लोग बड़े महात्मा हैं। दूसरे के यहां आज क्या रसोई हुई है, निःस्वार्थ भाव से इसकी भी खबर रखते हैं। दूसरों की बहू बेटियां क्या कर रही हैं, इसका वैज्ञानिक पता रखते हैं, और घर-घर गांव-गांव इस वैज्ञानिक खबर को फैलाने की निःस्वार्थ चेष्टा करते हैं। यदि किसी पर

कोई आफत आ पड़े या कोई काम अटक जाय तो आगे की किसी गलती के लिए उसे दो खरी-चोखी सुनाने, बड़प्पन दिखाने, कोरा दिलासा देने में बड़े जबर हैं। बातों की कमी कभी नहीं करेंगे काम के समय कुछ सहायता करना, यह तो बात ही और हुई। बसन्ती की माँ को इस भार से किसी ने भी छुटकारा नहीं दिलाया, उसकी खुशामद से किसी ने एक कौड़ी भी नहीं दी, उसकी भलाई के लिए किसी ने बाँप पैर की कानी अंगुली तक नहीं हिलाई। बसन्ती की माता यदि कभी कुन्दनपुर के बाहर गई होती तो उसने देखा होता कि केवल इसी गाँव में नहीं वरन् संसार में सर्वत्र समभाव से ये सारे सद्गुण विराजमान हैं। पर यह विधवा बेचारी सीधी-सादी थी। उसने एक दफे भी नहीं सोचा कि इतना दम दिलासा, सद्-पदेश के बदले यदि कोई उसका यह भार हलका कर देता तो नैतिक उन्नति न मही, उसे कुछ सांसारिक सुख तो हुआ होता।

कुन्दनपुर में विश्वनाथ के एक परम मित्र थे। उनको बैजनाथ नाम का केवल एक ही पुत्र था। यद्यपि पिता गरीब था। पर उसने लड़के को पढ़ाने-लिखाने में कुछ कसर नहीं रखी और लड़का मेहनती था, बाँकोपुर के हाईस्कूल से एन्ट्रेस पास कर बैजनाथ कलकत्ते में एफ० ए० पढ़ने गया पर एफ० ए० क्लास में भर्ती होने के कई महीने बाद उसके पिता की मृत्यु हो गई, इसलिए विवश हो बैजनाथ को गाँव लौट आना पड़ा और लिखाई-पढ़ाई भी बन्द हो गई। घर आकर बैजनाथ अपने पिता की मामूली जायदाद से गुजारा करने लगा।

बैजनाथ बसन्ती और बसन्ती की माँ को बचपन से जानता था। बैजनाथ नाम होने के कारण, या कुछ दिनों तक युनिवर्सिटी की विद्या या कलकत्ते की हवा लगने के कारण न

जाने किस कारण से उसने अपने पिता के परम मित्र विश्वनाथ की कन्या से विवाह करना चाहा। बैजनाथ के, इसका चर्चा छेड़ते ही सारा गांव चौक उठा, सब ने उसको इस मूर्खता से रोकना चाहा। उसके पिता के पुराने मित्र सब आ-आकर कहने लगे—‘क्यों जी, तुम क्या दरिद्र की लड़की ब्याह कर बाप का नाम डुबाने बैठ हो’। परन्तु लड़का कुछ गवार था, उसने इन बातों का कुछ खयाल नहीं किया। बसन्ती की माँ से मिला और छिप कर दो एक दफे बसन्ती का सूखा हुआ मलान मुख भी देखा और लड़की की ताई को राजी करा कर विवाह ठोक-ठाक करा लिया। बसन्ती की ताईजी खोटी नहीं थीं, मन की सीधी-सादी थीं, उन्हें किसी से लड़ाई-भगड़ा करना या किसी को गाली-गलोज देने को आदत नहीं थी। पर बड़े आदमी की लड़की ठहरों, उस पर पति दो पैसा कमाने वाला ठहरा, इसलिए यदि इनके मिजाज में कुछ जरा सा बड़े आदमीयत की बू हो या किसी अमीर से सम्बन्ध करने की इच्छा हो, या गरीबों से हमदर्दी कुछ कम हो तो हमें नाक-भों सिकोड़ना न चाहिये। हम में से कितने ऐसे हैं, जिनमें यह सब बातें नहीं हैं। इसलिए किसी के दोष देख कर हमें निन्दक होना उचित नहीं।

बसन्ती की सीधी-सादी ताईजी ने भतीजी के ब्याह के लिए कुछ ऐसा यत्न नहीं किया। किसी के लिए अधिक सिर खपाने की उनकी आदत नहीं थी, पर बसन्ती का विवाह ठोक हो जानेसे सब कुछ खुश हुई। अच्छा महूर्त, अच्छी घड़ी देख कर उन्होंने बसन्ती का बैजनाथ से विवाह कर दिया।

जब अड़ोस-पड़ोस की औरतें उनसे मिलने आतीं तो रमानाथ की गृहिणी जी भुजाओं को हिला हिला और चमका

चमका कर कहती—अहा, मुझे तो जैसी तारा वैसी बसन्ती, मैं व्याह न कराऊँ तो भला कौन कराता। बसन्ती की माँ बेचारी की तो यह दशा है, बाप भी दो पैसा छोड़ नहीं गया। मैं न करूँ तो कौन करे। इत्यादि इत्यादि।

पड़ोसनी भी कहती,—हां जी क्यों नहीं, तुम्हीं हो जो इतना सब करती हो, नहीं तो आज कल कौन किसक इतना करता है। उस समय चम्पा की उम्र पांच छः वर्ष की थी, पर माँ की बड़ी इच्छा थी कि चम्पा काभी व्याह करती जाऊँ। बैजनाथ ने मना किया, रोका, यह भी कहा कि मैं इसे घर रख कर बहुत पढ़ाऊंगा फिर जब दस बारह वर्ष की होगी तो व्याह कर दूंगा। पर चम्पा की माँ ने एक न मानी, यही कहती रहा कि मैं चम्पा को बिना व्याहे मरी तो मन की एक चाह रह जायागी। अस्तु, बैजनाथ बेचार क्या करते, लाचार होकर मामूली हालत के एक पढ़े-लिखे लड़के से चम्पा की शादी उन्होंने करा दी।

पति की मृत्यु के इतने दिनों के बाद बसन्ता की माँ के हाड़ में हवा लगी। मन में जरा आनन्द हुआ। दोनों व्यही कन्याओं को गाढ़ में बैठा कर उन्हें अपने का भाग्यवती माना, पर रहती वही जेठ के ही घर थीं।

चम्पा के विवाह के कई महीने बाद उनका परलोकवास हो गया। हमें और एक बात कहनी है। पांच वर्ष का उम्र में चम्पा का व्याह हुआ और सातवें ही वर्ष में वह विधवा हो गई। किसे स्त्री कहते हैं, व्याह क्या होता है और विधवा क्या बला है, कोमल बालिका चम्पा बेचारी को इन बातों का कुछ भी बोध नहीं था। बड़ी बहिन के घर आकर सात वर्ष की सरल बालिका ने घूँघट उतार कर दूर फेंका और खिलौवा लेकर खेलने लगी।

रात के दस बज चुके हैं। चन्द्रमा की ठंडी चांदनी सारे कुन्दनपुर और खेतों में छाई हुई विचित्र छटा दिखा रही है। तालों की छोटी छोटी तरंगे मानो चांदी की लहरें मार रही हैं। नारियल, सुगाड़ी, ताड़, के लंबे लंबे पेड़ रात्रि की निस्तब्ध चांदनी में सिर ऊंचा किए मानो चित्र लिखे से खड़े हैं। आम-कटहल के पेड़ों से छन छन कर कहीं कहीं चांदनी पड़ रही है। किमान की कुटिया पर आंगन में मानो चाँदनी का जाल बिछा हुआ है। सारे गांव पर शीतल श्वेत चांदनी मानो जूही पुष्प की भाँति खिल रही है। घर वालों का खाना पीना हो चुका है। सब लोग क्वाड़ चढ़ा कर निद्रा देवी की आराधना में समाधिस्थ हो गए हैं। कहीं कहीं दो एक खुर्राट बूढ़े अब भी बाहर चबूतरे पर बैठे हुक्का पी रहे हैं और खोंख रहे हैं और कहीं किसी झं पड़ी के पीछे की पोखरी में किसी के घर की बहू-बेटी वासन मांज रही हैं। गृहस्थी का धन्धा अब भी पूरा नहीं हुआ है। चाँद की ठंडी चांदनी में रात की ठंडी हवा धीरे धीरे चल रही है और कहीं से किसी मनचले किसान के गँवई गीत की आवाज हवा के साथ साथ कभी कभी सुनाई दे जाती है।

बसन्ती के घर का सब काम हो चुका है, पर अभी पति नहीं आए हैं इस लिए उन्होंने के आमरे बाहर आंगन में बैठी हुई है। चन्द्रमा की निर्मल चांदनी उसके सादे कपड़े और शान्त नयनों पर पड़ रही है। चम्पा आज सोने नहीं जाना

चाहती। वैजनाथ को साधू बना कर तमाशा करेगी, इसी धुन में है, पर आंगन में बहिन के बगल में जरा सा लेटते ही सो गई। आंचल का रंगा हुआ पाट आंचल ही में पड़ा रहा। नींद में उसके दोनों लाज लाल हाँठ हँसी से खिले हुए हैं मानो बालिका शीतल चांदनी रात में कोई सुख या खेल का सपना देख रही है।

थोड़ी देर में बाहर किवाड़ खटखटाने की आवाज आई। बसन्ती तो यह आसरा देख ही रही थी, उसने तुरन्त जाकर किवाड़ खोले। वैजनाथ घर में आए।

वैजनाथ की उम्र करीब पच्चीस वर्ष की होगी। कद लंबा और शरीर पुष्ट है, नाक बड़ी और भाल चौड़ा है। वर्ण श्याम है, पर आंखें दोनों कमलवत् तेजपूर्ण हैं। बहुत दूर से पैदल चले आ रहे हैं, इस लिए मुँह कुछ सूख गया है शरीर पर धूल उड़ उड़ कर पड़ी है और पैर दोनों धूल मिट्टी से भरे हुए हैं। बसन्ती ने पति के आते ही आंगन में एक चौकी बिछा दी और पैर धोने के लिए एक लोटा पानी और अंगौछा भी ला रखा। वैजनाथ ने मुँह हाथ धोकर गमछे से हाथ पैर पोंछा, इतने ही में बसन्ती ने स्वामी से पूछा—तुम्हें आज बड़ी देर हुई क्यों ? अभी तक तुमने कुछ खाया पिया नहीं ?

वैजनाथ—मैं तो सांझ को ही आता, पर क्या करें आरा में एक मुलाकाती आदमी मिल गए, शाम को अपने डेरे पर ले गए, और कह सुन कर कुछ जलपान भी करा दिया, इसीलिए इतनी देर हुई। तुम लोग तो खा पी चुकी हो न ?

बसन्ती—चम्पा खा कर सोई है और मैं खाने जा रही हूँ। तुम तो बस वही शाम के जलपान किए हुए हो और तो कुछ खाये नहीं हो, अच्छा तो परौंठा तरकारी ले आऊँ।

बैजनाथ—कुछ ऐसी भूख तो नहीं है, पर अच्छा दो एक परौंठा पिरौंठा ले आओ, रात बहुत हो गई, अब देर मत करो ।

बसन्ती ने वहीं आंगन में पानी छिड़क कर पीड़ा बिछा दिया और छीके पर से कटोरा उतार कर तीन चार परौंठे, रसे की तरकारी और दो तीन नीबू तराश कर पति के सामने ला रखा । आज नारियल के पेड़ से दो कच्चे नारियल भी बसन्ती ने तुड़वा रखे थे । उसका भी मुँह काट कर पत्ताल के सामने रख दिया । घर में एक गाय थी । उस का दूध औँट कर एक कटोरे में भर कर बगल में रख दिया और आप पास बैठ कर पढ़ा भलने लगी ।

बैजनाथ—बच्चे के लिए एक दवा लाया हूँ, अभी मत पिलाना, रात को अगर उठे या रोवे तो पिला देना और जिस काम के लिए गया था, वह तो कुछ हुआ ही नहीं ।

बसन्ती—क्या हुआ ?

बैजनाथ—आरा में एक वकील मेरे मित्र हैं, उनसे मैंने तुम्हारे बाबू जी की जमीन आदि की सब बातें समझा कर कहीं ।

बसन्ती—उन्होंने क्या कहा ?

बैजनाथ—उन्होंने कहा कि मुकदमा लड़ना पड़ेगा ।

बसन्ती—अरे राम ! क्या उनसे मुकदमा लड़ोगे ? लड़-कपन से उन्होंने पाला-पोसा, विवाह करवा दिया, ताई जी अब भी कुछ न कुछ चीजें भेजती ही रहती हैं, उनसे क्या मुकदमा लड़ना चाहिये ।

बैजनाथ—हम लोगों के ब्याह के लिये तो तुम्हारे ताऊ जी का हम पर कुछ ऐसा दहसान नहीं है । तुम उस

समय लड़की थीं, सब बातें जानती नहीं हो, खैर और अब जानने की भी कुछ ऐसी जरूरत नहीं है, पर हाँ वह तुम्हारे ताऊ लगते हैं इस लिए उनसे झगड़ने की मेरी इच्छा भी नहीं है, पर क्या करूँ ।

वसन्ती—नहीं नहीं ! यह काम अच्छा नहीं, और देखो हम लोग गरीब आदमी ठहरे, हम क्या मुकदमा लड़ सकेंगे । अगर गरीबों की तरह शाम सबेरे दो रोटी मिल जाय, नारायण जो की मरजी से दोनों बच्चे पल जायँ तो मुझे यही सय कुछ है । तुम्हारी जो कुछ थोड़ी बहुत जमीन है हमें वही पारस है तुम्हारी यह पुश्तैना भांपड़ो ही मुझे चौखंडा महल है ।

बैजनाथ—मैंने जब तुम्हें व्याहा था तो मैं यह नहीं जानता था कि इस तरह गरीबों से गुजारा करना पड़ेगा । तुम बड़ी धीरज वाली पतिव्रता हो । इस लिए सब कुछ सह कर भी मुंह खोल कर दो बात नहीं कहती, यह तुम्हारी ही तारीफ है पर मुझसे तो नहीं देखा जाता ।

वसन्ती की आंखों में आँसू आ गये और मनही मन वह कहने लगी—हे नाथ रास्ते की फकीरता को गोद में उठा कर राज पर बिठा दिया, यह क्या भूल गये ? प्रकट में कुछ मुसकरा कर बोली—क्यों ऐसा घर और ऐसे आदमी और जहाँ राजाओं तक के चखने लायक चीजें मिलती हों वहाँ मुझे कमी किस बात की है । राजाओं के चखने लायक एक चीज देखोगे ?

बैजनाथ ने जरासा मुसकुरा कहा—कहाँ है देखूँ ?

वसन्ती उठ कर चौके में गई । उसी दिन पेड़ से छोटे छोटे आम के टिकोरे तोड़ कर उनकी चटनी कर रखी थी । वही

पति के सामने ला कर उसने रख दिया और बोली—जरा खा कर देखो तो सही ?

वैजनाथ ने हँसते हँसते चटनी चाटना शुरू किया और कहा—हां. हां यह राजाओं ही के चखने लायक चीज बनो है. पर यह मेरे राज्य का प्रताप नहीं है, रानी ही जी के हाथ की करतूत है ।

थोड़ी देर बाद फिर बोले—मैं सच कहता हूँ ताऊ जी के साथ मुकदमा लड़ने की मेरी भी इच्छा नहीं है, पर वह तुम्हारे बाप की जायदाद हजम कर जायें ! और तुम्हें गरीब समझ कर दुतकार देंगे मुझसे तो यह कभी भी नहीं सहा जायगा ।

बसन्ती—अच्छा तो फिर एक काम करो । वह जो फटोरे में दूध रक्खा है उसे उठा कर पी तो जाओ । फिर खूब बलिष्ठ होकर ताऊ जी से कमर बांध कर लड़ना ।

वैजनाथ जी ने अन्त में इस लड़ाई की तैयारी करते हुए मन ही मन न जाने दूध की या मालकिन जी के हाथ की करतूत को तारीफ की । बसन्तीजी बोलीं—अच्छा ताऊजी के साथ यह मामला मिटा लिया जाय तो कैसा, गांव में भी दस-पांच भले आदमी रहते हैं ।

वैजनाथ—उसकी कोशिश भी कर चुका हूँ । तुम्हारे ताऊ जी कहते हैं कि जमीन में मेरा ही हक है, मैं आज दस वर्ष से मालगुजारी देता हूँ कितने रुपये लगा कर जमीन को आबाद किया है और जमींदार के सिरिस्ते में मेरा नाम चढ़ा हुआ है, अब मैं यह जमीन हाथ से जाने देनेवाला नहीं हूँ । पर हाँ तुम्हें और चम्पा को कुछ नगद रुपया देने पर राजी हूँ. वह जमीन का

असली दाम क्या होगा, उसके आधे से भी कम हैं। हम लोग गरीब हैं, इसीलिए यह जुल्म कर रहे हैं।

बसन्ती—मैं औरत ठहरी। तुम जितना यह सब समझते हो, उतना मैं थोड़े ही समझ सकती हूँ, पर मेरी समझ में तो वह जो दें वही ले लेना चाहिए। वह हमारे बड़े हैं। किसी जमाने में मुझे पालते-पोसते भी रहे, इस लिए अगर कुछ कम दाम में ही उन्हें कोई चीज दे दी जाय तो क्या हुआ। और भी ता एक बात है। मुकदमा लड़ने में न जाने कितने रुपये हम लोगों के बिगड़ जायेंगे रुपये कहां से आवेंगे? उधार लेना पड़ेगा, फिर वह उधार चुकेगा किस तरह? मान लो कि अगर मुकदमा लड़ कर जमीन मिल भी गई तो वह उधार चुकाने ही में बिक जायगी और ताऊजी सदा के लिये शत्रु हो जायेंगे। और अगर मुकदमा हार गया तो दोनों तरफ से मारे पड़ेंगे। यही न है, कि ताऊजी कुछ कम दाम देते हैं। कम ही सही, बखेड़ा यहीं से मिट तो जायगा। अजो, मैं ता औरत ठहरी, मैं मामले मुकदमे का जंजाल क्या जानूँ। मुझे, तो मुकदमे के नाम से डर लगता है इसी लिए ऐसा कहती हूँ। तुम क्रोध मत करो अच्छी तरह सोच विचार लो, फिर जो अच्छा समझो, करो।

बैजनाथ जी ने भोजन समाप्त कर थोड़ा सा पानी पिया, और फिर धीरे धीरे कहने लगे—तुम्हारी ऐसी औरत जिसे मिले वह दुनियाँ में भाग्यवान है। मैं तुमसे पहले सलाह न करके वकील साहब के यहां दौड़ा गया यही मेरी बेवकूफी है। तुम्हारी सलाह ही ठीक है। मुझे भी यह मंजूर है। ताऊ जी आज कल छुट्टी पर आये हुए हैं। कलही उनसे मिल कर सब

तय कर लूँगा । और अगर फिर कभी किसी सलाह की जरूरत पड़ेगी तो घर के वृहस्पति से पहले सलाह कर लूँगा ।

बसन्ती जी ने हँसते हुए कहा—अच्छा तो वृहस्पति जी की एक और सलाह मान लो ।

वैजनाथ—क्या कहती हो मैं किसी में भी आपत्ति न करूँगा ।

बसन्ती—अच्छा, यह जो दो एक ढाय मैंने रखा है इसका पानी मुँह लगा कर पी जाओ तो ।

वैजनाथ जी ने अन्तमें वृहस्पति जी को यह दूसरी सलाह भी मान ली और पत्तल पर से उठ कर हाथ मुँह धोकर कूँ ला किया । बसन्ती जी ने पति की शय्या बिछा दी एक बीड़ा पान दिया, और बड़ी देर तक पति की शय्या के पास बैठी हुई घर गृहस्थी की बातें करती रही । देर तक बातचीत करने के बाद वैजनाथ ने अपनी प्यारी स्त्री को हृदय से लगा कर चुम्बन किया और कहा—जाओ बहुत रात हुई, जा कर खाओ पियो ?

संसार में अपने को भाग्यवती समझती हुई बसन्ती भोजन करने चौके में चली गयी ।

सबेरा हो गया है. किन्तु सूर्योदय नहीं हुआ है। पौ फटी ही है. ठंडी-ठंडी मन्द-मन्द हवा चल रही है। पेड़ों पर नाना प्रकार के पक्षी कलरव कर रहे हैं, मानो उषादेवी के स्वागत की तैयारी कर रहे हैं। धीरे धीरे तारों की ज्याति फीकी पड़ती जा रही है, अब भो आकाश में कहीं कहीं दा एक तारे टिम-टिमा रहे हैं। धीरे-धीरे पूरव दिशा की ओर पहले सफेदी फिर लाली फैलने लगी। हंसमुखी उषा के प्रेमाभिलाषा होकर भगवान् सूर्य अपने सातों घाड़ों को कमकसा कर उसके पीछे चढ़ दौड़े, पर चंचला हाथ न आई। प्रणयी के प्रचण्ड तेज के भय से न जाने हिमालय की किस पर्वत की गुफा में वह जा छिपी। इधर भगवान् सूर्य ने चारों तरफ अपनी शोभा फैलाना शुरू की। सारे जड़ जगत् को चैतन्य कर दिया, सोता को जगा दिया, कुरूप को स्वरूपवान कर दिया। रोशनी होते ही पक्षी सविता को धन्यवाद देते हुए विभिन्न दिशाओं को उड़ चले। अस्तु; सूर्य की पहिली किरण के साथ ही बैजनाथ जी ने शय्या त्याग किया और कुटिया के बाहर निकले। सारे पेड़-पौधे सूर्य को लाली से चमक-दमक कर अजीब शोभा दिखा रहे थे। फूलों के छोटे-छोटे पेड़ सबेरे की ठंडी हवा से सिर हिला-दिला कर मानो बैजनाथजी को अपनी तरफ बुला रहे थे। कहीं किसी घर की औरतें बड़े तड़के ही उठकर घर में भाड़ू बुहारू दे रही थीं, कहीं कमर पर कलस रखे जल लेने जा रही थीं. या कहीं रसोई की तैयारी कर रही

थीं। लड़के बगल में स्लेट या बस्ता लिये पाठशाला को जा रहे थे, या मैदान में खेल रहे थे। हलवाहे कन्धे पर हल लिये आगे बैलों को हाँकते हुए खेत की तरफ जा रहे थे। बैजनाथ जी ने भी आज अपनी जमीन देखने की इच्छा से उधर ही कदम उठाया। ठंडी छाया की पगडंडी पर कुछ दूर चल कर बैजनाथ एक किसान की कुटिया के सामने आ खड़े हुए, इस किसान का नाम रामखिलावन था।

रामखिलावन के घर के सामने मिट्टी की एक ऊँची दीवार थी। उसी के पास धान कूटने की ढेंकी पड़ी थी और उसके बगल में एक भोपड़ा था जिसमें तीन-चार गाय बँधी थीं। आँगन में चुल्हा था। पास ही फूस की छाजनवाली एक चार हाथ लंबी कुटिया थी, बरसात के दिनों में इसी में रसोई होती थी, अन्य दिनों में खुले आँगन में बनती थी। इस आँगन के बाद एक चौकोन कुटिया थी, यहीं रामखिलावन के सोने-बैठने का कमरा था। इस कुटिया के पिछवाड़े एक छोटा सा गढ़हा था, उसमें गोबर इकट्ठा करके रखा जाता था, जो खेतों के लिए खाद के काम में आता था। इस गढ़हे के एक तरफ एक मैली सी पोखरी थी। खिलावन की गृहिणी इसी मैली पोखरी में बासन-वर्तन माँजती थी पर नहाना, धोना और कपड़ा कचारना भी इसी में करती थी और अपने पतिदेव के पीने और रसोई करने का पानी भी यहीं से ले जाती थी।

बैजनाथजी ने कुटिया के बाहर से रामखिलावन को आवाज दी। खिलावन की नींद खुल चुकी थी। बिस्तरे से उठने का अभी उद्याग पर्व हो रहा था, इधर-उधर करवटें बदल रहा था। और बीच-बीच में बगल ही में सोई हुई

स्त्री को 'उठी नहीं', अभी तक प्यारी की नींद नहीं खुली' इत्यादि मीठे वचन सुना रहा था। इसी बीच में खिलावन ने बैजनाथ की आवाज सुनी।

यह आवाज तो शायद बनिये की आवाज सी मालूम पड़ती है।" इसलिए चालाक खिलावन जल्दी उठा नहीं। फिर आवाज, दोबारा तिबारा आई। अब क्या करे बेचारे को कुछ न कुछ उपाय करना पड़ा। किसी विपत्त-आफत के समय खिलावनजी का आसरा एक मात्र उनकी महामान्य गृहिणी ही थीं। अतएव जरा खुशामद के सुर से उसने स्त्री से कहा—“ऐ ऐ, जरा दरवाजा खोल कर भाँक कर देख तो कौन आया है। अगर रामदास बनिया हो, तो कह देना घर में हैं नहीं, खिलावन जी की स्त्री व्यंग्य वचन सुन कर अब तक चूप थी, अब मौका मिला। पति की बात सुनकर धीरे धीरे उसने करवट बदली और एक दो दफे साँस लेकर पति की तरफ पीठ करके फिर लापरवाही से टाँग फैला कर सो रहा। खिलावन ने देखा कि यह तो अच्छी आफत आई, एकाएक बाहर भी नहीं जा सकता, क्या करे, दो एक दफे श्रीमती जी को बुलाया कोई जबाब नहीं। एक आध दफे खीचाँतानी की, स्त्री चुप हो रहो दो तीन धक्के भी दिये तब भी कुछ फल न निकला। सारे यत्न निष्फल हुए, सभी हथियार खाली गये। तब खिलावन ने खाली हाथ उठ क्रोधोन्मत्त योद्धा की तरह जूझने का निश्चय करके कहा—इतना दिन चढ़ आया अभी तक यह उठती नहीं, इतना बुलाया भी हरामजादी जरा हिलती तक नहीं, अब मजा चखाता हूँ, दो घूँसे देकर नींद तोड़ता हूँ।

खिलावन की श्रीमतीजी ने देखा कि अब चुप्पी साधने से काम नहीं चलेगा, अब बिना मुँह खोले सिर पर आफत

आएगी, इसलिए वह भी इस बार बिस्तर पर उठ बैठी और बोली—क्या हुआ है ? तड़के ही तड़के उठ कर क्या बक रहे हो ? क्या नशा पिये हो ? मर भी नहीं जाते । चन्द्रमुखी इसी प्रकार से अपने अचल सुहाग की कामना कर फिर पीठ मोड़ कर सो रही ।

लाल लाल आंखें देखकर और पत्नी जी की भाड़ सुनकर खिलावनजी की बहादुरी हवा हो गई पर एकाएक कायर की तरह उसने रणभूमि छोड़ी नहीं ।

खिलावन — अरे फिर सो गई ?

स्त्री — सोऊँ नहीं !

खिलावन — घर का काम-काज नहीं करना है ?

स्त्री — नहीं करना है !

खिलावन — पानी नहीं लाओगी ?

स्त्री — नहीं लाऊँगी !

खिलावन — रसाई नहीं पकाओगी ?

स्त्री — नहीं !

खिलावन — फिर सो गई ?

स्त्री — सोऊँ नहीं ?

खिलावन — तब घर-गृहस्थी कैसे चलेगी ?

स्त्री — मैं क्या जानूँ ? मैं घर-गृहस्थी करके क्या कहूँगी, और कोई अच्छी सी देखकर ले आओ !

खिलावन — क्या नाराज हो गई ?

स्त्री — हटो जाओ । कह कर गृहणीजी फिर पीठ मोड़ कर सो रही ।

खिलावन बेचारा इस युद्ध में हार गया । फिर तो उसने श्रीमतीजी के हाथ पैर जोड़ना, खुशामद करना शुरू

किया । अन्त में बहुत कुछ हाथ पैर जोड़ने से श्रीमतीजी का क्रोध कुछ ठंढा हुआ और वह बिस्तरे से उठीं । अपनी जीत पर मन ही मन मुस्कुराती और ऊपर से क्रोधपूर्ण मुँह बनाए पति से बोलों—बोलो, अब क्या करना होगा । भला ऐसे आदमी की गृहस्थी किससे होगी ? बिना गाली-गलौज के सबेरा ही नहीं होता ।

खिलावन—गाली कब दी, खाली एक बार कुछ कहकर प्यार किया था बस यही तो । क्या यह भी न करें ?

स्त्री—नहीं । तुमने भला कुछ कहा है ? मुझे ऐसा लाड़-प्यार नहीं चाहिए । कहो क्या करना है ?

खिलावन—कहता हूँ, कि जरा दरवाजे से झाँक कर देख तो कौन हल्ला मचाये हुए है, रामदास बनिया हो तो कह देना मैं घर नहीं हूँ ।

तब चंद्रबदनी हिलती डालती शय्या से उठी । मुँह ठीक काली हंडिया के पेंदे सा हो गया था, वैसाही चौड़ा फैला हुआ चमकता, दमकता शरीर भी खूब गोल मोल मोटा-ताजा, मानो मिट्टी का पिंड हो—देख कर खिलावन को डर लगता था कि कहीं किसी दिन ऐसी रमणी के प्रिय आलिंगन से दम घुट कर उसकी अपमृत्यु न हो जाय, लंबाई में दूल्हा बड़ा था कि दुलहिन देखने वालों को अब तक इसका शक ही बना हुआ था ।

भानिनो श्रीमती जी ने जरा सा दरवाजा खोल कर कहा कौन है, जी ?

बैजनाथ—मैं हूँ, खिलावन घर में है ?

मालिक को देख कर खिलावन की स्त्री ने कुछ लज्जित और उतावली हो कर घूँघट काढ़ लिया, और जल्दी से बाहर

आँगन में महाराज जी के बैठने के लिए एक चौकी ला रखी और भीतर खिलावन को बुलाने चली गई। खिलावन भी निडर होकर आंख मलता हुआ बाहर आया और मालिक को घरती पर झुक कर दंडवत् किया और बोला—महाराज हम लोग नींद में थे, आप को बहुत देर तक खड़े रहना पड़ा।

बैजनाथ—खैर जो हुआ सो हुआ, अब चलो खेत पर जाना है, आज खेत देखेंगे। कहाँ तुम्हारे मजदूर सब कहाँ हैं ?

खिलावन—महाराज, मजदूरों को सब ठीक कर लिया है, बलिये तुरन्त चलता हूँ। आप बहुत दूर से आये हैं। थोड़ा सी दूध पीजियेगा।

बैजनाथ—कोई जरूरत नहीं है।

खिलावन—नहीं थोड़ा सा पी लीजिए, मेरे घर की गाय का दूध थोड़ा सा तो पी लीजिये। यह कह कर खिलावन गाय दुहने गया और उसकी स्त्री एक पथरी ले आई। इसी पथरी में दूध लाकर खिलावन की स्त्री ने मालिक के सामने रक्क दिया। बैजनाथ भी किसान के भक्ति भाव से दिए हुए दूध पी गये। खिलावन ने भी मजदूरों को पुकार कर इकट्ठा कर लिया और दो हल और चार बैलों को लेकर तैयार हो गया। सब लोग खेत की तरफ चले। रास्ते में और और बातें होते होते खिलावन बोला—महाराज जी, आप इतना दुःख क्यों उठा रहे हैं। आप के दोनों खेतों पर मैं हल अच्छी तरह फिरा चुका हूँ एक बार फिर फिरा दूँगा। आज सब ठीक हो जायगा, फिर कल धान रोप दूँगा। आप नाहक इतनी तकलीफ कर रहे हैं ?

बैजनाथ—नहीं, बहुत दिनों से मैंने अपनी जमीन देखी नहीं है, तुम लोग क्या करते हो, क्या नहीं करते हो, देख लेना अच्छा है, इस लिए आज इच्छा हुई कि एक बार जा कर देख आऊँ।

खिलावन—देखिये न, आपकी चीज है, जब खुशी हो देखिये। जमीन अच्छी है, धान अच्छा होता है। महाराजजी, आप लोग भले मानुष ठहरे, नौकर रख कर खेती करवाना पड़ता है, इसी से मालूम होता है कि आप को कुछ ज्यादा नफा नहीं होता।

बैजनाथ—हाँ, बचत तो साधारण ही है। तुम लोगों को मजूरों को दे दिला कर कुछ अधिक नहीं बचता। गत वर्ष शायद दो ढाई सौ मन धान हुआ था पर तुम लोगों को और बीज का दाम, जमींदार का लगान दे कर सौ रुपये से अधिक हाथ नहीं आया।

खिलावन—महाराज, आप ने एक बार कहा था कि जमीन बँटवारे में दोगे, सो अब क्या मरजी है ? अगर देना हो तो मुझे ही दिजियेगा। मैं आप के यहाँ का पुराना नौकर हूँ, बड़े महाराजजी के समय से इसी जमीन को जोतता बोता हूँ। आप को कुछ भी तकलीफ उठानी नहीं पड़ेगी। मैं अपने खर्च से जोताई बोआई करूँगा। हल-बैल सब मेरे हैं ही, साल आखिरी में धान वजन करके सगड़ पर लदवा कर आधा धान आप के घर पहुँचा आऊँगा।

बैजनाथ—अच्छा बतला तो सही, तुम्हें बंटैया लेने की ऐसी लालसा क्यों है ?

खिलावन—महाराज जी, आप तो जानते ही हैं, मेरा भी एक छोटा सा खेत आपके खेत के पास है, आठ दस बिस्वा का

होगा। उससे पेट तो भरता नहीं। आप लोगों की सेवा टहल कोहमत मजूरी करके जो कुछ मिलता है उससे गुजारा करता हूँ, पर हाँ अगर बापकी जमीन बँटैया में मिल जाय तो दस आदमियों से कहने लायक भी हूँगा कि “इतनी जमीन जोतता हूँ”, और जुताई बुआई में आपका जितना खर्च हो जाता है, हम लोगों का उतना खर्च नहीं पड़ेगा। दो पैसे मिल जायँगे, लड़के बाले खा कर जीएँगे।

वैजनाथ—खैर जो होगा पीछे देखा जायगा। इस समय तो मेरे खेत बो दे फिर जो करना होगा पीछे किया जायगा।

बैसाख महीने में दो एक बार पानी बरस गया है। सभी खेतों में जुताई बुआई हो रही है। सवेरे की ठंडी ठंडी हवा में किसान सब मन की मौज से गाते हुए या बैलों को तरह तरह के प्यार सूचक शब्दों से सम्बोधन करते हुए खेत जोत रहे हैं। खेतों में चारों तरफ जहाँ निगाह दौड़ाइये खेतों का अन्त नहीं मिलता। इस तरफ उपजाऊ जमीन की कमी नहीं है, और यही यहां के निवासियों का यथासर्वस्व है। न जाने कितने खेतों की जुताई बुआई देखते खिलावन से बातचीत करते हुए वैजनाथ अपनी जमीन की तरफ जा रहे थे, पर आज भी वे अपने खेत न देख सके। रास्ते ही में अचानक उनके ससुर रमानाथ मिल गए। रमानाथ किसी काम से पहले दिन शाम को कहीं किसी गांव में गए थे। रात हो जाने के कारण घर नहीं आ सके आज तड़के ही घर की तरफ जा रहे थे, वैजनाथ ने उन्हें देखते ही प्रणाम किया, वह भी आशीर्वाद देकर बोले—‘क्यों बेटा कहां जा रहे हो? चलो, घर चलो। अच्छे तो हो? हम रोज सोचते हैं किएक दिन तुम्हें बुलाकर खिलावें पिलावें पर क्या करें बाँकापुर से यहाँ आने के बाद ही तरह तरह के संभटों फंसे हुए हैं,

सहीर भी कुछ डीला है, लकड़ों को बीखों बर कहा है कि तुम को न्यौता दे आवें, पर वे घर से बाहर निकलते ही नहीं, खैर जो हो तुम किसी रोज जरूर आकर खा पी जाना' । बैजनाथ ससुर साहब के साथ लौट पड़े और कहा—“हाँ हाँ जरूर आऊँगा, मैंने भी सोचा था कि आज या कल जरूर आप के दर्शन करूँगा, कुछ काम भी है । अगर आप को फुरसत हो तो कष्टिप आजही शामको आऊँ” ।

रमानाथ—तुम तो घर के लड़के ठहरे, फुरसत की बात ही क्या ? जब आओगे तभी मिलूँगा । तारा बेटा ससुरार से आई है । उसने कई बार कहा कि बाबू जी, जीजा जी को नेवस्ता भेजो न, और घर में से कई बार हुकुम मिला, बैजनाथ को एक दफे बुलाओ । आज शाम ही का आना, कुछ जलपान भी करना ।

इसी तरह बातचीत करते हुए दोनों जने गाँव में बाखिल हुए ।

शाम को बैजनाथ रमानाथ जी के यहाँ गए । घर के बाहर गायों के रहने का एक दालान और कई धान रखने के बखार थे । चंड़ी मंडप और उसके सामने नाच तमाशे के लिए फूल की छाजन का एक बड़ा सा अठ पहला बंगला था । कुआर महीने में अमीन साहब के यहाँ बड़ी धम धाम से नवरात्र भर दुर्गा-पूजा होती थी, नाच तमाशा, रास लाला नाटक सभी कुछ होते थे । आस पास के गाँव के हजारों लोग देखने आते थे । हर साल अमीन साहब दुर्गा पूजा पर घर आते हैं, पर इस बार किसी खास जबरत से बैसाख महीने हा में एक महाने का छुड़ी लेकर आए हैं ।

दो साल हुए, अमीन साहब ने बैठने-उठने के लिए बाहर एक बैठकखाना बनवाया है। औ घर के बगल में बाहर ईंटें भट्टे में पकी हुई पड़ी थीं, मालकिन की मनसा थी. कि सोने का कमरा भी पक्का हो जाय। उसी बैठके में एक बड़ी सी नीची चौकी पड़ी हुई है, जिस पर दरी और चादर बिछी है। इस पर एक तकिए के सहारे बैठे हुए पंडित रमानाथजी गुड़-गुड़े पर तमाकू पी रहे हैं और मुहल्ले के कुछ लोग बैठे हुए इधर उधर की गप्प हाँक रहे हैं।

बैजनाथ के आते ही, रमानाथ ने उन्हें स्वागत पूर्वक बैठाया और दो चार शिष्टाचार की बातें कर के एक लड़के के साथ घर के भीतर भेज दिया। अन्दर का जनाना मकान चारों तरफ चहारदीवारी से घिरा हुआ था सामने लंबा चौड़ा आंगन और ऊँचे चबूतरे पर फूस की छावनी का बड़ा उम्दा एक अठपहला सोने उठने का बंगला था और इस बंगले के अगल बगल ही ऊँचे चबूतरे पर फूस की छावनी के लंबे लंबे दो तीन दालान थे। कमरे अच्छी तरह लिपे पुते साफ सुथरे थे और एक तरफ कोने में रसोई घर था। घर के पीछे एक बड़ा सा तालाब था, उसके चारों तरफ बगीचा था जिसमें गुलाब जूही बेला इत्यादि पुष्पों के पौधों के अलावा आम, कटहल ताड़, सुपारी, नारियल के भी कई पेड़ थे।

बैजनाथ ने घर में पैर रखते ही सासजी को मुक कर प्रणाम किया। उन्होंने भी असीस देकर घरके भीतर ले जाकर बैठाया। मालकिन जी की उम्र चालीस से ज्यादा हो चुकी है। बदन सुडौल गोल-गाल गोरा और कद कुछ नाटा होने के सबब से उम्र पैतिस से अधिक नहीं मालूम पड़ती। गोल गाल मोटी ताजी दोनों भुजाओं पर सोने के मोटे मोटे अनन्त

और जोशन से मालकिन जी का बड़ा आदमीपन जाहिर हो रहा है। हाथ में सोने के ठोस कड़े और सोने ही की चूड़ीयां पड़ी हुई हैं। इनके ठोस कड़े अनन्त जोशन, गज गमन ऐसी ठोस चाल, कुछ कुछ हँसता और मुस्कराता हुआ चेहरा देख कर और कुछ गौरव और दम्भ पूर्ण बातें सुन कर यही मालुम पड़ता है कि हां किसी अमीर के घर की मालकिन हैं सही। इतने पर भी रमानाथ की गृहिणीजी खोटी औरत नहीं थीं, मन की सादी और सीधी थीं। यद्यपि उनकी बातों से कुछ कुछ घमण्ड टपकता था पर बातें सब बड़ी मीठी और हास्यपूर्ण होती थीं। यदि कोई उनकी तारीफ करता या इनके बड़प्पन का बखान करता तो बड़ी खुश होती थीं, पर दूसरे की निन्दा या किसी की बुराई करने की आदत इनमें नहीं थी।

सास ने कहा—क्यों जी, दो ही कदम पर घर है, फिर भी कभी भांकी नहीं मारते बुढ़िया है कि मर गई, जरा खबर तक नहीं लेते ?

बैजनाथ—नहीं जी ऐसा नहीं, आप लोगों की खबर तो रोज ही मिल जाती है, पर बात यह है कि हमलोग गरीब आदमी ठहरे, सारा दिन काम-काज में ही निकल जाता है।

सास—हाँ, क्यों नहीं, अब तो यह कहोगे ? इतनी मेहनत से बसन्ती को पाला-पोसा, बड़ी किया, ब्याह करवाया सो क्या वह भी कभी नहीं पूछती की तारी कैसी है ?

बैजनाथ—वह तो सदा ही आपको पूछती है, और जब से तारा आई तब से यहाँ आने आने को भी कर रही है, पर क्या करे गृहस्थी का सारा धन्धा उसी को करना पड़ता है और लड़के की तबीयत भी कुछ खराब है, इसलिए आ नहीं

सकती। एक दिन तारा को हमारे घर भेज दीजिए न, अपनी बहिम से भी मिल आवेगी और दोनों बच्चों को भी देखती आवेगी।

सास—नहीं बेटा, तारा का जिनके यहाँ ब्याह हुआ है उनका हुकुम नहीं है कि बहू दूसरे किसी के यहाँ जाए आवे। वह बड़े आदमी हैं, रघुनाथपुर के पुरतैनी रहस हैं, वही जो पहले रघुनाथजी पटने के नबाब के दीवान थे उन्हीं का घराना है, बड़े भारी धनी हैं, ऐसा धनी इस तरफ कोई है नहीं।

बैजनाथ—हाँ, सो तो मैं जानता हूँ।

सास—हाँ जानते क्यों नहीं होंगे, उनका घर भला कौन नहीं जानता? क्रियाकांड, दान धर्म बराबर चलता रहता है। जैसा धन है वैसा ही नाम है। यही देखो अभी उन्हीं दिनों उनके घर की एक लड़की बांकीपुर में ब्याही गयी जहाँ यह नौकरी करते हैं, तुमसे सच कहती हूँ ब्याह में दस हजार रुपया खर्च हुआ। उसको क्या कुछ रुपये की परवाह है। हर साल बसन्त पंचमी, होली पर खूब नाच तमाशा खिलाना पिलाना होता है और दान धर्म की भी कमी नहीं है। समझे कि नहीं, रघुनाथपुर में ऐसा कोई ब्राह्मण गरीब कंगला नहीं कह सकता कि मुझे फलाने मौके पर बिदाई नहीं मिली।

बैजनाथ—हाँ, यह सब मुझे मालूम है।

सास—सो तारा को क्या जलदी भेजते थे, बस वही दस-हरे पर एक बार भेजते हैं फिर नहीं भेजते। इस दफे यह छुट्टी ले कर घर आने लगे तो न जाने कितने आदमियों को भेज भेज कर आप कितनी बार दीड़ धूप करके तब लड़की को बिदा करवाया। तिस पर भी कह दिया है कि पन्द्रह दिन से एक दिन भी अग्रिक नहीं रहने पावेगी, सो क्या करें यही पन्द्रह दिन होते

ही भेज दूँगा। एक आदमी को आरा भेजा है, वह वहाँ से मिठाई आम आनरस यह सब चीजें लेने गया है, लड़की के साथ भोजना होगा। बड़े आदमी से नाता किया है तो कुछ गांठ से भी लगाना पड़ेगी।

बैजनाथ—हां यह तो है ही, अच्छा तो हम इसी बीच में अपने घर में से भेज देंगे। लड़कों को ले कर चली आवेगी, तारा से मिल भी जायगी।

सास—क्यों नहीं, जरूर भेज दो, बसन्ती तो मेरे अपने पेट की सी लड़की है वह भला नहीं आवेगी? जरूर भोजना और बेटा, तुम भी कभी कभी हम लोगों की खबर ले लिया करो।

बैजनाथ—अजी, यह भी क्या आप को कहना होगा। तारा और कै दिन रहेगी?

सास—अब और रहेगी किस तरह। आज तेरहवाँ दिन बीत ही गया। कल आदमी आरा से सब चीज लेकर आयेगा परसों लड़की बिदा हो जायगी। लड़की को ससुरार भेज रही हूँ, साथ में कुछ भी तो देना चाहिए नहीं तो हँसी होगी। बड़े आदमियों से नाता किया है, बिना कुछ दिये लिए क्या अच्छा लगता है। और भी देखा न सामने अख्य ताज खड़ी है। तब भी कुछ भोजना ही होगा। बड़ा रुपया खर्च हो रहा है।

बैजनाथ—हाँ, क्यों नहीं।

सास—क्या करें, जैसे आदमियों से नाता किया है, लेन-देन भी वैसाही करना पड़ता है दस आदमियों में अपना नाम इज्जत भी है, समझी भी जानते हैं कि हम लोग घराने वाले हैं, फिर क्या करें बिना कुछ दिए लिए भी तो काम नहीं चलता, अच्छा, तुम्हारे दोनो बच्चे तो अच्छे हैं।

बैजनाथ — नहीं, आज पांच छः दिन से लड़के की तबीयत कुछ खराब है। रात को कुछ हरातर आ जाती है। कल आरा से एक दवाई लाकर पिलाई है, आज कुछ अच्छा है।

सास—अच्छा किया बेटा, बसन्ती भी दुबली पतली नाजुक थी, बीच बीच में बुखार हो आता था। अहा, अभी उस दिन की बच्ची है, ऐसी सीधी शान्त लड़की देखने में नहीं आई, कभी मुंह खोलकर कोई चीज नहीं माँगती थी। मैं जब तक उसे खाने को बुलाती थी तब तक आप कभी नहीं कहती थी कि “ताई जी भूख लगी है”। ताईजी मानो उसकी जी जान थी। जब से उसके बाप मर गए, तब से उसकी माँ की तबीयत तो ठिकाने थी ही, इस लिए जब मैं ही बसन्ती और चंपा को खिलाती तो खाती, पहिनाती तो पहिनती थी। जैवी मेरी तारा तैसी बसन्तो, अहा भगवान करें फले फूले, एक बार जरूर भेज देना।

बैजनाथ—हाँ हाँ, जरूर भेज दूँगा।

सास—देखो, गए वर्ष बसन्ती देवी-पूजा के समय आई उसी दिन चली गई अब तो ऐसा होगा नहीं। घर की लड़की ठहरी त्यौहार के दिन पांच सात दिन रह कर घर का काम-धन्धा करेगा। काम तो कुछ ऐसा है नहीं, देखतेही हो कि हम लोगों के यहां दर्शन परसन के लिए तीन चार कोस तक के गांव के सभी तरह के आदमी आते हैं। तुम लोग घर के लड़के होकर बाहर ही बाहर आकर चले जात हो घर का काम-धन्धा भला क्या जानो। तीन बजे रात से कड़ाही चढ़ती है और शाम तीन बजे तक चुल्हा बुझने की नौबत नहीं आती। तिस पर भी तो पूरा नहीं पड़ता। कितने आदमियों को खिलाऊँ पिलाऊँ, चित्त खिन्न हो जाता है।

बैजनाथ—भला यह क्या मैंने देखा नहीं है ? हर सालही देखता हूँ । आप के घर की देवी-पूजा की धूमधाम का हाल कौन नहीं जानता ।

सास—क्या करें बेटा, बाप-दादा के समय से चला आया है । वह भी बेचारे क्या करें, करना ही पड़ता है । रुपया पैसा न होता तो दूसरी बात थी । देखो न, गांव में क्या सबके यहाँ देवी पूजा होती है ? नहीं होती, सबको तो लोग कुछ कहते सुनते नहीं, पर क्या करें बाप-दादा के समय से चला आया है । वाजपेयी जी के घराने का जरा नाम भी है और भगवान की दया से यह दौ पैसा कमाते भी हैं, इसीलिए किए बिना शोभा नहीं, क्या करें ।

बैजनाथ—सो तो है ही ।

बैजनाथ जी, न जाने कितनी देर तक अपनी सासजी के मंह से वाजपेयी जी के घराने का इतिहास, देवीपूजा की धूम धाम का इतिहास, रघुनाथपुर के पुश्तैनी धन का गौरव, लड़की की बड़ाई आदि की वक्तृता सुनते रहे । यहां तक की रात ज्यादा हो गई और दिन भर की मेहनत से थके हुए बैजनाथ की पलकें झुकने लगीं । सासजी की वक्तृता का मर्म भी कहीं कहीं समझ में नहीं आया पर, सासजी का मन रखने के लिए हाँ, क्यों नहीं, ऐसाही तो है—इस प्रकार के शब्द उच्चारण करते और ऊँघते जाते थे, पर वह क्या, सहसा झमाझम पायजेष की ध्वनि कहाँ से हुई । हाँ, रघुनाथपुर के पुश्तैनी रईस के घराने की बहू नाना प्रकार के रत्नाभरणों से भूषित सोलह वर्ष की रूपाभिमनिनी तारा देवी ने घर में पैर रखा । तारा का रंग मानो दूध सा धुला हुआ था, तिस पर से रत्न-जटित आभूषणों की शोभा अपार थी । देखिए

सिर पर जड़ाऊबैली की क्या शोभा है, उसमें से हीरे पन्ने की क्याति मानी बिजली सी चमक रही है। गले में हीरे का चन्द्रहार, मोती जड़ाऊ का टिकड़ेदार सतलड़ा, हाथ में जड़ाऊ कड़े, छन्द, पहुँची बाहँ में जड़ाऊ जोशान बाजू और अमन्त कमर में सोने की करघनी, कहाँ तक बखान करूँ, मुझे तो सब गहनों के नाम भी नहीं आते। तात्पर्य यह कि तारा रानी सर्वांग रत्नाभरणी से विभूषित थीं। घर में पैर रखते ही बैजनाथ को देखकर तारा रानी बोलीं—अहा ! बड़े भाग, आज न जाने सबेरे किसका मुँह देखकर उठी थीं।

बैजनाथ—मेरे भाग्य कहो, तभी एकाएक मुलाकात हो सकी।

तारा—हाँ जी हाँ, खाली बातें बनाते हो, तेरह दिन आये हो गए, एक बार मिलने भी नहीं आये। अच्छा, अच्छे ता हो ? बसन्ती अच्छी तरह है ?

बैजनाथ—हाँ, वह अच्छी है, तुम तो अच्छी हो ?

तारा—हाँ, जैसी रखे हो, मुँह खोल के पूछ दिया यही बहुत है, पर आज यहाँ हम लोगों के यहाँ क्यों कर पधारे ? बसन्ती बहन को छोड़कर क्योंकर, इतनी रात तक यहाँ बैठे हुए हो। कहीं नाराज न हो जायँ।

बैजनाथ—अरे भाई, तुम्हारी बहिन तो आप आने आने को कर रही है, भला हमें नहीं आने देगी ? कई दिन से कह रही है कि तारा से जाकर एक बार मिल आऊँ।

तारा—कल जरूर भेज देना। भूलना मत।

बैजनाथ—हाँ जरूर भेज दूँगा, वह भी तुमसे मिलने के लिए उकता रही है। तुम जब ससुराल में रहती हो, तो सदा ही तुम्हारी माँ से तुम्हारी खबर लेती रहती है।

तारा—यह जानती हूँ बचपन लड़कपन से ही मुझे चाहती है। बचपन में हम दोनों एक संग खेलतीं, मुझे बिना देखे उसे एक घड़ी भर चैन नहीं पड़ता था। लड़कपन में समझती थी कि सदा, ऐसे ही दिन रहेंगे, रोज मिलेंगी-जुलेंगी। मन की मन ही में रह गयी। अच्छा तो कल बच्चे को भी भोजन देना।

वैजनाथ—जरूर, जरूर।

तारा रानी बड़ी खुश हुई। पाठकों ने भी लक्ष्य किया होगा कि पिता की धन-लालसा, माता का धन-गौरव, ससुरार की अमीरी चाल से तारा के हृदय से लड़कपन का प्रेम, लड़कपन का स्नेह दूर नहीं हुआ है, यह अब तक लड़कपन के सुहृदों को याद किया करती और स्नेह भी रखती थी। और बातों के बाद तारा बोली—“अच्छा, अब ठो, कृपा करके पधारे हो तो जरा जलपान करते जाओ, थाली परोसी रखी है।”

तारा रानी झम-झम करती हुई आगे चलीं और पीछे-पीछे सिर नीचा किये वैजनाथजी गये। भोजन के कमरे में पैर रखते ही देखा कि गलीचे का एक बहुत उमड़ा आसन बिछा हुआ है, और एक चौकी पर, जिसके दोनों तरफ मोमबत्ती के दो शमादान जल रहे हैं, चांदी के एक थाल में नाना प्रकार के व्यंजन परोसे हुए हैं। चांदी की कई कटोरियों में न जाने कितने प्रकार के रबे, अचार मुरब्बे होंगे। भोजन की सामग्री और ठाट देखकर वैजनाथ घबड़ा गए, मन ही मन कहने लगे कि “भोजन के इन बर्तनों के मूल्य से मेरी साल भर की गृहस्थी चल जाय” पर प्रकट बोले—अरे, यह क्या ? इतनी शत गए इतना थाल भर भोजन कौन खायगा। माफ करो,

यत् किंचित जलपान ही काफी है” पर तारा रानी भला यों कैसे छोड़ती। बरजारी बैजनाथ को आसन पर बैठाया और आप सामने बैठकर बातचीत करने लगी। बैजनाथजी के भाग्य में ऐसा भोजन भला कहाँ मिलता, इसलिये वह भी कुछ प्रसन्न चित्त कुछ संकोच बस अपनी सुन्दरी साली से बातचीत करते हुए भोजन करने लगे। शमादान की धीमी रोशनी में तारा रानी के रत्नाभूषण चमक रहे थे, चेहरा दमक रहा था, आँखों से प्रफुल्लता और हँसी टपक रही थी। सारा गाँव कहता था कि बसन्ती काली लड़की है, तारा गोरी और खूबसूरत है और इसी खूबसूरती के कारण इसका बड़े घर विवाह हुआ है। दिवान साहब के लड़के ने प्रतिज्ञा की थी कि लड़की खूबसूरत न होगी तो व्याह न करेंगे, तारा की खूबसूरती के कारण ही वह ऐसे घर व्याह गई थी। अपने से बड़े बड़े भारी धनवानों से नाता करके रामनाथजी को बहुत कुछ लांछना सहनी पड़ती थी।

दिवान साहब के घराने से नाता करके रामनाथजी की इज्जत गाँव में बहुत कुछ बढ़ गई। सब लाग उन्हें आगे से और भी अधिक मानने और डरने लगे।

तारा रानी को वस्त्राभूषणों की कमी नहीं थी, रुपये पैसे का सब कुछ सुख था पर और तरह का सुख था कि नहीं यह हम अभी नहीं कह सकते जब तक कि दिवान साहब के युवक पुत्र से हमारी दो एक बार भेंट मुलाकात न हो ले, पर सुनते हैं कि शायद उम्र के साथ साथ उक्त रईस साहब की रुप-लालसा भी कुछ बढ़ती जाती थी और विजय नारायणजी इधर उधर की हवा भी खाने लगे थे। जाने दीजिये, बड़े आदमियों की बात से हमें क्या काम। हम तो गरीबों की

कहानी लिखने बैठे हैं। ससुरार में तारा को खानेपीने की किसी बात की कमी नहीं थी पर गरीब के घर की लड़की होने के कारण कभी कभी ननदों के ताने या टहलनियों की बोलियाँ सुननी पड़ती थीं, पर शायद शरीर भरा गहना पहि-
नने से बहुत सा दुःख सहा जा सकता है, शायद मोतो के सतलड़े और जड़ाऊ टुकड़े की चमक से मन का बहुत सा दुःख दूर हो जाता है।

पर भाई, हम तो इस शास्त्र के ऐसे पंडित नहीं हैं। सोना-चांदी कभी परखा नहीं, जड़ाऊ जवाहिर भी बहुत देखने में नहीं आया, उनकी कीमत भी नहीं जानते। हीरे की चमक दमक से मन की मलीनता और अंधेरा कहाँ तक दूर हो सकता है, यह तो ज्ञानी मानी धनवान और धनवती जी ही जानें हम तो केवल इतना ही कह सकते हैं कि बहुत देर तक तारा रानी से बातचात करते करते और उसके मुँह की तरफ बार बार देखते देखते बैजनाथ जी के मनमें कुछ संदेह हुआ। उन्हें मालूम पड़ा कि हीरे जड़ाऊ से भूषित ललाट पर मानो अभी से चिन्ता की एक आध रेखा की छाया पड़ गई है हँसी से खिली हुई आंखों के कोने में भी शायद कभी कभी चिन्ता की झलक मार जाती है। क्या असलियत में यह चिन्ता की छाया है या शमादान की टिमटिमाती रोशनी की छाया है, या इस युवती के सौन्दर्य पूर्ण ललाट पर भावी जीवन ने अपनी छाया डाल रखी है।

भोजन समाप्त करके बैजनाथ जी बाहर बैठकखाने में आए। उन्होंने देखा कि रमानाथ अकेले बैठे हुए नाक पर चशमा चढ़ाए दीये की टिमटिमाती हुई रोशनी में एक कामज उलट पुलट कर देख रहे हैं। यह कोई मासिक, साप्ताहिक या दैनिक समाचार-पत्र नहीं है, एक पुराना दस्तावेज है। अमोन साहब उसी को ध्यान से पढ़ रहे थे। उमर पचास के करीब है, रंग कुछ सांवला, शरीर कुछ स्थूल, सिर के सामने के कुछ बाल पक गए हैं, चेहरे से धनी या रईसा का कुछ भाव नहीं मालूम पड़ता। जो लोग रुपया कमा जाते हैं, उनके चेहरे से रईसी नहीं टपकती, जो उनके बाद दौलत उड़ती है, उन्हीं के चेहरे पर अमारी झलकती है, अन्तु, रमानाथ भी योंही साधारण चतुर काम-काजी आदमी से मालूम पड़ते थे, इन्होंने बैजनाथ के आते ही हाथ का कागज रख दिया और कहा— आओ बेटा आओ, बैठो। बैजनाथ जी भी सामने कुछ दूर पर बैठ गए।

इधर उधर की शिष्टाचार की बातें होने के बाद बैजनाथजी ने अब असल काम की बात छेड़ी। रमानाथ बिना कुछ हिले डुले धीरे धीरे उनकी बातों का जवाब देने लगे।

बैजनाथ—बहुत दिन पर आपके घर आया हूँ, आप से बात चीत करके तबीयत बहुत खुश हुई, यदि आज्ञा दीजिए तो जो दो एक कामकाज की बात है, उन्हें कह डालूँ।

रमानाथ—हाँ, हाँ, क्यों नहीं कहो न, उसमें भला और बुरा क्या दूँगा, जो कहना हो कहो, मैं सब सुनता हूँ।

वैजनाथ—मेरे ससुर साहब की जो थोड़ी सी जमीन थी, उसीका जिक्र कर रहा हूँ।

रमानाथ—हाँ, कहो।

वैजनाथ—उस जमीन को हमारे ससुर साहब अपनी जिन्दगी भर जुतवाते रहे और बराबर उन्हीं के कब्जे में भी वह रही। उनके पहिले उनके पिता के कब्जे में थी, यह भी आपको मालूम ही है।

रमानाथ—मालूम क्यों नहीं। विश्वनाथ के पिता के पहले उनके पिता उस जमीन को जुतवाते थे, जो हमारे और विश्वनाथ दोनों के दादा होते थे। उस समय हम लोगों की उम्र बहुत कम थी, पर बातें सब याद हैं। दादाजी के मरने पर मेरे ही पिता सारी जमीन जुतवाते थे। यद्यपि विश्वनाथ के पिता बड़े थे; पर उन्हें बाहरी काम-काज में कुछ ऐसा दखल नहीं था, इसलिए हमारे पिता संयुक्त परिवार में सारी जमीन जुतवाते थे। फिर जब विश्वनाथ के पिता अलग हो गए तो पेट भरने के लिए हमारे पिता ने उन्हें कई बीघे जमीन जोतने को दे दी थी। विश्वनाथ भी अपने जीवन भर उसी जमीन को जुतवाते रहे, बस यही तो सारी बात है। जमीन सारी संयुक्त परिवार की है। यह सब बातें तुम भला क्या जानो। लड़कपन में तो तुम गांव में रहते नहीं थे, बांकीपुर या कलकत्ते में लिखते पढ़ते थे।

जमीन संयुक्त परिवार की है, वैजनाथ जी ने आज यह बात नई सुनी। उनके आश्चर्य का ठिकाना न रहा। रमानाथ जी की यह नयी तर्क प्रणाली सुनकर उन्हें कुछ हँसी भी आई,

पर आज वह बहस करने तो आए नहीं थे, वह तो मामला आपस में निपटाने आए थे, इसलिये हँसी रोक कर बोले— इसमें भला कौन सन्देह है कि पुराने समय की बात आप मुझसे अधिक जानते होंगे, मुझे केवल इतना ही कहना है कि मेरे ससुर साहब अपनी जिन्दगी भर जिस जमीन को अलग जुतवाते रहे उसमें से उनकी दोनों अनाथ कन्याएँ कुछ उम्मीद कर सकती हैं या नहीं ?

बैजनाथ—अहा ! बेचारी बसन्ती इसी उम्र में बिना माँ-बाप की हो गई, सोचते हुए कलेजा फट जाता है, अहा ! आज विश्वनाथ होता, ऐसी सोने की पुतली लड़की ऐसे गुणवान दामाद के साथ गृहस्थी कर पाती तो आज इतना गोलमाल न हो पाता, इतना खर्च करके फिर क्या उसकी जोती हुई जमीन हमें संभालनी पड़ती ? क्या करें, भगवान की जैसी मरजी । विश्वनाथ तो चले गए । मुझको सब बोझा उठाना पड़ा; संयुक्त परिवार की जमीन का जो हिस्सा मुझे जुतवाना पड़ता है उसमें कुछ ऐसा फायदा भी नहीं है, उसे अब तक संभाल रखने ही में आमदनी से अधिक खर्च हो चुका है पर क्या करें पुरैनी जमीन दूसरे के हाथ में चली जाय, जमींदार दूसरे को दे दे, यह भी तो आंख से देखा नहीं जाता ।

बैजनाथ—तब क्या ससुर साहब की जमीन से उनकी लड़कियाँ कुछ भी आशा नहीं कर सकती ?

रमानाथ—आशा और क्या करेंगे, देखो, हम लोग उस जमाने के बुढ़े आदमी और तुम लोग आज कल के कालेज में पढ़े हुए नौजवान लड़के ठहरे, तुम लोगों को सब बातें बिना सुलासा कहे क्या मतलब साफ होता है ? बसन्ती

तो मेरे घर की लड़की ठहरी, जैसी मेरी तारा, तैसी वसन्ती, जब तक मेरे घर में एक मुट्ठा आटा है, तारा और वसन्ती दोनों बाँट कर खाएँगी, उसमें फिर जमीन का हिस्सा ही क्या और उम्मीद, सुम्मेद ही क्या ।

बैजनाथजी ने देखा कि चतुर रमानाथ से बचना कठिन है । इनके घुमाव फिराव की बातों का फेर अजीब है, बहुत देर तक उन्हें ठिकाने लाने की वृथा चेष्टा के बाद अन्त को बैजनाथ बोले—बाबूजी, यदि आप नाराज न हों और इजाजत दें तो एक बात और कहूँ ।

रमानाथ—कहो कहो, इसमें नाराज होने की कौन-सी बात है, तुम तो हमारे लड़के की तरह हो, तुमसे भला नाराज होंगे ?

बैजनाथ—आप शायद जानते होंगे कि ससुर साहब जिस जमीन को अपनी जिन्दगी भर अलग जुतवाते रहे, वह जमीन शामिल मिलकियत में है, यह हम नहीं मानते ।

रमानाथ—तुम भला क्यों मानोगे । तुम लोग कालेज में पढ़े हो, अंग्रेजी शिक्षा पाई है, तुम भला संयुक्त परिवार में रहना क्या जानो, सुनते ही हैं न कि आज कल के अंगरेजी पढ़े लिखे भाई-भाई, बाप-बेटा एक साथ नहीं रह सकते, फिर वह इजमाली की बात क्या जानेंगे, पर भाई हम लोग तो उस जमाने के बुद्धि आदमी ठहरे, हम लोग इजमाली में रहना ही ज्यादा पसन्द करते हैं । अहा ! आज बेचारा विश्वनाथ जीता रहता तो वह जानता कि यह जमीन बाजपेई घराने की शामिल मिलकियत में है या नहीं ?

बैजनाथ—खैर, चाहे जो हो यह तो आपको मालूम हो ही गया कि हम लोग इस जमीन को इजमाली नहीं मानते

और इजमाली हो या न हो, शायद उस जायदाद के एक हिस्से की उम्मीद हम भी कर सकते हैं। हमारे ससुर साहब जिस जमीन को अलग जुतवाते थे, उस जमीन को अब यदि मैं अपनी स्त्री की तरफ से अलग जुतवाऊँ तो क्या आपको कुछ उज्र है ?

रमानाथ कुछ भी नाराज न हुए, जरा सा मुसकुरा कर कहने लगे—अरे राम राम, तुम पढ़े लिखे समझदार होकर ऐसी बात क्यों कहते हो ? बाजपेयी घराने के संयुक्त परिवार की जायदाद क्या अलग की जा सकती है ? यदि यही होता तो उस जमीन की कीमत से दसगुना खर्च करके उसे अपने हाथ में क्यों रखता। कायदे की बात कहो तो सुनें भी, बेकायदे की बात भला क्योंकर सुनी जाय ? अरे भीखा, एक चिलम तमाखू तो दे जा. बड़ी रात गई, कल रात को अच्छी नींद नहीं आई, नींद के मारे पलकें भारी हो रही हैं।

बुढ़वे का यह फरेब देख कर बैजनाथ जी को कुछ क्रोध चढ़ आया, पर जब उन्होंने सोचा कि हकीकत में अपनी ही बात असंगत मालूम पड़ी। जिस जमीन पर रमानाथ ऐसे चतुर काम-काजी आदमी आज दस बरस से दखल जमाए हुए हैं, उसे उन्हें छोड़ देने को कहना असंगत नहीं तो क्या है ? थोड़ी देर तक सोच विचार कर बैजनाथ फिर बोले—अच्छा अगर आपके सोने का समय हो गया तो जाइए, मैं भी आपको देरतक बैठा रखना नहीं चाहता, पर हाँ एक और बात है, यदि आप कहें तो निवेदन करें।

रामनाथ—नहीं नहीं जाने की जल्दी मत करो, देखो कितने दिन बाद तुमसे मुलाकात हुई है, तुम्हें देख कर कलेजा ठंडा हुआ, तुम्हें छोड़ने की जी नहीं चाहता। पर हाँ, आज बड़ी गरमी

है, इसीसे शरीर कुछ अलकसा रहा है। क्या कहते थे, कहो न।

बैजनाथ—आप इस जमीन को छोड़ना नहीं चाहेंगे, यह तो हम लोगों को पहिले ही से मालूम था, पर क्या इस जमीन के बदले हम लोग कुछ उम्मीद कर सकते हैं ? मेरी बिलकुल इच्छा नहीं है कि इसके लिए मामला मुकदमा किया जाय, जहाँ तक आपस में निपट जाय वही अच्छा है। अगर लाचार होकर अदालत जाना ही पड़ा तो आप ही विचार कर देखिए कि वहाँ यह जायदाद शामिल मिलकीयत साबित हो सकेगी या नहीं और इसका एक हिस्सा हमें मिल सकेगा या नहीं, यह खूब विचार कर देखिए, पर जहाँ तक आपस में निपट जाय वही अच्छा है। अदालत तक जाने की मेरी बिलकुल इच्छा नहीं है।

रमानाथ जानते थे कि बैजनाथ जरा उग्र प्रकृति का आदमी है, क्या ताज्जुब कि चट से नालिश ठोंक दे और उन्हें यह भी पता था कि सलाह बात के लिए वर्कालों के पास भी आना जाना कर रहा है। यह यदि मुकदमे का खर्च चला सका तो नतीजा क्या होगा यह भी अर्मान साहब से छिपा नहीं था, इसलिए आपस में निपटाने की बात से वह भी मन ही मन राजी थे। थोड़ा सा रुपया देकर विश्वनाथ का हक एकदम से खरीद लेंगे। यह राय पहले भी उन्होंने जाहिर की थी, पर जो रुपया देना चाहते थे वह बहुत ही कम था। अन्तु, अमीन साहब कहने लगे—देखो भाई, अगर अदालत-कचहरी जाना चाहो तो फिर हमें भी उसी प्रकार चलना पड़ेगा, मामले मुकदमे में बड़ा रुपया उड़ता है पर शायद अपनी जायदाद बचाने के लिए हम सब खर्च बरदाश्त कर सकेंगे, तुम कर सकोगे कि नहीं यह तुमही जानो और अगर वह

बातें छोड़कर सचमुच ही आपस में निपटाना चाहो, तो बसन्ती बेटी को हाथ उठा कर कुछ दे दूँगा इसमें भला मुझे क्या उज्र हो सकता है ? भाई, हम लोग तो पढ़े-लिखे नहीं हैं, मूलख आदमी हैं। तुम लोगों की तरह आईन कानून भी नहीं पढ़े पर हाँ बाँकीपुर में अदालत की अमीनी करते करते मेरे भी बाल सफेद हो गए हैं, मामले-मुकदमें भी सैकड़ों देखे सुने और आईन कानून भी कुछ कुछ समझते हैं। मामला लड़कर कोई बाजपेयी घराने की जायदाद का हिस्सा ले लेगा यह तो जरा टेढ़ी खीर है, अगर तुम्हारी मनसा हो कोशिश करके देख लो । पर हाँ, अगर सचमुच ही यह सब कुबुद्धि छोड़ दो, अगर कालेज की अंग्रेजी शिक्षा ने तुम्हें अपने बड़ों से झगड़ना न सिखाया हो, अगर बुद्धे बुद्धे लोगों पर थोड़ी बहुत श्रद्धा रख कर उनके आज्ञानुसार चलना सीखे हो तो कायदे की बात कहो उसमें मैं कभी भी सन्न करने का नहीं । देखो भाई, हम एक बात के आदमी हैं, बहुत हेर-फेर हमें अच्छा लगे न, हम करना जानें, हम एक ही बात पसन्द करते हैं सो अगर ३००) रुपए लेकर तुम इस जर्मन का हक्क बिलकुल छोड़ दो तो हम राजी हैं। जानते ही हो कि हम मामूली तनखाह की नौकरी करते हैं। ३००) कमाने में सिर का पसीना पैर पर पड़ता है, रुपया बड़ी मुश्किल से आता है। पर क्या हुआ, बसन्ती अपने घर की लड़की है, उसे अपने हाथ से पाल-पोस कर बड़ा किया, ब्याह करवाया, उसे रुपया देंगे यह और कौन सी भारी बात है ! मैंने तो बसन्ती का ब्याह करवाया था, न हो और एक गहना दिया सहा। एक गहने में भी तो दो-तीन सौ रुपया लग जाता ! सो देखा अगर बुद्धे की यह बात मंजूर हो तो कहो, नहीं तो

भाई तुम लोग पढ़े लिखे होशियार हो, जो अच्छा समझो करो ।

बैजनाथ—बाबूजी, ३००) रुपया तो बहुत होता है । उस जमीन में साल में २००) के धान की पैदावार है ।

रमानाथ—उसमें से बीज का दाम, मजूरी, जमींदार का लगान वगैरः देकर साल आखिरी में क्या बचत है, यह भी हिसाब किया है ।

बैजनाथ—हाँ, बचत तो थोड़ी ही है ।

रमानाथ—इस जमीन को संभाल रखने में हमें कितना खर्च करना पड़ा है, यह भी जानते हो ?

बैजनाथ—जी, नहीं, सो तो नहीं मालूम ।

रमानाथ—फिर किस तरह कहते हो कि दाम कम है ? देखो मैं और इस बारे में जवाब सवाल करना नहीं चाहता । मैं एक बात का आदमी हूँ, इससे ज्यादा नहीं दे सकूँगा । अगर ३०४) कहोगे तो भाँ देने का नहीं । जो मैंने कह दिया उसमें अगर राजी न हो तो जो सूझे करो ।

बैजनाथ ने थोड़ी देर तक सोचा । इतने कम दाम में जमीन छोड़नी पड़ती है, यह जान कर मन में बड़ा दुःख हुआ, पर फौरन ही बसन्ती की नेक सलाह का ख्याल आया, तब धीरे-धीरे बोले—जी, आपने कृपा करके जो दिया वही आपका बड़प्पन है, मैं उसी में राजी हूँ ।

रमानाथ का हमेशा का हँसमुख चेहरा इस समय कुछ रुखा हो आया था, यह उनकी बातचीत के ढङ्ग से ही कुछ कुछ मालूम पड़ चुक होगा, पर बैजनाथ की यह बात सुनते ही फिर पहले की तरह चेहरा खिल उठा वे हँसते हुए बोले—क्यों नहीं बेटा, तुम राजी हो जाओगे, यह तो मैं पहले

जानता था, तुम्हारे ऐसे समझदार लड़के क्या आजकल देखने को मिलते हैं ? न जाने कितना देख सुन कर तब बसन्ती के साथ तुम्हारा ब्याह किया था। हम क्या बिना अच्छी तरह देखे सुने कोई काम करने वाले हैं ? क्यों न हो, तुम अंगरेजी पढ़े लिखे हो, कालेज में शिक्षा पाई है, तुम नहीं अच्छे होगे तो क्या गांव-गांवई के छोकड़े अच्छे होंगे ? और पान खा लो ।

बैजनाथ—जी नहीं, आपके सोने का समय हुआ, अब जाता हूँ ।

रमानाथ—सोने का समय कहाँ हुआ ? मैं तो रात बारह बजे के पहले सोती ही नहीं, और कल रात को खूब सोया था, आज तो नींद ही नहीं आती ।

बैजनाथ मन ही मन हँसे पर कुछ बोले नहीं ।

रमानाथ बोले—और देखो तो, तुम इतने दिन बाद आए हो तुम्हें छोड़ कर के सोना ? बैठे बैठे दो बातचीत ही करूँ, देखो, रुपया लेकर एक दस्तावेज लिख देना ही अच्छा है । तुम तो अंग्रेजी पढ़े लिखे हो तुम्हारी बात ही सौ दस्तावेजों के बराबर है । पर जानते हो कि नहीं, एक कायदा चला आया है, उसे मानकर चलना ठीक है ।

बैजनाथ—हाँ क्यों नहीं, कोई भी काम हो कायदे के मुताबिक ही होना चाहिए ।

रमानाथ—सो तो है ही, तुम लोग अंग्रेजी पढ़े लिखे हो । तुम्हें क्या यह सब बातें समझा कर कहनी पढ़ेंगी, और तुम दस्तावेज लिख देते हो, बसन्ती दस्तखत करेगी, और तुम गवाह होगे तो फिर रजिस्टरी कराना तो काम बढ़ाना होगा, किन्तु मानते हो कि नहीं, एक कायदा चला आया है ।

बैजनाथ—जरूर, जरूर, गवाह बनूँगा, दस्तावेज की रजिस्टरी भी होगी, जो जो जरूरी काररवाइयाँ हैं सभी होंगी।

रमानाथ—क्यों नहीं, सो क्या तुम्हारे ऐसे समझदार लड़के को समझा कर कहना पड़ेगा ? और क्या जानते हो, दस्तावेज के स्टाम का खर्च है, रजिस्टरी आफिस में आने जाने का गाड़ी-भाड़ा सनाखत करने का खर्च, रजिस्टरी की फीस, इन कामों में भा ८) १०) तो लग ही जायगा। बसन्ती मेरे घर की लड़की है उससे मैं यह रुपया नहीं लेता, पर क्या करूँ यही ३००) हो मुझे भार सा जान पड़ता है इस पर से और एक पैसा भी देना कठिन समझो।

बैजनाथ जरा हँसे और मनहीं मन कहने लगे कि रमानाथ जो एक रात के नाचतमाशे में १००) रुपया खर्च कर देते हैं। १०) में मुझ गरीब की महीने भर की गृहस्थी चल जाती है, पर प्रकट रूप से बोले—हाँ हाँ, मैं सब खर्च देने को राजी हूँ”।

रमानाथ—क्यों नहीं, तुम्हारे ऐसे भले लड़के को क्या ये सब बातें कहनी पड़ेंगी।

और भी बहुत देर तक इधर उधर की बातें होती रही। चतुर रमानाथ ने एक एक करके सारे नियम अपने पक्षमें तै कर लिए। दुनियादारी के फेर से अनजान बैजनाथ जी ने किसो में भी कुछ उझ नहीं किया। डेढ़ पहर रात जाने के बाद रमानाथ ने बैजनाथ को बहुत कुछ तारीफ करके और बांकीपुर में बहुत जल्दी नौकरी लगवा देमे की प्रतिज्ञा कर उन्हें बिदा किया। बैजनाथ जी भी ससुर साहब के शिष्टाचार की बड़ाई करके घर लौट गये।

बैजनाथ जी घर आते हुए रास्ते में सोचने लगे कि सूदखोर जुल्मी बनिये से सूद का एक हिस्सा छुड़ा भी लिया

आ सकता है, पर धनीमानी चतुर अमीन साहब के पेट से एक पैसा निकालना जरा टेढ़ा खीर है। रमानाथ ने भी पलंग पर लेटकर अपनी गृहिणी से कहा—देखो तो, आजकल के कालेज में पढ़े लिखे लड़के कैसे गँवार हरामजादे होते हैं। यह बैजनाथ कहता है कि समुद्र के बड़े भाई से मुकदमा लड़े'गे। कहते लज्जा भी नहीं आती। जल्दी जहन्नुम में जायगा। मालकिन जी ने इन सब बातों पर कुछ कान नहीं दिया। वे अपने धनवान समझी का स्वप्न देख रही थीं।



डेढ़ पहर रात बीत गयी थी बैजनाथ जी ने घर पहुँच कर देखा कि बसन्ती खड़ी हुई उनका आसरा देख रही है। बैजनाथ जी को देखते ही उसका शान्त मुख खिल आया। आँखों में हँसी दिखाई दी, और पति की तरफ प्रेम भरी दृष्टि से देखती हुई बोली—बड़े भाग्य, कि अब आए। मैंने तो समझा था कि घर का रास्ता भूल गए या तारा की बात नहीं टाल सके, आज ताऊ जी के यहाँ ही रात बीतेगी।

बैजनाथ—क्यों क्या हुआ ? आज इतनी हँसी क्यों कर रही हो, क्या बड़ी रात हो गई ?

बसन्ती हँसती हुई बोली—नहीं, बहुत रात कहाँ, यही बम

आधी रात ही तो गई है ! संध्या से तुम्हारे एक दोस्त बैठे हुए तुम्हारा आसरा देख रहे हैं ।

बैजनाथ - कौन ? कौन ?

आओ देखो, यह कह कर बसन्ती आगे, और पीछे बैजनाथ चले । घर के भीतर पैर रखते ही एक गोरे रंग का युवक उठ कर उनकी तरफ बढ़ा । बैजनाथ ने उसे पहचाना नहीं, कुछ ठिठक रहे, फिर थोड़ी देर में पहचान कर बोले -ओ हो ! तुम हो शिवनाथ ! कलकत्ते से कब आए ? आः तुम कैसे बदल गए हो कि मैं एकाएक पहचान ही नहीं सका, मैंने बस तुम्हें तुम्हारी बहिन कामिनी के ब्याह के समय देखा था । उन दिनों तुम बांकीपुर में पढ़ते थे, बस उन्हीं दिनों जब एक दफे घर आए थे तब हमारी तुम्हारी मुलाकात हुई थी, तब तुम्हारी उम्र तेरह-चौदह वर्ष की थी, अब तो खासे जवान हो गए हो, दाढ़ी मूँछें निकल आई हैं, अब क्या सहसा पहचाने जाओगे ?

शिवनाथ—नौ-दस वर्ष में बहुत कुछ अदल-बदल हो जाता है इसमें क्या संदेह है ? बहिन के ब्याह के बाद ही बाबूजी का परलोक वास हुआ । उसके बाद माँ भी यहाँ से बांकीपुर गयी । इसी लिए फिर मेरा भी यहाँ आना नहीं हुआ । एन्ट्रेस पास करके कलकत्ते चला गया, इसलिए माँ भी अब यहाँ ही आ रही हैं । यही इसी गरमी की छट्टी में यहाँ आना हुआ है । नौ वर्ष बाद आप मुझे बदला हुआ पावेंगे यह तो कोई आश्चर्य की बात नहीं है । मैंने तब क्या देख था, अब क्या देख रहा हूँ । बसन्ती मुझसे दो बरस बड़ी है । हम दोनों बचपन में एक साथ खेलते थे । मैं बाजपेयी जी के घर जाता था बसन्ती चम्पा को गोद में लिये आती थी । अमरूद के पेड़,

के नीचे चम्पा को बैठा कर लब्धी से अमरुद तोड़ तोड़ कर खाती थी वही बसन्ती आज घर की गृहिणी, मालकिन, दो बच्चे की माँ हो गई है ।

बसन्ती भी हँसती हुई बोली—अपने गुणों का वर्णन नहीं करते, उत्पात के मारे कुंदनपुर में आम की बारी में आम नहा रहने पाता था, अब कलकत्ते जाकर कालेज के बड़े विद्यार्थी बने हो ।

शिवनाथ—बसन्ती, वह भी तुम्हीं लोगों के लिए । तुम्हारी ताईजी कच्चा आम खाने को मना करती थीं और मैं शाम को चहारदीवारी लांघ कर छिपे तारसे रसोईघर में आम दे आता था कि नहीं, बतलाओ ?

बैजनाथजी जोर से हंस कर बोले—रहने दो एक दूसरे के गुण बखान करने की क्या जरूरत है । मैं भी तुम्हारे घर जाता था चम्पा को भी कभी वहाँ देख लेता था । चम्पा उस समय चार पाँच वर्ष की बच्ची थी । क्यों चम्पा, शुक्लजी के घर जाने की बात याद है ? शिवनाथ की याद आती है ?

चम्पा—शिवनाथजी की बात कुछ कुछ याद आती है । शिवनाथ जी मुझे गोद में उठा कर अमरुद तोड़ कर खिलाते थे ।

इसके बाद बैजनाथजी ने बसन्ती से पूछा—तुम लोग सब कोई खा पी चुकी हो । शिवनाथ ने खाया ?

शिवनाथ—हाँ ! बसन्ती बहिन ने आज जैसी कच्चे आम की चटनी खिलाई है, वैसी कभी भी नहीं खाई थी ।

बसन्ती—क्यों, नौ वर्ष पहले जब इस पेड़ से उस पेड़ पर छलांगे मारा करते थे, तब ?

शिवनाथ—हाँ, तब खाई थी सही, पर उस समय तो ऐसी कोई रसोई बना देने वाली नहीं थी ।

बसन्ती—नहीं क्यों ?

बैजनाथ—चम्पा खा चुकी ? तुम खा चुकी ?

बसन्ती—चम्पा खा चुकी है, मैं यही खाने चली । तुम और कुछ नहीं खाओगे ?

बैजनाथ—अरे राम ! और क्या कुछ खा सकूँगा । तुम्हारे ताऊ जी के यहाँ से जो पेट भर के खा आया हूँ ? जाओ तुम खाओ पियो, बड़ी रात गई ।

बसन्ती चौंके की तरफ चली । चम्पा बैजनाथ जी के लिये अब तक जाग रही थी, अब चबूतरे पर चटाई बिछाकर लेटते ही सो गई । चन्द्रमा की शीतल चाँदनी और ठंडी हवा के झंकारों ने उसे शीघ्र ही गहरी नींद में सुला दिया । सारा कुन्दनपुर गाँव इस समय चाँद की ठंडी चाँदनी और ठंडी हवा से चुपचाप सोया पड़ा था ।

बैजनाथ और शिवनाथ दोनों उसी चबूतरे पर बैठे हुए देर तक बातचीत करते रहे । बाजपेयी और शुक्ल जी के घराने में पहले पहले विवाह का सम्बन्ध हुआ था । बैजनाथ और शिवनाथ दोनों की बचपन की मुलाकात और मुहब्बत थी । आज थोड़ी सी बातचीत करने पर बैजनाथ को शिवनाथ की धीर प्रकृति, बुद्धिमत्ता, हृदय प्रतिज्ञा और उन्नत-हृदय का पता लग गया । शिवनाथ भी अपने बाल्य सखा के उन्नत तेज पूर्ण अन्तःकरण का परिचय पाकर परम सन्तुष्ट हुए । स्वभावतः मनके अनुकूल मनुष्य को देख कर ही हृदय उसकी तरफ दौड़ जाता है, बैजनाथ और शिवनाथ को बातचीत में जितना ही समय बीतने लगा उतना ही दोनों का दिल एक दूसरे की

तरफ खिंचने लगा। बैजनाथ शिवनाथ को छोटे भाई की तरह स्नेह करने लगे, और शिवनाथ को उनके प्रति बड़े भाई ऐसी भक्ति और श्रद्धा हो आई। इन लोगों की बातचीत हो रही थी कि इसी बीच में बसन्ती खा पी कर वहाँ आ बैठी। चम्पा के सिरहाने तकिया नहीं था इसलिए सोई हुई बहिन का सिर अपने घुटने पर रख कर उसके घुंघराले गुच्छेदार केशों को स्नेह से सँवारने लगी।

देर तक बातचीत करने के बाद बैजनाथ ने पूछा—तुम तो अब एफ० ए० में पढ़ रहे हो। छः सात महीने ही में तुम्हारी परीक्षा होगी। फस्ट डिवीजन में पास होगे और स्कालरशिप मिलेगी इसमें तो कोई संदेह ही नहीं। इसके बाद क्या करने का विचार है ?

शिवनाथ—अभी कुछ भी ठीक नहीं है। मेरी बी० ए० तक पढ़ने की इच्छा है। पर माँ गाँव में रहती हैं। वे कहती हैं कि बस यही परीक्षा देकर गाँव में आकर रहो अपनी जमीन-जायदाद देखो भालो। देखिये क्या होता है। जायदाद भी कुछ ऐसी विशेष नहीं है, साल में सात आठ सौ से ज्यादा मुनाफा नहीं है। अगर कोई अच्छी नौकरी लग गई तो कर लूँगा। नौकरी लगने पर माँ भी वहाँ मेरे साथ रहेगी।

बैजनाथ—वह तो जो कुछ होना होगा तुम्हारी परीक्षा के बाद होगा। कलकत्ते रह कर खूब मन लगा कर लिखो पढ़ो। जैसे सम्मान के साथ एट्रेन्स पास किया है वैसे ही एफ० ए० भी पास करो।

शिवनाथ—इच्छा तो ऐसी ही है। शीघ्र ही कलकत्ते आकर पढ़ना शुरू करूँगा। मैं मन ही मन सोचता हूँ कि आप लोग भी एक बार कलकत्ते क्यों नहीं चलते, क्या सारा

जन्म यहीं गाँव में ही बिताइएगा। आज नौ वर्ष हुए आपने कई महीने कलकत्ते में बिताये थे। बसन्ती ने भी कभी कलकत्ता देखा नहीं। एक बार दोनों जने चलिये तो कैसा? धान की रोपाई हो जाने के बाद ही आइए। आकर हमारे डेरे पर रहियेगा। फिर भादों महीने में धान कटने के समय चले आइएगा।

बैजनाथ—शिवनाथ, तुम हम लोगों से प्रेम रखते हो, इसीलिए यह कह रहे हो। मैं भला कलकत्ता जाकर क्या करूँगा? तुम तो पढ़ोगे, परीक्षा दोगे, नौकरी करोगे, मैं क्या करूँगा?

शिवनाथ—क्यों आप क्या किसी तरह की कोशिश नहीं कर सकते? इतना पढ़ लिख कर क्या सारी जिन्दगी यों ही बिता दिजीयेगा। सुना है कि कालेज छोड़ने के बाद आपने बहुत सी किताबें देखी हैं। असली शिक्षा तो इसे ही कहते हैं। आप की शिक्षा धैर्य के साथ परिष्कृत करने का अभ्यास, और सदाचार इत्यादि का क्या कुछ भी फल नहीं होगा?

बैजनाथ—शिवनाथ! मेरी शिक्षा विशेष नहीं है। जब और कोई काम नहीं रहता तो बैठा बैठा पुस्तकें पढ़ा करता हूँ। और कलकत्ते ऐसे भारी शहर में मेरी तरह गुणवान विद्वान लोग नौकरी के लिए टकराते फिरते हैं मैं जब कालेज में था देख चुका हूँ। यदि गुण हो भी तो इतने लोगों के बीच गुण का परिचय देना भी कठिन है, फिर मेरे ऐसे गुणहीन आदमी तीन चार महीने में कुछ भी न कर सकेगा।

शिवनाथ—किन्तु वहाँ जाने में हर्ज नहीं है। आप लोग यदि कृपा करके मेरे डेरे पर रहेंगे तो आपका भी कुछ ऐसा खर्च नहीं होगा, सब लोग एक बार कलकत्ता देख भी लेंगे

और आप भी एक बार उन्नति की चेष्टा कर देखियेगा, मुझे पूरा भरोसा है कि विशाल जन-समुद्र के बीच आप की शिक्षा सदगुण, सचाई शीघ्र प्रकाशित होगी और उसका फल मिलेगा। खैर, यदि कुछ न भी हुआ, तो घर लौट आइएगा, इसमें नुकसान ही क्या है ?

वैजनाथ कुछ देर तक सोचते रहे, फिर बोले—शिवनाथ, तुम हम लोगों को अपने डेरे पर रखना चाहते हो, यह तुम्हारी बड़ी कृपा है, पर यदि सचमुच ही हम कलकत्ते गए तो अलग मकान लेकर रहेंगे तुम्हारे पढ़ने लिखने के बाधक नहीं होंगे। खैर जो हो, आज रात ही को तो तय हो नहीं जाता। रमानाथ जी बांकीपुर जाने को कह रहे हैं, तुम कलकत्ता जाने को कहते हो मेरी भी इच्छा है कि एक बार कहीं जाकर उन्नति की चेष्टा करके देखूँ। जरा सोच विचार कर तुम्हारी सलाह से कुछ निश्चय करूँगा।

शिवनाथ बसन्ती, तुम्हारा क्या इरादा है ? क्या एक बार कलकत्ता देखने को जी नहीं चाहता ?

बसन्ती—चाहता तो बहुत है, पर हो सके तब तो। और सुनता हूँ कि वहाँ बड़ा खर्च होता है। हम लोग साधारण आदमी ठहरे, इतना रुपया भी कहाँ से लावें।

शिवनाथ—अपने मन से चाहे जितना खर्च कर दो, नहीं तो कुछ ऐसा खर्च नहीं है। मैं ठाँक कहता हूँ कि अगर वहाँ जाकर आप लोग मेरे डेरे पर रहेंगे तो मेरी पढ़ाई में कुछ भी बाधा नहीं पड़ेगी, और कभी कभी जब पढ़ते पढ़ते मन रुकता जाता है तो अपने आदमियों से बातचीत करके मन फिर हरा हो जाता है।

बसन्ती - हाँ, क्यों नहीं, और जब पढ़ने का समय होगा, तब घर के भीतर आकर लड़कपन के अमरुद तोड़ने का गप्प हाँकना शुरू करोगे । इसमें खूब पढ़ाई-लिखाई होगी ।

शिवनाथ—और जब कभी रोटी से अरुचि होगी तो कच्चे आम की चटपटी चटनी भी तो चखने को मिलेगी; मैं तो देखता हूँ कि मुनाफा ही ज्यादा है ।

बसन्ती—हाँ, क्यों नहीं । आजकल तुम्हारा नसीब जग रहा है ! वही कल तो सुना था कि चटनी बनाने वालो जल्दी आने वाली है ।

शिवनाथ—कौन ?

बसन्ती—वाह ! मानो कुछ जानते ही नहीं हो ? माँ जो तुम्हारे ब्याह की तजबीज कर रही हैं ।

शिवनाथ—कुछ लज्जित होकर बोले—यह सब किसी काम की बात नहीं है ।

बैजनाथ—क्या तुम्हारी माँ ने तुम्हारा ब्याह कहीं ठीक किया है ?

शिवनाथ—माँ तो इतनी कुछ जिद नहीं करतीं, पर बहिन की बड़ी इच्छा है कि मेरा जल्दी ब्याह हो जाय और वही बांकीपुर में या और कहीं लड़की ठीक कर रही हैं । परसों से जब से यहां आई हैं माँ को भी पट्टी पड़ा रही है, पर मैंने माँ से भी और बहिन से भी कह दिया है कि बिना यह परीक्षा दिए और बिना कुछ रोजगार का ठिकाने लगे मैं ब्याह नहीं करूँगा ।

बसन्ती—अश ! कामिनी से भी भेंट हुए बहुत दिन हुए । लड़कपन में तारा, मैं और कामिनी तीनों एक साथ खेलती

थी, कामिनी मुझ से छः महीने छोटी है और तारा कामिनी से छः महीने छोटी है। हम तीनों सदा एक साथ रहती थीं, पर अब देखो, बरस बरस छः छः महीने बीत जाते हैं मिलना नहीं होता ! कल एक बार तुम्हारे घर जाऊँगी, और तारा से भी मिल आऊँगी ।

शिवनाथ--बहिन, कल तारा के यहाँ जायगी, बसन्ती, बेबे तुम भी वहीं चली जाना, तानों की एक ही जगह मुलाकात हो जायगी ।

बसन्ती--हाँ, यह तो और भी अच्छा है। अहा ! मुझे कामिनी से मिलने की बड़ी इच्छा हो रही है। मेरे व्याह के पहले कामिनी का व्याह हुआ है, अहा, तब से बेचारी कितना दुःख पा रही है। अच्छा शिवनाथ, तुम्हारी माँ ने जान सुन कर ऐसे घर लड़की क्यों दी ? व्याह पर लड़के को देखा था, लोग कहते थे कि उसकी उम्र चालिस वर्ष की थी।

शिवनाथ--बसन्ती बहिन, यह बात मत पूछो। माँ की इच्छा नहीं थी, पर अड़ोसी-पड़ोसी, ब्राह्मण पुरोहित सब जिद करने लगे। कहने लगे कि लड़के का घराना बड़ा अच्छा है, जात बड़ी अच्छी है, इस जिले में ऐसा कुलीन लड़का मिलना कठिन है, बाबूजी ने भी सम्मति दे दी, फिर भला माँ क्या करती। व्याह होने के बाद से सदा माँ यही कहती रहती हैं कि लड़की को पानी में बहा दिया। हमारे बहनोई साहब की उम्र इस समय करीब पचास वर्ष की है, सदा बीमार रहते हैं, उनकी गृहस्थी की बीसों टहलनियाँ में मेरी बहिन को भी एक टहलनी समझ लो। सबेरे से सन्ध्या तक धन्धा करती रहती है और दोनों बेला पेट भर खा छोड़ती है। बहिन उसी में राजी है। बेचारी सीधी-सादी लड़की के मनमें और किसी तरह की

अकांक्षा नहीं है।

कामिनी की अवस्था का ख्याल करके बसन्ती की आंखों में आंसू आ गए। बहुत देर के बाद शिवनाथ बोले--अच्छा तब आज मैं जाता हूँ, बहुत रात गई। फिर कल भेंट होगी और जब तक मैं यहाँ हूँ कभी-कभी तुम्हारे कच्चे आम की चटनी चखने जरूर आया करूँगा, और अगर कृपा करके तुम लोग कलकत्ते चलो तो फिर कहना ही क्या है ?

बसन्ती ने हंसते हुए कहा - अच्छा जाओ, कलकत्ता जाने न जाने की बात कल तय होगी, पर जाना हो या न हो, तुम्हारे लिए एक चटनी बनानेवाली का इंतजाम करना पड़ेगा। कल तुम्हारी बहिन से इसकी सलाह पकी कर लूँगी। कुछ चिन्ता मत करो।

हंसते हुए शिवनाथ बसन्ती और वैजनाथ से बिदा हो कर बाहर आए। चम्पा तब भी सोई हुई थी दो पहर रात की निर्मल चाँदनी में उसके फूल सरीखे लज्जित होठ दोनों खिले हुए थे। चिकने-चिकने काले-काले घुँघराले बाल गहरे गहरे गोल भुजाओं पर बिखर रहे थे। सरला बालिका बिल्ली के बच्चे के साथ खेलने या बचपन में अमरुद खाने का स्वप्न देख रही थी।

घर से बाहर निकल कर शिवनाथ थोड़ी देर तक निर्मल आकाश की तरफ देखते हुए मन ही मन कहने लगे--मैंने बांकी-पुर और कलकत्ते में सैकड़ों गृहस्थ और धनियों के परिवार देखे हैं, पर आज इस अदने से गांव के सामान्य घर में जैसी सरलता, सच्चाई, असली स्नेह प्रेम और धर्म देखा वैसा कहीं देखने में नहीं आया। भगवान ! वैजनाथ जी का परिवार सदा फले फूले और सब आपदाओं से दूर रहे। लड़कपन से अकेले

रहते रहते और बराबर पढ़ने लिखने में लगे रहने से मेरी जिंदगी निरस ऐसी हो गई है, मेरे हृदय की कोमल वस्तियां सब सूख गई हैं। अहा ! बैजनाथ जी के प्रेम और बसन्ती बहिन के स्नेह से मानो मेरा सूखा हृदय आज फिर हरा हो आया, भगवान करें कि इस पवित्र स्नेह पूर्ण परिवार के पास रह कर मैं फिर से मनुष्योचित स्नेह और प्रीति लाभ कर सकूँ। इसी तरह की चिन्ता में डूबे शिवनाथ घर की तरफ चले।

—*—

८

दूसरे दिन तड़के ही बसन्ती उठ कर घर-द्वार में भाड़-बुहारू कर के पीछे की पोखरी में बासन माँज रही थी कि इसी बीच में किसी ने घर का दरवाजा खटखटाया। बैजनाथ या चम्पा किसी की नोंद नहीं खुली थी, इस लिए बसन्ती ने बासन माँजना छोड़ कर भीतर आकर द्वारा खोल दिया तो देखा कि खिलावन की स्त्री आई है। बसन्ती बचपन ही से खिलावन की स्त्री को बड़ी बहिन कहकर बुलाती थी, अबभी उसी नाम से बुलाया करती थी, सो उसके आते ही बोली “कौन बड़ी बहिन, आज इतने तड़के ही कैसे आई यह तुम्हारे हाथ में क्या है ?”

खिलावन की स्त्री—यह कुछ नहीं है, बचची इच्छा हुई कि आज सबेरे जाकर मिल आवें। चम्पा को चीनी से जमाया हुआ दही बड़ा अच्छा लगता है, कल रात को दही जमा रखा था वही चम्पा के लिए ले आई हूँ। चम्पा उठी हैं ?

बसन्ती—नहीं अभी नहीं उठी है। हैं, तुम लोग गरीब आदमी ठहरों, रोज रोज इतना दूध-दहो क्यों ले आती हो ?

खि-स्त्री—नहीं जी, यह कौन सी बड़ी चीज है। यह घर की गाय भी तो आप लोगों की ही है, मेरा घर-द्वार भी सब तुम्हारे ही हैं, तुम्हारे ही भरोसे तो दो मुट्ठी अन्न खाकर हम जीते हैं, सो अपनी चीज तुम नहीं खाओ पीओगी तो कौन खायगा ?

बसन्ती—अच्छा बहिन, दही छोके पर लटकाकर रख दे। भात के साथ खाऊँगी। चम्पा को रुचता है ! ऐं, क्या ! तुम्हारी आंख में पानी क्यों ? रोती हो क्या।

सचमुच ही खिलावन की स्त्री आंखों से टपाटप आँसू की धारा बहाती हुई ऊँहूँ ऊँहूँ करके रोने लगी। खिलावन बेचारा बड़ी दिक्रत से अपनी गृहिणी जी के शरीर के मुताबिक धोती जुटाता था, पर उतनी बड़ी धोती से भी लम्बी चौड़ी गृहिणी का शरीर ढकता नहीं था, फिर आंख पोछने को आँचल कहाँ से आवे। खैर, किसी तरह रोना कुछ रुका, पर आँसू की धारा एक बार चली तो फिर रुकती न थी, खिलावन की पत्नी फिर ऊँहूँ करके और भी ऊँचे स्वर से रोने लगी।

बसन्ती—ऐं, तुम तो अच्छी है, रोती क्यों हो ? खिलावन अच्छा तो है।

खि-स्त्री—अच्छा क्यों न रहेगा। निकम्मे आदमी तो अच्छे रहेंगे।

बसन्ती—तेरा लड़का तो अच्छा है ?

खि. स्त्री—हाँ, तुम्हारे असोस से सब अच्छे हैं।

बसन्ती—फिर सबेरे सबेरे रोना ठीक नहीं क्या हो गया है ?

खि-स्त्री—यही सवेरे सुकुल जी के घर गई थी जी, तो वहां-
कैंहूँ-हूँ ।

बसन्ती—वहां क्या हुआ, क्या किसी ने कुछ कहा है,
गाली दी है ?

खि-स्त्री—नहीं, गाली भला कौन देगा ? क्या किसी का
कुछ मैंने बिगाड़ा है या किसी का जमा मारा है ? हम लोग
गरीब हैं तो क्या, अपनी मान-इज्जत से हैं, किसी की क्या
मजाल है, जो गाली देगा ?

किसान की स्त्री के स्वामीभक्तिसूचक, दर्प-पूर्ण वचन
सुनकर बसन्ती जरा सा हँसती हुई बोली—यही तो मैं
पूछती हूँ कि रोती हो क्यों ? क्या खिलावन ने कुछ कहा है ?

यह सुनते ही खिलावन की गृहिणी का पँच हत्था शरीर
क्रोध में कांपने लगा, आंख लाल हो आई और गुस्से से भरी
हुई उपने जो कुछ कहा उसमें से केवल इतनी ही बात सुनाई
पड़ी 'बुढ़ा, मुहँजला मुझे क्या कहेगा ? उसे क्या अपनी जान
का डर नहीं है ! किस मुँह से कहेगा ? उसकी गृहस्थी कौन
चला रही है ? घर का धन्धा कौन करती है ? मैं न होती तो
वह किस चूल्हे में जाता ? नहीं जी कुछ हुआ नहीं है, वही
आज सवेरे सुकुलजी के घर सुना—उहूँ-हूँ ।

बसन्ती—अच्छा, यह बखेड़ा रहने दो । मैं तो अब खड़ी
नहीं रह सकती । बर्तन सब मांजने को पड़े हैं, चूल्हा सुलगाना
है, अभी लड़के उठते ही दूध मांगेंगे ।

यही बात हो रही थी कि चम्पा सवेरे की खिली हुई
पद्मिनी की तरह आंख पोंछती हुई आ खड़ी हुई । बसन्ती ने
कहा यह लो चम्पा उठो, आज इतने तड़के ?

चम्पा—बहिन, आज तड़के ही नींद खुल गई। एक बड़ा मजेदार सपना देखा, इसीलिये नींद टूट गई।

बसन्ती—कैसा सपना ?

चम्पा—ऐसा मालूम पड़ा, मानो हम लोग फिर बचपन की तरह शिवनाथजी के घर अमरूद खाने गई हैं। तुम तोड़ तोड़ कर खा रही हो और शिवनाथजी मुझे गोद में लेकर अमरूद तोड़ रहे हैं, उसी समय सहसा पैर फिसल जाने से बे गिर पड़े। ऊँ, ऐसी चोट लगी है।

बसन्ती—अरे यह क्या ? क्या सपने में गिरने से भा चोट लगी है।

चम्पा—हां, बहन, ऐसा ही मालूम पड़ा कि मानो बड़ी चोट लगी है, शिवनाथ जी मानो पेड़ तले उसी गढ़हे में गिर गए।

बसन्ती ने हंसते हुए कहा—ओ हो ! ऐसी दुर्दशा ! आज शिवनाथ को आने दो तो पूछूंगी कि उनके पैर में दर्द तो नहीं है, हाथ-पैर तो नहीं टूटे ?

चम्पा—नहीं बहन नहीं टूटा।

बसन्ती—तू ने किस तरह जाना।

चम्पा—क्यों, फिर जो उसी समय उठकर मुझे गोद में ले कर अमरूद तोड़ने लगे।

इसबार बसन्ती खिलखिला कर हँस पड़ी और बोली—शाबास शिवनाथ ! आज आने दो, उनके सब गुण प्रकट करूंगी।

हँसी बन्द होने के बाद फिर बोली। बड़ी बहन आज तेरे लिए चीनी से जमाया हुआ दही लाई है, भात के साथ खाना। छींके पर लटकाकर रख आओ। मैं तब से चुल्हा जलाऊँ, लड़कों के उठने का समय हो गया।

सरला बालिका घुंभरासे केशों को नचाती हुई वही लेकर छींके पर रख आई, और फिर ताल के किनारे दौड़ गई। बसन्ती भी चौके में जाने की तैयारी करने लगी, तब तक खिलावन की पत्नी ने आंसू पोंछ जरा गला साफ करके फिर कहा—क्यों बच्ची, बात क्या सच है !

बसन्ती—कौन सी बात ?

खिन्त्री—यही जो सुना है ?

बसन्ती—क्या सुना है रे ?

खिन्त्री—हाँ, तो सच्ची होगी ? अहा ! इतने दिनों के बाद क्या भाग्य में यही था। अहा ! चम्पा को जिस दिन नहीं देखती, कलेजा फटने लगता है।

‘यह कह कर खिलावन की पत्नी खूब जोर जोर से रोने लगी। जिस वृहत् शरीर पर खिलावन डरता हुआ निगाह उठाता था और सदा डरता हुआ पूजा करता था, वही शरीर रोने के वेग से काँपने लगा। घर में वैजनाथ सोए हुए थे, पहले तो उन्हें भूमिकंप सा मालूम पड़ा, फिर ऊँचे स्वर का रोना सुनकर नींद खुल गई, तुरन्त ही शय्या से उठ कर चिला उठे—घर में कौन रो रहा है ?

यह कहते हुए वे घर से बाहर आए। आकर बसन्ती से पूछा—सबेरे सबेरे घर में रो कौन रहा है।

बसन्ती—कोई नहीं, यही बड़ी बहन न जाने कहां से कुछ घुरी खबर सुन आई है, और रो रही है।

वैजनाथ—यह कौन, खिलावन की औरत है ? क्या हुआ है रे ? घर में कुछ अमंगल तो नहीं हुआ ? कोई बीमारी तो नहीं हुई ?

खिलावन की स्त्री ने मालिक को देख कर गले का स्वर बन्द किया, आंसू पोंछे, कपड़ा खीच-खाँचकर किसी तरह घूँघट काढ़ कर खखार कर गला साफ किया, फिर आंसू पोंछती हुई धीरे से बोली—नहीं महाराज, कुछ अमंगल नहीं यही एक बात सुनी थी, वही पूछने आई हूँ ।

बसन्ती—पर वह बात क्या है, मैं तो अब तक जान ही न सकी ।

बैजनाथ—औरतों की बातें औरतें ही जानें, हम जाते हैं शिवनाथ से एक दफे मिलने जाना है ।

यह कह कर हंसते हुए बैजनाथ घर के बाहर चले गए ।

खि-स्त्री—ओः ओः ठीक है, मैंने जो सुना है, वही ठीक है !

बसन्ती—ऐं, तेरे सिर पर आज कुछ चढ़ा है क्या ? ऐसा क्यों कर रही है ?

खि-स्त्री—वही, शिवनाथ महाराज के घर आज सबेरे जो सुना ।

बसन्ती—अरे क्या सुना है, बताओ तो ।

खि-स्त्री—अच्छा बताता हूँ, गरीब की बात से नाराज मत होना । झूठ सच नहीं जानती, वही सुकुलजी के नौकर ने मुझसे कहा—तभी से मेरा कलेजा दो दो हाथ उछल रहा है ।

बसन्ती—अपने धन्धे में जाती हूँ ।

यह कर बसन्ती चौके की तरफ चली ।

अबकी खिलावन पत्नी बसन्ती का आँचल पकड़ कर खड़ी करके बोली—नहीं जी, क्रोध मत करो, तुम लोगों के लिए जी कैसा-कैसा करता है, इसीलिए आई हूँ, नहीं तो दूसरे के लिए क्या आती । अहा चम्पा को एक दिन न देखूँ तो मन कैसा—

बसन्ती उसकी बातों पर ध्यान न देकर चौके की तरफ चली गयी । खिलबन की स्त्री भी पीछे पीछे चौके के पास दरवाजे से सटकर खड़ी हो गयी और कहने लगी— नौकर ने कहा कि तुम हम लोगों को छोड़कर कलकत्ता जा रही हो । अहा ! बचपन में तुम्हें खिलाया है, तुमसे फिर भेंट नहीं होगी ? अहा ! चम्पा मुझे कितना चाहता है, चम्पा को कैसे पाऊँगी ? ऊँ हूँ, हूँ ।

बसन्ती कुछ क्रुद्ध हो गई थी, पर अब हँसी रोक न सकी, बोली—ऐं रे, इसी बात के लिए इतनी देर से ऐसा कर रही थी ? जाने का अभी तो ठीक नहीं हुआ है । शिवनाथ कल कहते थे, हम लोग तो अभी सोच विचार कर रहे हैं ।

खि-स्त्री—अरे राम ! भला कोई जाना चाहेगा ? सुनती हूँ कि कलकत्ता जाने से जाति मारी जाती है, वहाँ जाति-पांति का कुछ विचार नहीं है, हिन्दू-मुसलमान के छूआछूत का विचार नहीं, ऐसे शहर में भी भला कोई जाता है ? तुम्हें कमी किस बात की है यहीं बैठी हुई राज करो । शिवनाथ महाराज को क्या, उनको तो घा-गृहस्थो नहीं है जोरु बेटा नहीं है, कालेज में पढ़ते हैं । कालेज के लड़के जो न करें सो थोड़ा । कालेज के लड़के समुद्र पार विलायत जाते हैं ।

बसन्ती—हाँ रे ! समुद्र पार होकर विलायत जाना होता है ।

खि-स्त्री—अरे माँ गंगा सागर में तो बड़ी बड़ा लहरें उठती हैं, उसमें क्या आदमी की जान बचती है ? लंका से क्या कोई लौटा है ? तुम्हें विलायत जाने का भी काम नहीं, कलकत्ते जाने का भी काम नहीं, घर की लक्ष्मी घर ही में रहो । अच्छा तब मैं जा रही हूँ ।

बसन्ती दूध औटती हुई बोली—अच्छा जाओ ।

खिन्त्री—और दही कैसा है खाकर बताना । चंपा क्या कहती है बताना ।

बसन्ती—हाँ, बताऊँगी ।

खिलावन की स्त्री दो चार कदम जाकर फिर लौट कर बोली—गरीब की बात टालना मत । कहीं कलकत्ते सलकत्ते मत जाना । घर को लछ्मी घर उजेला किए बैठी रहो ।

बसन्ती—देखा जायगा । हम लोगों के जाने का कुछ निश्चय नहीं हुआ है, अगर गए भी तो थोड़े दिनों के लिए जायँगे फिर धान काटने के समय आ जायँगे । गांव छोड़ कर भला हम लोग कहीं रह सकते हैं ?

खिलावन की स्त्री कुछ सन्तुष्ट होकर धीरे धीरे घर की तरफ चली । सवेरे उठकर खाठ पर गृहिणी जी को न देख कर खिलावन कुछ सोच में पड़ा हुआ था । मालूम नहीं कि खिलावन को पत्नी के विरह ने सताया या आज सवेरे सवेरे जोरु जी की जूती से जान बची यह जान कर उसने अपने भाग्य को सहारा पर दुःख या सुख चाहे जो हो, वह क्षणमात्र का था, क्योंकि सूरज की धूप के साथ ही गृहिणी जी के पंचहत्थे शरीर की छाया आंगन में पड़ी, और उनके गले का स्वर सुन कर खिलावन बेचारा सहम गया ।

उसी दिन दोपहर को बसन्ती की पड़ोसिन मुनिया ग्वालिन अपनी विधवा पतोहू के साथ बसन्ती से मिलने आई । जब तक मुनिया का लड़का जीता था ये लोग आराम से थीं, चार-पाँच गायों का दूध होता था, उसे बेचकर और थोड़ी सी जमीन थी, उसकी जोताई-बोआई से इन लोगों का गुजारा मजे में होता था । पर लड़के के मरने के बाद छोटी सी विधवा का बोझा सिर पर आ पड़ा, इसलिए स्वयम्

मुनिया जमीन का इन्तजाम न कर सकी, दूसरे को ठीका दे दिया। मामूली लगान मिलने लगा, गाय भी सब बिक गई, दो एक रह गई। अब उन्हीं का दूध बेचकर किसी तरह दोनों सास-पतोहू अपना गुजारा करती थीं। सास-पतोहू दोनों सदा बसन्ती के यहां आया जाया करतीं और जब कभी बसन्ती के बच्चे बीमार होते या उसको जरूरत पड़ती तो घर के बहुत से काम-धन्धे भी कर देती थी। बसन्ती कुछ ऐसी धनवान तो थी ही नहीं जो इन लोगों की विशेष सहायता करती, पर हाँ, साल आखरी में जब धान कटकर आता तो थोड़ा सा पड़ोसिन के यहाँ भेजवा देती, कभी कभी बुढ़िया के लिए दो एक पुरानी धोती घर से निकाल देती, या बुढ़िया बीमार होती तो कभी जरा-सा सागूदाना, मिश्री या क्यूनाइन की पुढ़िया भेजवा देती थी। बेचारी गरीब औरत इतने ही से बसन्ती का बड़ा उपकार मानती और आफत-बिपत के समय बसन्ती के स्नेह-पूर्ण मीठे वचनों से अपने सब दुःख भूल जाती और उसे जी जान से चाहती थी। बसन्ती गांव छोड़कर कलकत्ता चली जायँगी यह सुनकर मुनिया बहुत कुछ रोई धोई। बसन्ती ने उसे समझा बुझाकर दिलासा दे और उसकी पतोहू को एक पुरानी धोती देकर बिदा किया।

मुनिया के जाते ही, पनारू जुलाहे की स्त्री बसन्ती से मिलने आई। इसका रंग बड़ा काला और शरीर बड़ा दुबला-पतला था, बहुत काम-धन्धा नहीं कर सकती थी, इसलिए हरदम सास की बकनी लात मार खती थी। गण वर्ष इसकी पीठ में बड़ा दर्द हो गया था। जाड़े का दिन था, कमजोर होने के कारण तालाब से पानी का गगरा ढोकर ला नहीं सकती थी, इसलिए सास ने दो तीन भाड़ के ऐसे हाथ

दिए कि बेचारी की पीठ का चमड़ा फट आया। यह बेचारी किसके पास जाय, रोती हुई बसन्ती के पास आई। बसन्ती के पास इतना रुपया कहाँ कि इसको दवा मँगवा दे। पर रोज धूप में बैठाकर उसकी पीठ में किरासन तेल की मालिश कर देती थी। इसीसे चार पांच दिन में पनारु की जोरु का दर्द जाता रहा। तभी से जब कभी फुरसत मिलती, यह बसन्ती के पास आ बैठती थी।

पनारु की स्त्री के जाते ही, कहाँरों के मुहल्ले से मानकी कहारिन बसन्ती के पास आ बैठी। मानकी का स्वामी पालकी ढोता था, दो पैसे की आमदनी थी, पर जो कमाता था शराब पीकर उड़ा देता था, घर आकर रोज जोरु को मारता, उत्पात करता था। बसन्ती ने एक रोज वैजनाथजी से कह कर उसे खूब डाँट डपट कर दिया, तब से कुछ तो वैजनाथजी और कुछ बसन्ती के ताऊ रमानाथजी के डर से, शिवचरण कहार ने अपना जुल्म कम किया। मानकी विचारी की जान बची। आज मानकी अपने छोटे बच्चे को एक नया कुरता पहिनाकर गोद में लिए बसन्ती से मिलने आई है। आते ही बोलो—अबकी तुम्हारे असीस से हाथ में दो चार रुपये आये हैं, बहुत दिनों से घर की मरम्मत नहीं हुई थी, सो इस साल नई छाजन डलवाई है, और देखो बच्चे के लिए आरा से यह नया कुरता लाई हूँ। बसन्ती ने लड़के को आशीर्वाद देकर विदा किया।

इसके बाद गांव की यशोदा मिश्राणी, पारो मालिन, घसीटी धोबिन आदि औरतें बसन्ती का कलकत्ते जाना सुनकर आईं और रोने धोने लगीं।



शाम को बसन्ती ताई जी के यहाँ गई और बहुत दिनों पर लड़कपन की सहेलियां तारा और कामिनी से मिल कर बड़ी खुश हुई। तीनों बचपन की सहेलियां इस समय अलग अलग तीन गृहस्थियों की स्वामिनी हुई हैं, पर बचपन का स्नेह, लड़कपन का प्रेम सब के हृदय में ज्यों का त्यों बने हुए हैं। बहुत दिनों पर तीनों का मिलाप हुआ है, इसलिए दोपहर तक का समय केवल ससुराल की बातें, गृहस्थी का हाल-चाल और संसार के दुःख-सुख की कथा ही में बीत गया। कामिनी बचपन से ही बड़ी काली थी, बसन्ती से उसका रंग ज्यादा श्याम था, अब भी सूखे हुए मुँह और दोनों शान्त आंखों से एक तरह का भोलापन टपकता है। पर मुँह बड़ा सूखा है, आंखें दोनों धँस गई हैं, गले की हड्डी दिखाई दे रही है, सूखे पतले हाथों में सोने के पोले कड़े पड़े हैं और गले में एक जंतर लटक रहा है कपड़े भी साधारण हैं, और सिर के सामने का बहुत से बाल उड़ गये हैं।

बसन्ती बोली—कामिनी, आज न जाने कितने दिनों पर तुमसे मिली हूँ, तू क्या अब पहचानी जाती है ?

कामिनी—बसन्ती बहन, मिलना हो किस तरह, जब से ब्याह हुआ बांकीपुर में ही रहती हूँ। बाप के घर क्या आने पाती हूँ ?

तारा—कामिनी, तुम कभी कभी बाप के यहां आकर

रहती क्यों नहीं ? मैं तो देखो हर साल देवी पूजा पर आती हूँ ।

कामिनी—अरे बहन, तुम्हें क्या चिन्ता है, बीसों आदमी नौकर-चाकर हैं, काम-धन्धा कुछ भंगट ठहरा नहीं, जब जी चाह पा लकी पर चढ़ कर चली आई । मेरे यहां तो यह होने का नहीं । बड़ी भारी गृहस्थी ठहरी, काम धन्धे का भंगट बराबर रहता है और मेरी ससुगल में तां दाई-मजदूरनी रखने की चाल नहीं है, हम में से कोई बाप के घर चली आवे तो बतलाओ काम किस तरह चले ? यही जो इस बार आई हूँ, मेरी एका ननद है उसे कितना हाथ पैर जोड़ कर अपना काम सुपुर्द कर आई हूँ । दो चार दिन काम संभाल देगो, तोसों दिन तो करेगी नहीं ।

बसन्ती—सुनती हूँ कि तुम लोगों की जमींदारी की बड़ी आय है और तुम्हारे पति बांसों गाड़ी-घड़े भी रखे हुए हैं, तो फिर घर में दाई नौकर क्यों नहीं रखते ?

कामिनी—नहीं बहन, आमदनी कुछ ऐसी वैसी नहीं है, खर्च भी बहुत होता है, कुछ देना भी हो गया है, सो मैं तो घर के भीतर रहती हूँ, मुझे सब पक्का हाल तो मालूम नहीं । हम लोगों का एक बर्गचा है, वह तो वहीं रहते हैं, घर पर तो शायद ही कभी आते हैं तभीयत ठीक नहीं रहती, काम-काज भी कुछ देखते भालते नहीं ! मेरी तनों चचेरी साम हैं, वे ही सब घर का इन्तजाम करते हैं । दाई किस तरह रखें, घर की तो यह चाल नहीं है, बड़ा नेम धरम है, बाहर के आदमी से चौका किस तरह धुलें । इसलिए घर की पतोहू ही को सब धन्धा करना पड़ता है ।

बसन्ती—अच्छा बहन, जब तुम लोगों को देना हो गया

है, तो खर्च क्यों नहीं कम करती ? सुनती हूँ कि तुम्हारे स्वामी हजारों रुपये खर्च करके साहब लोगों को खाना खिलाते हैं, बीसों गाड़ी-घोड़े अस्तबल में बंधे रहते हैं, सो इतना लंबा खर्च क्यों करते हैं, तू अपने स्वामी को समझाती नहीं कि आमदनी देख कर खर्च करो ।

कामिनी—अरे राम ! मैं उनसे ये सब बातें कैसे कहूँ ? वह बाहर अन्दर का काम काज सब समझते बूझते हैं । मैं बहू हो कर किस मुंह से उनसे यह सब बातें कहूँ ? पर हाँ, जब कभी वह घर आते हैं तो मेरी चचेरी सास इस तरह की दो एक बातें उनसे कहती हैं जरूर ।

बसन्ती—तो वह क्या कहते हैं ?

कामिनी—कहते हैं कि हम लोगों का नामी घराना है, सारे शहर में जैसा नाम है, साहब लोग भी बुनियादी बड़ा घर जान कर इज्जत करते हैं, सो क्या बिना साहब लोगों को खाना वगैरह खिलाए काम चल सकता है ? सुनती हूँ कि साहब लोग उन्हें बड़ा चाहते हैं, यही तो कमेटी ना क्या है, बांकीपुर में है, वह उस में है, और यही बीमारी का शरीर ले कर रोज दोनों समय गाड़ी चढ़ कर साहब लोगों से मिलने जाते हैं, साहब लोगों में उनकी बड़ी खातिरी है । सब बहुत मानते हैं ।

सीधी सादी कामिनी के मुंह से उसके स्वामी की बड़ाई सुन कर बसन्ती ने जरा सा हंस दिया और अभिमानिनी तारा ने ईर्ष्या से जरा भी हैं टेढ़ी कर लीं ।

बसन्ती—अच्छा कामिनी, तेरे यहां आज कल मास्किन कौन है ?

कामिनी—सास तो हैं नहीं, वेही तीनों चचेरी सास ही

मालकिन हैं। बड़ी तो भली है। किसी के बखेड़े में नहीं रहती, मझली ही जरा क्रोधी है। इसलिए सब उससे डरते हैं, बहूएँ तो थर थर कांपती हैं। अहा! उस दिन छोटी चचेरी सास की पतोहू चौके से कड़ाही से गरम दूध लाती हुई गिर पड़ी, गरम गरम दूध से बेचारी के हाथ-पैर में छाले पड़ गए। इसका उसको कुछ ख्याल नहीं था पर सास के डर से बेचारी के प्राण सूख गए। जब मझली चचेरी सास ने नहा कर आ कर सुना कि दूध गिरा है, भाड़ू ले कर बेचारी पर चढ़ दौड़ी। हाय हाय, बेचारी को ऐसा बका माँ-बाप बखान कर बेचारी को ऐसा गालियाँ दीं कि आंसू के मारे बेचारी की हिचकी रंध गई। अहा, दश बरस की लड़की, डर के मारे तीन दिन तक अच्छी तरह भात नहीं खा सकी।

तारा—तो क्या तुम्हें भी ऐसीही भिड़कती है ?

कामिनी—बकेगी नहीं, कुछ भूल होते ही भिड़कती है, नहीं तो क्या गृहस्थी चल सकेगी ?

तारा—तुम्हें जब भिड़कती है तो क्या करती हो ?

कामिनी—क्या और करूंगी बहन, चुप चाप रोती हूँ।

अभिमानीनी तारा जरा हंस कर बाली—मुझसे तो यह नहीं होता मुझे बात बरदाश्त नहीं होती।

कामिनी—बसन्ती बहन, भला तुम्हीं कहो, ससुरार में कोई गाली दे तो क्या करें ? एक बात का जवाब दें तो दस और सुननी पड़ती हैं। इससे तो यही अच्छा है कि सास हो या ननद हो, जब किसी ने दो बार बातें कहीं तो चुप-चाप इस कान से उन्हें सुन लिया, फिर उस कान से निकाल दिया। बात तो कुछ शरीर में चुभ नहीं जाती, क्यों बसन्ती बहन ?

बसन्ती—अच्छा करती हो। बात सह लेना ही अच्छा

है, पर हा सबसे सही भी तो नहीं जाती। अच्छा, सुनती हूँ कि तुम्हारी छोटी चचेरी सास भी क्रोधी है।

कामिनी—हाँ क्रोधी है तो सही, पर मम्मली से तो डरती है, दो एक बात कहकर घर के भीतर कुंडी चढ़ा कर बैठी रहती है बाहर से मम्मली एक के बदले सौ बातें सुनाती है। मम्मली के पास कुछ रुपये भी हैं, वह अपने लड़कों को अच्छी अच्छी मिठाइयाँ खिलाती है और लड़कों से कह देती है, कि जाओ, छोटी चाचा के घर में बैठ कर मिठाई खाओ। छोटी बेचारी के लड़कों को मिठाई मिलती नहीं, बेचारे टुकुर टुकुर ताका करते हैं और छोटा के चोके के पास मम्मली ने एक मोरी बनवाई है। छोटी ने कहा, मेरा छोटा देवर खुद उसके पास फरियाद ले कर गया, वे भी एक दिन घर आकर अपनी मम्मली चाचा को समझाने गये, पर वह भला किसकी सुने। मम्मली का बोलना सुनकर वे भा गाड़ी पर चढ़के बगीचे भाग गए, मम्मली ने आप खड़ी हो कर मजूरों से मोरी बनवा ली तब पानी पिया।

तारा—शाबास ! औरत हो तो ऐसी हो।

कामिनी—अरे तारा, तुझसे क्या कहूँ, घर में रात दिन जो लड़ाई-झगड़ा किचकिच रहती है कि सुन कर भूत भी भाग जाते। पर हम लोगों को सब सह गया है, और मैं किसी के बीच में रहती भी नहीं, अगर किसी ने कुछ कहा भी तो चुपके सुन लिया और भुला दिया, मेरा क्या ?

बसन्ती—तुम्हारी चचेरी सास सभी तो विधवा हैं न, उनकी उमर क्या है ?

कामिनी—उमर कुछ ऐसी वैधी नहीं। उनकी और मेरी बड़ी चचेरी सास का उमर एक है। और छोटी उनसे पांच

सात बरस छोटी है। मेरे ससुर के बाप के बड़े लड़के आज जीते रहते तो सत्तर बरस के होते। उनके बाद पन्द्रह-सोलह वर्ष तक और कोई संतान नहीं हुई, उसके बाद तीन लड़के हुए। जिस समय मेरी सास तीस बरस की थी, उस समय मेरा चचेरी सासों सब अभी नई बहूएँ आई थीं। इसके दो बरस बाद उनका पहला ब्याह हुआ था।

तारा—क्यों कामिनी बहन, तुम्हारी फुफेरी सास भी तो उसी मकान में रहती हैं ?

कामिनी—हाँ, वह तो है ही, दो फुफेरी सास और एक ममेरी सास भी हैं, तीनों ही विधवा हैं; उनके लड़के लड़की बहू, नाती, पोते सभी उसी मकान में हैं। एक ममेरी सास भी हैं, वह सधवा हैं, उनके स्वामी पूरब में ढाका न कहाँ, नौकरी करने गए थे, वहाँ जाकर न जाने और एक ब्याह किया है क्या, तेरह बरस से घर नहीं आये हैं, रुपया पैसा भी कुछ भेजा नहीं इसलिए मामी जी अपने दोनों लड़कों के साथ यहीं रहती हैं। आज तीन-चार वर्ष हुए, यहीं इन दोनों लड़कों का ब्याह भी हुआ है।

तारा—लड़के तीनों कैसे हैं ?

कामिनी—छोटा तो अच्छा है, स्कूल में पढ़ता है, पर बड़ा एकदम आवारा हो गया है। साहब लोग से कह सुनकर उन्होंने कहीं नौकरी करवा दी थी सो वह कुछ रुपया पैसा चुराकर भाग गया। सब कहने लगे कि साहब लोग छोकड़े को जेलखाने भेजेंगे, पर उन्होंने साहबों से बहुत कुछ कह सुन कर घर से नुकसान पूरा करके उसे बचाया। छोकड़ा घर में रहता नहीं, रोज शराब पीता है, जब घर आता है तो रुपय के लिए मार पीटकर जोरू की हड्डी चूर करता है, बहू

बेचारी का रोना सुन कर हम लोग भी रोने लगती हैं। वहू बेचारी रुपया कहाँ से लावे, दो-चार गहने हैं बन्धक रख कर स्वामी को रुपया ला देती है, नहीं तो क्या बेचारी की जान बचती।

तारा—ओः, तब तो तुम लोगों की गृहस्थी बड़ी भारी है।

कामिनी—यही तो बात है तारा, तुम लोग बड़े आदमी के घर की पतोहू ठहरों। तीनों देवरानी जेठानी तीन कोठरियों में बैठी रहती हो, सास रसोई-पानी का धन्धा देखती भालती हैं काम काज का भंफट क्या समझोगी, बतलाओ। तुम्हारे दोनों देवर तो घर ही पर हैं, तुम्हारे स्वामी क्या कलकत्ते जा रहे हैं?

तारा—बरस भर से वह कलकत्ते ही में हैं। मुझे कलकत्ते ले जाने के लिए उन्होंने अपनी माँ के पास आदमी भेजा था, उन्होंने भी यही जेठ या आषाढ़ में भेजेने को कहा है।

कामिनी—हाँ, शिवनाथ कहता तो था कि तुम्हारे स्वामी ने किसी बड़ी सड़क पर बड़ा भारी मकान लिया है, बहुत कुछ खर्च करके मकान सजाया है, उसके पास दो बगियाँ हैं वैसी बड़े-बड़े राजे महाराजों के यहाँ नहीं है, और भी सुना कि एक बड़ा बगीचा खरीदने की बातचीत हो रही है, बगीचा मानो इन्द्रपुरी है। वैसा फल-फूल, संगमरमर की जमीन वाला कमरा कलकत्ते में दूसरा नहीं है। तारा, तुम सुखी हो।

तारा के लाल-लाल होठों पर जरा सी मुसकुराहट दिखाई दो, पर उबल नेत्रों पर मानो एक चिन्ता की छाया आ पड़ी, वह धीरे धीरे बोली—कामिनी, अगर बगी और संगमरमर के घर से सुख होता होगा तो मैं भी सुखी रहती, पर भाग्य की बात कौन जाने? चतर बसन्ती लख गई कि यह कह कर तारा ने एक लम्बी सांस ली।

थोड़ी देर तक सब चुप रहीं, फिर तारा बोली—बसन्ती, हम लोगों के लड़कपन में गाँव में एक साधू आया था, तुम्हें याद है ? उसने हम लोगों का हाथ देखकर क्या कहा था, याद है ?

बसन्ती—नहीं मुझे, तो याद नहीं आता ।

तारा—ऐं, तुम मुझसे बड़ी हो, तुम्हें याद नहीं ? शायद कामिनी को याद होगा ।

कामिनी—नहीं तो, मुझे भी कुछ याद नहीं ।

तारा—तब शायद यह बात मेरे मन में लगी थी, इसीलिए मुझे अब तक याद है । ठीक बारह बरस हुए, यही बैसाख महीने में एक दिन संध्या के समय हम लोग खेल रही थीं, जरा जरा अँधेरा हो आया था, और जरा जरा चाँदनी खिली थी कि एक जटाधारी साधू उसी जंगल के भीतर से निकल आया । हम सब डर से काँपने लगीं, पर साधू पास आकर बोला—कुछ डर नहीं है, तुम लोग पैसा ले आओ, हाथ देखूँगा । मुझे माँ ने उस दिन चार पैसे दिये थे, डर के मारे मैंने साधू को दे दिये, तब साधू खुश होकर मेरा हाथ देखकर बोला—‘बेटी, तू बड़े आदमी के घर की बहू होगी, कुछ चिन्ता मत कर । कामिनी भी हाथ दिखाने के लिए घर से एक पैसा ले आई, साधू पैसा ले कर उसका हाथ देख कर बोला “कुछ धन दौलत नहीं होगा, पर बड़े घर की बहू होगी ।

बसन्ती ने हँस कर कहा—और जटाधारी महाराज ने मुझे क्या कहा ?

तारा—बताती हूँ, तुम्हारी माँ पानी लेने गई हुई थीं, उनके पास पैसा रहता नहीं था, सो तुम खाली हाथ हाथ दिखाने गई । साधू हाथ देख कर बोला—बेटी, तेरे भाग्य में

पैसा भी नहीं है बड़ा घर भी नहीं है। गरीब के घर की गृहस्थी करके पेट भर भात खाएगी। यह कह कर और पैसे सब तुम्हारे हाथ में रख कर साधू चला गया।

बसन्ती ने हंसते हुए कहा—साधू ने तो ठीक कहा था, हाँ अब याद आया, गांव के लोग उसे रामप्रसाद मरस्वती कहते थे।

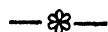
तारा—हाँ, हाँ, वही सरस्वती महाराज। जब तुम्हारी माँ तालाब से जल लेकर आई तो मैंने उससे सब कहा। तब वह आंचल से तुम्हारे आंसू पोछ कर बोली—अच्छा क्या हुआ, बेटी जीए, ब्याह हो गरीब के घर की दुलारी हो कर रहेगी, बन्धा करके पेट भर भात खायेगी, क्या हुआ सुख से तो रहेगी। पुत्र धन या बड़े घर से सुख नहीं होता, मुझे धन या बड़ा घर नहीं चाहिए। बसन्ती, वही बात रह रह के मेरे मन आती है कि धन या बड़े घर से ही सुख होता तो दुनियाँ में फिर किसी को किसी बात की कमी नहीं रहती।

बसन्ती—ऐं, यह क्या तारा ! लड़कपन की एक बात याद करके तुम आंसू क्यों बहा रही हो। तुम्हें भला किस बात की कमी है ? तुम ही अगर चिन्ता करोगी, तो फिर हम लोगों का कहाँ ठिकाना लगेगा।

तारा—नहीं बहन, मैं दुःख से नहीं रोती हूँ। पर न जाने क्यों कलकत्ता जाने की बात याद करके आज कई दिन से मन कैसा कर रहा है। आगे की बात भगवान जानें। अच्छा बसन्ती, तुम भी तो कलकत्ते जा रही हो और कामिनी के स्वामी भी तो कलकत्ते जाते हैं। उनके साथ ही कामिनी भी चली आवेगी। मेरे मन में रह रह कर

यही बात उठती है कि लड़कपन में जैसी हम तीनों सगी बहिने सी थीं, वैसी ही आपस में बर्तती रहें ।

एकाएक तारा के मन का विकार देख कर बसन्ती और कामिनी कुछ चिन्तित हुई, उन्होंने आंचल से तारा के आँखों पोंछे और बहुत कुछ दिलासा दे कर एक पहर रात गए अपने अपने घर गयीं ।



१०

इसके कुछ दिन बाद वैजनाथ ने स्त्री, बाल बच्चों के साथ कलकत्ता की यात्रा की। घर से चलने के एक रोज पहले बसन्ती गांव के सभी मेल-मिलाप की सखी सहेलियों से मिलकर विदा हो आयी। कुन्दनपुर में उस रोज खूब आँसू बहा ।

जाने के दिन बसन्ती तारिजी से भी विदा होने गई थी। तारिजी सचमुच बसन्ती को जीसे चाहती थीं, इसलिए उसके जाने से उनके जी में सचमुचही दुःख हुआ। बहुत कुछ रोईं धोईं, कहने लगीं—अहा बेटी ! तुम लोग मेरे पेट की बच्ची ठहरी, मुझे जैसी तारा, तैसी तू और चंपा। अहा ! तुम लोगों को इसी हाथ से पाला, बड़ी किया, तुम्हें छोड़ते जी कैसा कर रहा है। अच्छा बेटी जाओ ! नारायण जी करें बैजू की कलकत्ते में कोई अच्छी नौकरी लग जाय, तुम लोग राजी-खुशी रहो, सुनकर कलेजा ठंडा होगा। तारा बेटी भी ससुरार गई है,

उसे भी सुनती हूँ कि कलकत्ते ले जायगा, यह जेठ महीने में ले जाने के लिए मेरा जमाई जिद कर रहा है। सुनती हूँ कि उसने कलकत्ता में एक नया मकान खरीदा है, बगीचा लिया है घोड़ा-गाड़ी ली है, वही सुकुल जी के घर का शिबू उस रोज कह रहा था कि वैसी घोड़ा-गाड़ी शहर भर में किसी के पास नहीं है। क्यों न हो ? रघुनाथपुर के जमींदार का घराना है कि हंसी खेल है ? इतना रुपया, ऐसी अमीरी चाल-चलन तो और कहीं है नहीं। अभी गए महीने में समधिन के घर गई थी। बगीचे से तितल्ले तक सारा बिल्लौर के झाड़ टंगे हुए हैं। और नौकर-चाकर चीज-बस्त की तैयारी क्या कहूँ। उस दिन पचास साठ औरतों को खिलाया, समझे कि नहीं, सब को चांदी की थाली गिलास कटोरी में खाना परोसा गया। और मेरी समधिन की बातचीत भी कैसी मीठी थी कि सुनकर आदमी का जी पिघल जाय। अरे वे लोग बहुत बड़े आदमी हैं, उनकी चाल ही निराली है सुनती हूँ कि मेरे दामाद ने भी नया मकान लिया है और झाड़ फानूस, दिवाल-गिरि से खूब सजाया है, कुरसी, गलीचा मखमली चदर, न जाने सोने चांदी संगमरमर को कितनी चीजें सजा रखी हैं कुछ गिनती नहीं है। तुम लोग तो आंख से देखोगी भी। मैं ने तो इन आंखों से देखा भी नहीं कलकत्ते से एक आदमी आया था वही कहता था कि..... इत्यादि इत्यादि।

अच्छा बेटी जीतो रहो, मेरी तारा से मेल-मिलाप होगा दोनों जनी बहिन की तरह रहना। अहा ! बेटी, तुम्हीं लोगों से मेरी घर गृहस्थी है, तुम लोगों के बिना किस तरह रहूंगी ? अच्छा बेटी जा, तारा भी जल्दी ही जायगी।

आंसू बहा कर ताईजी से विदा हो कर बसन्ती शिवनाथ जी की माता से बिदा होने गई। जब से शिवनाथ कलकत्ते जाने लने, उनकी माता अकेले ही घर में रहती थीं। शिवनाथ जी ने बहुत कुछ कह सुन कर एक ताई रख दी थी, पर रसोई पानी के लिए एक मिसरानी रखने में वह किसी तरह भी राजी नहीं हुई। घर खूब लंबा चौड़ा था। बाहर भी एक पक्की कोठरी थी। शिवनाथ जी जब कलकत्ते से आते तो यहीं अपना पोथी पतरा रखते और पढ़ते थे। आंगन के भीतर भी दो-तीन पक्की कोठरिया थीं और एक कच्चा रसोई घर था। पिछवाड़े एक छोटा सा तालाब था, शिवनाथ उसे हर साल साफ करवाया करते थे।

शिवनाथजी की माता का रंग गोरा, कद लंबा और शरीर दुबला था। पति के मरने के बाद से वह शरीर की तरफ कुछ ध्यान नहीं देती थीं, इससे और भी दुबली हो गई थीं। क्या जाड़ा क्या गरमी हर मौसम में बड़े तड़के सठ कर स्नान करतीं और केवल एक रामनामी के सिवाय दूसरी चादर नहीं ओढ़ती थीं। स्नान करके हर रोज दो तीन घंटे तक पूजा ध्यान करतीं, फिर अपने हाथ से रसोई करके खातीं। पति की मृत्यु और कामिनी के दुःख की चिन्ता से विधवा दिन पर दिन सूखी जा रही थी, सिर के सामने के कुछ केश सफेद हो आए थे, बुढ़ाई के चिह्न एक एक करके प्रगट हो रहे थे। सारा दिन ईश्वरोपासन और परमात्मा की याद में बीतता था। शिवनाथ को ज्ञानी-मानी विद्वान् देख कर मरूँ, बस इसी भरोसे पर विधवा के जीवन का दीया टिमटिमा रहा था।

बैजनाथ, बसन्ती और चंपा को असीस देकर वृद्धा

बोली—जाओ बेटी, नारायण जी तुम्हारा भला करें, तुम लोग फलो-फूलो, शिवू बेटा कुल का नाम रखे, यही आँख से देख कर मरूँ। इस उमर में मेरी और कुछ मनोकामना नहीं है। देखना बेटा, शिवू, इन लोगों को खाने-पीने का कुछ दुःख न हो, बसन्ती के दोनों बच्चों को जिसमें कोई तकलीफ न हो, बेटी चंपा अभी बच्ची है, उसे कुछ तकलीफ न होने पावे।

चंपा का नाम लेते ही बुढ़िया की आँखों से आंसू की धारा बह चली, बेचारी वैध्यव्य यंत्रणा खूब जानती थी, हाय ! इस अनजान बच्चा का नारायण जी ने ऐसा कष्ट क्यों दिया ?

और और बहुत सी बातचीत के बाद शिवनाथ जी की माता ने बसन्ती और चंपा को बहुत कुछ सदुपदेश दिया, बैजनाथ को कलकत्ते जा कर होशियारी से रहने को कहा और शिवनाथ को मन लगा कर लिखने-पढ़ने की तागीद की। अंत को वृद्धा ने सबको फिर से असीस दिया। सब ने वृद्धा के चरणों का धूल सिर पर चढ़ाई। शिवनाथ प्रणाम करके बोले—माताजी, आपकी सारी बातें मैं मनमें गांठ बांध कर रखूँगा, यत्न से पालन करूँगा, जिस दिन आपकी आज्ञा उल्लंघन करूँ उस दिन ईश्वर करे मेरी जिन्दगी न रहे।

सब लोग चले गए। वृद्धा आँखों में आंसू भर कर जब तक दिखाई दिया, इन लोगों की तरफ देखती रही, अन्त को शून्य हृदय से केवल रास्ते की तरफ बहुत देर तक देखती-देखती चली गई। बैजनाथ जी ने घर आकर देखा कि राम खिलावन आया है। कलकत्ता जाने के पहले बैजनाथ जी ने अपनी जमीन उसे बंटवारे में दे दी थी, इसी लिए उपकार मान कर आँखों में आंसू भरे हुए, खिलावन फिर से महाराज

को एक बार दण्डवत करने आया। खिलावन के साथ उसकी स्त्री भी आई थी, और एक दोने में चीनी का जमाया हुआ दही भी लेती आई थी। बसन्ती ने बहुत कुछ मना किया, पर कृष्णक पत्नी ने एक न सुना। वह बोली कि गाड़ी में जगहन होगी तो मैं हाथ में करके स्टेशन तक पहुँचाए आऊंगी। अस्तु चंपा गाड़ी में चढ़ कर गोद में दही का दोना लेकर बैठी। गाड़ी के भीतर दोनों बच्चों को लेकर बसन्ती और चंपा बैठीं। बैजनाथ और शिवनाथ दोनों ने पैदल ही चलना पसन्द किया। बेल गाड़ी धीरे-धीरे चलती है, सबेरे कुन्दनपुर से चल कर दिन के ग्यारह बजे ये लोग आरा स्टेशन पर पहुँचे।

स्टेशन के पास एक धर्मशाला थी सब लोग वहीं ठहरे। जल्दी-जल्दी रसोई-पानी करके खा पीकर तैयार हो गए। अन्त में चंपा ने भात के साथ कुन्दनपुर का मीठा दही भी खा लिया।

दिन के तीन बजे गाड़ी छूटती थी, अस्तु, बैजनाथजी प्लेट फार्म पर टहलते हुए यात्रियों का समागम देखने लगे। ठीक तीन बजे गाड़ा खुलो, दूसरे दिन सबेरे सात बजे ये लोग हबड़ा स्टेशन पहुँचे। शिवनाथजी ने एक गाड़ी किराए पर ठीक कर ली और सब लोग तुलापट्टी शिवनाथ के डेरे की तरफ चले। गंगा जी में पुल पर से सैकड़ों जहाजों के मस्तूल देख कर बसन्ती चकित रह गई और दूसरी तरफ कलकत्ते के घाट और मकानों की कतार देख कर उसके आश्चर्य का ठिकाना न रहा। गाड़ी बड़े बाजार की तरफ चली। शिवनाथ को कुछ कपड़े खरीदने थे, इससे कुछ देरी लगी। बसन्ती और चम्पा कभी कुन्दनपुर के बाहर नहीं गई थीं, इसलिए पहले पहल हिन्दुस्तान का सष से बड़ा शहर देख कर दोनों चकरा

गई। सड़क के दोनों तरफ दूकानें, कहीं कहीं पतली गलीयों में भी दोनों तरफ दो मंजिले तिर्मजले मकानों दूकानों से रास्ता अंधेरा हो रहा है। न जाने कहाँ कहाँ की कितनी तरह की चीजें सजी हुई हैं; विलायती थान, देशी कपड़े, बनारसी साड़ी, बम्बई, की साड़ी, चीना सिल्क, छोट, अलवान तरह तरह की सामग्रियों से दूकानें सजी हुई हैं। खिलौनेकी दूकान में तरह तरह के खिलौने हलवाईयों की दूकानोंमें मिठाई की कतारकी कतार थालियां लगी हुई हैं, कड़ाही चढ़ी हुई है, किताबों की दुकानों में आलमारी में जिल्द बंधी किताबें रखी हुई हैं। सिल एक ऐसी खरीदनी थी जो तीन पुश्त चले। बसन्ती ने सैकड़ों देखीं, लोहे की दूकानों में भरना, सड़सी, न जानें कितनी चीजों से दूकान भरी हुई है, बर्तन की दूकानों में सजे हुए कांसे पीतल के बर्तनों की चमक से आंख चकाचौंध हो जाती हैं। कांच की दूकानों में शीशे लंप, ग्लास न जाने कितनी सुन्दर चीजें चमक रही हैं, काठ की दूकानों में अगणित काठ की चीजें सजी हुई हैं, बढ़ई छील रहे हैं, तरास रहे हैं, पालिश कर रहे हैं, बकस की दूकान में टान के लोहे के चमड़े के बकस सजे हुए हैं। और और दूकानों में बसन्ती और चम्पा ने न जाने कितनी तरह की चीजें देखीं जिनकी कुछ गिनती नहीं। रास्तों में भीड़ इतनी थी कि गाड़ी चलना कठिन था, भीड़ के मारे आदमियों को आगा-पीछा नहीं सूझता, गाड़ी की आवाज, खरीददार, फेरी वालों के कोलाहल के मारे कान बहिरा हुआ जाता है। बसन्ती सोचने लगी, शहर क्या है आदमियों का समुद्र है। इतने आदमी कहाँ से आते, हैं, कहाँ जाते हैं और इतनी चीजें ही कौन खरीदता है, कहाँ चली जाती हैं। आज कुन्द-

नपुर नाम के एक छोटे से गाँव से बसन्ती इस विशाल मनुष्य-समुद्र में लीन होने आई है उसे क्या इस महानगरी के किसी कोने में जगह मिलेगी ? नई सड़क के दोनों तरफ की इन्द्र-प्रासाद तुल्य इमारतों को देख कर उसकी बुद्धि चकरा गई । शिवनाथ ने बड़े लड़के को गोद में लिया था, बैजनाथ जी छोटे लड़के को गोद में लिये चुपचाप बलकत्ता नगरी का प्रताप देखते हुए चले जा रहे थे और मनहीं मन सोच रहे थे कि क्या मेरा उद्देश्य सफल होगा ? आगे की बात कौन जाने ? शान्त निस्तब्ध कुन्दनपुर की कुटिया छोड़ कर आज इस महानगरी में आया हूँ, सदा के चंचल मनुष्य-समुद्र की किसी गुफा में क्या मुझे खड़े होने की जगह मिलेगी ।

— * —

११

बसन्ती—चम्पा, चम्पा, जरा इधर तो आ बहन !

चम्पा—क्या बहन, मुझे बुला रही हो ?

बसन्ती—हाँ बहन, वह जो एक कपड़ा धो कर रखा है, छत पर सूखने को डाल आ तो, तब तक चटपट नहा लूँ । धूप निकल आयी है ग्वालिन आती होगी, चूल्हा सुलगाना है । यहाँ नहाने से तो हम लोगों को गाँव की पोखरी की तरह तृप्ति ही नहीं होती । चम्पा इस कर बोली—तुम्हें तो

कलकत्ते को सभी चीजें बुरी लगती हैं। क्यों यहाँका कल का पानी कैसा सुन्दर है। कैसा साफ निर्मल है।

बसन्ती—रख, बहन यहाँ की बड़ाई और सुनी नहीं जाती।

चम्पा—क्यों, तुमने बुरा क्या देखा बतलाओ। कितना बड़ा शहर, कैसा बाजार, दूकान, हाट, गाड़ी-घोड़े, कितनी तरह की चीजें आदमी, नौकर-चाकर यह सब क्या कुन्दनपुर में तुमने कभी देखा था। ऐसा दोतल्ला मकान क्या कुन्दनपुर में था ?

बसन्ती—न हो न सही, हमारे कुन्दनपुर का मकान ही सोने का मकान है। चारो तरफ हिलने-डुलने की जगह तो है, साँफ-सबेरे ठंडी साफ हवा तो शरीर में लगती है, दोपहर को आंगन में धूप तो आती है, दो-चार आम जामुन के पेड़ तो हैं। यहाँ क्या है बतलाओ। दो तल्ला-पक्का मकान लेकर क्या धोकर पीऊँ ? न तो हवा है, न धूप है, मुहल्लेवाले अड़ोसी-पड़ोसी किसी से मिलना-जुलना नहीं। अरे राम ! यह क्या ! जैसे पिंजरे में पंछी कैद हो।

चम्पा—क्यों बहन। उस दिन हम लोग गाड़ी पर चढ़ कर कितना घूम फिर आए, चिड़ियाखाने में हमने शेर-भालू सब कुछ देखा। गाड़ी घर के बाहर निकलने ही से न जाने कितनी चीजें देखने में आती हैं।

बसन्ती—नहीं, मुझे तो गाड़ी चढ़कर घूमना अच्छा नहीं लगता, अपना कुन्दनपुर ही लाख दरजे अच्छा है। साँफ-सबेरे तालाब के घाट पर आती-जाती थी, वही अच्छा था। वहाँ सब से मेंट-मुलाकात होती थी, सबके घर आना जाना

होता था। सब कोई अपने को कितना चाहते, पूछते थे। यहाँ कौन किसे पूछे और कौन किसे जाने ?

चम्पा—यह क्या कहती हो ? एक ही दिन में कोई कैसे जान लेगा। देखो न उस दिन देवी बाबू के घर की दाई आई थी, हम लोगों को बुलावा आया था, और कल देखो गोपाल बाबू ने कितनी मिठाई भेजी थीं।

बसन्ती—हाँ क्यों नहीं, रहते-रहते, भेंट-मुलाकाल तो होगी ही। पर बात क्या है जानती हो चम्पा, वे लोग बड़े आदमी ठहरे। हम लोग ठहरे गरीब, उन लोगों से कब तक निभेगा; वे लोग मुँह उठाकर हम से दो बातें करते हैं यही उनकी बड़ी भल मनसाहत समझो। हाँ, जब कलकत्ता आई हूँ, तो कुछ लोगों से मेल-मिलाप होगा ही, इसमें क्या सन्देह है।

चम्पा—और शिवनाथ जी भी तो रोज संध्या को हम लोगों के यहां आते हैं, कितनी तरह की बातचीत करते हैं, कितने आदमियों का हाल सुनाते हैं। मुझे उनकी बातें बड़ी अच्छी लगती हैं।

बसन्ती—अहा ! शिवनाथ ऐसा लड़का क्या आज कल दिखाई देता है ? परीक्षा के लिए उसे दिन-रात पढ़ना लिखना पड़ता है। तो भी हम लोग कैसे हैं पूछने रोज आते हैं। कलकत्ता आकर हम लोगों का मन उदास न हो जाय इसलिए रोज शाम को एक बार आते हैं। जब तक उनके घर थे उनका पढ़ना-लिखना सब हवा हो गया था, खाली हम लोगों के आराम की चिन्ता में घमते थे। उन्हें न रुपये का घमण्ड है न पढ़ने लिखने का अभिमान है और जी में माया दया कैसी है। ऐसा लड़का आजकल के जमाने में कम ही मिलेगा।

चम्पा—सो बहन, ग्वालिन आ गई ।

बसन्ती—क्यों रे ! आज जरा अच्छा दूध लाई है कि बस कल की तरह निरा पानी ले आई है । कलकत्ते में तो कल के पानी की कमी नहीं है और तुम लोगों को दूध की भी कमी नहीं है । बस दूध का रंग रखने ही से हुआ ?

ग्वालिन—नहीं बहूजी, तुम लोगों के घर क्या ऐसा वैसा दूध दिया जा सकता है ? देखो न, पीने ही से अच्छा बुरा मालूम पड़ जायगा ।

बसन्ती—अरे बहुत देखा है, अहा ! गाँव में घर में सेर तीन पाव दूध होता था वही लड़के लोग पीकर अघा जाते थे । यहाँ तू सवा सेर दूध देती है, तिसपर भी लड़कों का पेट नहीं भरता, और कड़ाही में जब दूध ढालती हूँ तो दूध तो नहीं, पानी की तरह जल जाता है ।

ग्वालिन—गांव-गांवई ऐसा दूध यहाँ कैसे मिले बतलाओ ? वहाँ गऊ चर कर खड़ी हैं, अच्छी तरह रहती हैं । हम लोगों की घर बंधी गऊ क्या वैसा दूध दे सकेगी ?

बसन्ती—और जो कल थोड़ा सा दही लाने को कहा था, लाई है ?

ग्वालिन—हाँ, यह लो, दही लो ।

बसन्ती—हाय हाय, यही चार पैसे का दही है ।

ग्वालिन—और नहीं तो क्या ? चार पैसे का दही और कितना होगा ? अपनी दाई के हाथ बाजार से मंगवाकर देख लो, इससे अधिक लावे तो दाम मत देना । अरे, बहू, हम लोग तुम्हारे आसरे हैं, क्या तुम्हीं को ठगेंगे ?

बसन्ती—ए चम्पा, आ देख तेरे दुलारे कलकत्ते का चार

पैसे का दही देख ? थोड़ा सा पानी मिलकर खाना बहिन, नहीं तो पूरा नहीं पड़ेगा, कौन है, दाई आई है ?

दाई—हाँ बहू जी, कहो क्या बात है ?

बसन्ती—अच्छा, आज जरा जलदीही बाजार जाना । वह दस बजे बाहर जानेको कह गए हैं । सौदा सामान जल्द ले आना । न जाने क्या तरकारी ले आती है, कुछ ठीक नहीं ? क्या परवर भिंडी कुछ नहीं मिली है ?

दाई—मिलती क्यों नहीं है जीजी, जो दाम है, क्या हाथ लगाया जाता है ? छः आने सेर परवर पैसे की चार भिंडीयाँ ।

बसन्ती—अरे तू कहती क्या है ? क्या कलकत्ते के लोग खाते-पीते नहीं हैं खाली गाड़ी-घोड़े पर चढ़कर घूमते हैं ?

दाई—खाते क्यों नहीं हैं, बहू जी । जो जैसा खर्च करता है वैसा खाता है । एक एक लौवे का दाम पांच पैसा छः पैसा दो आना ! क्या कहें कलकत्ते के बाजार में तो सदा आग लगी रहती है । कलकत्ते में क्या मेरे ऐसे गरीब आदमी का रहना हो सकता है, यही तुम लोग दोनों बेला पेट भर भात देती हो तो पड़ी हूँ, नहीं तो क्या कलकत्ते में रह सकती ?

बसन्ती—अच्छा रहने दो, दो आना पैसा ले जा, जो अच्छा समझो ले आना । दो पैसे का आलू, एक पैसेकी मूली, धेले की इमली और एक पैसे का लौवे का साग ले आओ ! हरे राम ! लौवे का साग भी यहाँ पैसा देकर लेना पड़ता है । घर के मचानपर इतना लौवे का साग होता था कि खाते नहीं अघाते थे । दो पैसे की तरौई और दो एक पैसे का ननुवा या बैंगन मिले, लेते आना ।

नहा धोकर ग्वालिन को बिदा कर, दाई को पैसा दे, बसन्ती चौक में गई और चुल्हा सुलगा कर दूध औंटाकर ऊपर ले गई ।

लड़के दोनों उठे थे, उन्हें दूध पिलाकर बिछौना चटाई घाटा कर रखा और घरमें झाड़ू बुहार दिया। थोड़ी देर बाद दाई बाजार से तरकारी ले आई, तब दोनों लड़कों को दाई के पास छोड़ कर बसन्ती फिर चौके में चली गई। घर में सिवाय एक दाई के और कोई नहीं था, दोनों बहिनें आपही रसोई पानी का सब धन्धा करती थीं। नए घर में आकर चम्पा भंडारी बनी हैं, बड़ी खुशी-खुशी हंडिए में से नून-तेल, मसाला निकाल कर चौके में ले आई, तरकारी बनाकर चावल धो कर बहन के सामने ला रखा। बसन्ती ने रसोई चढ़ा दी।

पाठकों को मालूम हो गया होगा कि पहले कलकत्ते में आकर वैजनाथ कुछ रोज तक शिवनाथ के ही डेरे पर रहे पर पीछे उन्होंने उन्हीं के घर के पास बारह रुपए महीने पर एक छोटा सा दो-तल्ला मकान किराए पर ले लिया और उसीमें सपरिवार जा रहने लगे। शिवनाथ ने इस फजूल खर्ची के लिए बहुत कुछ रोका, समझाया, अपने यहां रहने के लिए उनका बहुत हाथ पैर जोड़ा, पर शिवनाथ के लिखने-पढ़ने में विधन होगा इसलिए उसके यहां रहने में वह किसी प्रकार भी राजी नहीं हुए। इसलिए लाचार हो, शिवनाथ जी ने खोज खाज के बारह रुपए महीने का एक निहायत कोटा सा मकान किराए पर ले दिया। शिवनाथ जी कलकत्ते में बहुत दिनों से रहते थे, इसलिए बहुतों से जान-पहिचान भी हो गई थी। वैजनाथ से उन्होंने इन सब लोगों का परिचय करवा दिया। कोई हाइकोर्ट के वकील हैं, कोई किसी बड़े आफिस के बड़े बाबू हैं, कोई पुशतैनी रईस हैं, किसी की जर जयादाद के बारे में मन्देह है, पर गाड़ी-धोड़े की कमी नहीं है। किसी ने नए आए हुए शिष्टाचारी वैजनाथ जी से सचमुच ही अच्छा व्यवहार किया आदर सत्कार किया, बैठाया। किसी ने सजे

सजाए भाड़-फानूस और मखमली कुर्सी से शोभित बैठक खाने में बैजनाथ जी को आने की इजाजत दे कर, दो एक दम्भ पूर्ण बातें कह कर अपना बढ़प्पन दिखलाया किसी ने बैजनाथ जी की बातचीत और सदाचार से खुश होकर शिवनाथ के साथ उन्हें दो एक दिन खाने का न्योता दिया । सम्भ्रता के अनुसार किसी काम-काजी बड़े आदमी से मुसविजत बैठक में देर तक बैठ कर भी बैजनाथ जी को उनकी मुलाकात नसीब नहीं हुई और कोई बड़े आदमी काम-काज के मंभट में थे, जोड़ा पर बाहर जाते समय किटन से मुंह बड़ा कर हमते हुए बैजनाथ जी से बोले—“आप कलकत्ते आ कर तुलापट्टी में ठहरे है, सुन कर मुझे बड़ी खुशी हुई । आज तो मैं बड़ा ‘बीजी’ हूँ पर मैं होप’ करता हूँ कि दो एक दिनों में फिर अच्छी तरह से मुलाकात होगी । और अगर आप मेरा बाग देखना चाहें तो शनिवार शाम को वहाँ आ सकते हैं । वहाँ मैं आप को ‘रिसीव’ करके बहुत ‘हैपी’ होऊँगा ।” गड़गड़ाती हुई जोड़ी चली गई, हेलर घोड़ों की टापों से दो एक कीचड़ के छीटें बैजनाथ जी के कपड़े पर पड़ गये । बैजनाथ इन बड़े आदमी की बातों से अपने को धन्य मानते हुए धीरे धीरे घर आए ।

बड़े बजार की सैर करते करते, बैजनाथ जी ने कककत्ता महानगरी के बाजार का भी कुछ कुछ बरिचय पाया । लड़कपन में वह जानते थे कि कलकत्ते का बड़ा बजार ही सब से बड़ा और लंबा चौड़ा है पर अब आकर देखा तो बड़ा बजार से भी बड़ा कलकत्ते में एक बाजार है, जिसमें ढेर ढेर के माल-गोदाम में भरे हैं, जिन्हें खरीदने के लिए दूबे के पत्तों की तरह लोग दूट पड़ते हैं । लड़कपन में हिन्दी की दूसरी किताब में उन्होंने पढ़ा था कि बिद्या ही से इज्जत होती है, पर उनका

यह बान स्वप्न यहाँ शीघ्र ही हवा हो गया क्योंकि यहां इन्होंने देखा कि सम्मान, इज्जत सेर-मन के हिसाब से बाजार में बिक रही है। कोई साहबों को, अफसरों को खाना खिलाकर महफिल दिखाकर कोई गार्डन पार्टी देकर, कोई द्रव्य देकर, कोई दूसरे के पैसे से, हाथ पसार कर, यह अमृत खरीद रहे हैं और बड़े आनन्द से आंख मूंद कर इसे पान कर रहे हैं। सजे सजाए, सुन्दर बैठकखाने, बड़े-बड़े महलों के भाड़-फान्सों से यह अमृत की बूंदें भर रही हैं तसवीर और आईने में इसका प्रतिबिम्ब दिख ई दे रहा है, सुनहली शराब के साथ वह अमृत मिलाकर एक प्राण हो रहा है, तवायफों और वेश्यायों की कोयलों को मात करने वाली सुरीली तनों से इस अमृत के भरने का शब्द सुनाई दे रहा है ! मनुष्य रूपी मक्खियां मुंड की मुंड इस अमृत की तरफ उड़ी चली जा रही हैं। कभी कुक* कंपनी के यहां से गड़गड़ाता हुआ यह अमृत निकला चला आ रहा है कभी असलरी* कंपनी का दकान में चमक-दमक रही है सारा संसार इसकी चमक दमक से रोशन हो रहा है और कभी महाप्रभु कर्तारों के यहां से बड़े वेग से यह अमृत की धारा बहकर निकल रही है, जितने बड़े आदमी, पंचायत के बड़े बड़े समाजपति, पंच, चौधरी, देश के बड़े बड़े इज्जतदार माननीय, आनरेबल, इस धारा में खुशी खुशी नहा रहे हैं, डूबको खा रहे हैं, डूब रहे हैं उतरा रहे हैं, अपने जाने को धन्य मान रहे हैं ! और कभी कभी तो विलायती 'पैक' किया कल से कसा हुआ मुहर लगा हुआ अछूता बकसों में भर भर कर यह माल आ रहा है।

* कलकत्ते में गाड़ी घोड़ों का एक अङ्गरेज सौदागर।

† कलकत्ते में विलायती कांच की चाँजों का एक अङ्गरेज सौदागर।

लोगों की चिल्लाहट से कलकत्ते का टाउन हाल, कौंसिल हाल म्युनिसिपल हाल, की छतें फटी जा रही हैं। बैजनाथ जी ने देखा कि मजदूर रात दिन मरम्मत करके भी इन इमारतों को अटूट नहीं रख सकते।

बैजनाथ जी गरीब थे तो क्या, खाने-पीने के शौकीन थे। उन्हें मालूम पड़ा कि घा भी अच्छा नहीं है, असला सक्का देशी घा नहीं है। कुछ सड़ गया है और बू भी अती है। इसी सड़े घा में छना हुआ गरमागरम असली देशी माल बिक रहा है। मुण्ड के मुण्ड खरीदार इस मंडी की तरफ दौड़े चले आ रहे हैं। सेर मन, के हिसाब से हांडिए में कुंडे में भर भर माल लिये जा रहे हैं।

—:~:—

१२

आषाढ़ महीना आया, बरमात शुरू हो गई, आकाश में बादल छा गए, बैजनाथ जी का भावी आकाश भी मेघाच्छन्न होने लगा। वह कलकत्ते में किमा काम-काज या नौकरी के लिये परेशान नहीं थे, पहले ही से निश्चय कर चुके थे कि कुछ नहीं होगा तो अः महीने बाद गांव लौट जाएँगे, पर जब काप-काप दूँडने ही के लिए कलकत्ता आना हुआ है तो उन्होंने इसके लिए कोई बात उठा नहीं रखी। अपने भगसक इमकी कोशिश और खाज में लगे रहे, पर अभी तक कोई सिलसला

बैठा नहीं था। कलकत्ता नगर रूपी महासागर में चारों तरफ से अनगिनत मनुष्यों की धारा बही चली आती है इस अनन्त जन-समुद्र में बैजनाथ बेचारे अकेले क्या कर सकते थे।

सन्ध्या के समय धूम फिरकर थक कर घर लौट आते थे। सीधी-सादी बसन्ती उनके लिए जलपान तैयार कर रखती थी। एक मुट्ठी भींगा हुआ चना घी में तल कर, एक टुकड़ा अदरक और एक दो झोटी सी नमकीन रिक़ाबी में सजाकर रख दौड़ती थी। बैजनाथ जी के घर आते ही उनके हाथ-पैर धुला कर तैठने के लिए चटाई ला देती और जलपान की रिक़ाबी सामने ला रखती और आप सामने बैठकर इधर-उधर की दो चार बातें करती या स्वामी को पंखा भलती थी। जैसा गांव में वैसे ही यहाँ भी स्वामी-सेवा ही बसन्ती का एक मात्र धर्म था और बच्चों के पालन-पोषण में ही उसका सब कुछ आनन्द था। सवेरे से सन्ध्या तक वह इसी काम में लगी रहती थी। शाम को दोनों बच्चों के साथ छत पर जा बैठता और कभी दीवार के मोखे से, रास्ते के आदमियों का आवागमन देखा करती थी। उसका शरीर पहले से कुछ अधिक दुबला और मुँह कुछ अधिक सूखा हुआ प्रतीत होता था।

राज सन्ध्या को शिवनाथ बैजनाथजी से मिलने आते थे। सोने के कमरे में चटाई बिछाकर बसन्ती दीया जलाकर रख देती थी और सब उसी चटाई पर बैठकर बहुत रात तक इधर उधर की बातचीत किया करते थे। बैजनाथ जी कलकत्ते में जो जो चीज देखते सबका हाल बयान करते थे और शिवनाथ जी कालेज की बातें, पुस्तकों का जिक्र, शिक्षक या विद्यार्थियों का हाल, कलकत्ते के शहर के नाना प्रकार की

गप्प सप्प, तरह तरह की बातें दुनियादारी के दुःख-सुख की गाथा, संसार के धनी और दरिद्रों की कथा देर तक कहा करते थे। वातकीर्त्त में उनका नया उमंग धार्मिक भाव और दृढ़ता प्रगट होती थी। संसार के महान् पुरुषों के उत्साह, महत्व और दृढ़ प्रतिज्ञा की कहानी कहते-कहते शिवनाथ को रोमांच हो आता था, दुनिया की दगेबाजी भूठ और जुल्म का जिकर करते हुए इस युवा की आँखें तुमतमाने लगती थीं। वैजनाथजी बड़े भाई की तरह स्नेह की दृष्टि से शिवनाथ की तरफ देखते हुए उनकी बातें सुनकर बड़े सन्तुष्ट और प्रसन्न होते थे, वसन्ती अपने बाल्य-सखा के मन की यह सब ऊँची भावना और श्रेष्ठ विचार सुनकर पुलकित होती थी और मन ही मन शिवनाथ को सौ सौ तारीफ करती थी। बालिका चम्पा सोना भूल जाती थी। एकाम्र चिन्ता से उस युवा के बीप्तिमान चेहरे की तरफ एक टक से देखती और उनकी अमृत मयी बाणी सुनती रह जाती थी। शिवनाथजी की तेजोमयी कहानी सुनते हुए बालिका का सरल हृदय आनन्द और उत्साह से भर जाता था और उनके दुःख की कहानी सुनकर बालिका की आँखें डबडबा आती थीं।

वैजनाथजी हर रोज शाम को शहर की देखी हुई चीजों का जिकर करते थे। एक दिन कलकत्ते के बड़े बाजार के माहात्म्य की तारीफ करके हँसते हुए बोले — शिवनाथ, यह मैं मानता हूँ कि देश से हित रखना या दूसरे को भलाई करना मनुष्य जन्म का प्रधान कर्तव्य है पर इन सद्गुणों के बढ़ाने से तुम्हारे कलकत्ते में जैसी अनन्त चतुराई चल रही है उसे देख कर मेरी बुद्धि चकरा गई है। माना कि हमारे गांव गबई में अच्छी देशद्वितीयता नहीं है पर साथ ही इसका भूला

आहंवर और चतुराई का जाल भी नहीं है ।

शिवनाथ—आपका कहना ठीक है, इसमें कोई सन्देह नहीं कि बड़े बड़े शहरों ही में बड़ी बड़ी चालबाजियाँ होती हैं पर क्या सच्ची देशहितैषिता सचाई, विद्यानुराग वगैरः सद्गुण कलकत्ते में आपने कहीं नहीं देखे ?

बैजनाथ—मैं यह नहीं कहता कि कलकत्ते में यह सद्गुण एक भी हैं नहीं वरंच यहाँ ऐसे बहुत से सद्गुणों को देख कर वृप्त हुआ हूँ । यहां जैसा सच्चा देशानुराग अपने देशी भाइयों की भलाई के लिये जैसी लगातार कोशिश, पुरुषार्थ उत्साह मैंने देखा है, वैसा गाँवों में देने में नहीं आता, पुस्तकों के सिवाय गाँव अन्वत्र दिखाई भी नहीं देता । विद्या का अनुराग भी वैसा ही है । कलकत्ता आने के पहले असली विद्यानुराग क्या है, मैं नहीं जानता था केवल विद्या की वृद्धि के लिये अपने भाइयों में विद्या-प्रचार करने की अनन्त चेष्टा, युवा अवस्था से लेकर प्रौढ़ावस्था और प्रौढ़ावस्था से लेकर वृद्धावस्था तक की लगातार अविश्रान्त चेष्टा मैंने कलकत्ते ही में देखी है और भी तो एक बात है यशोलाभ की इच्छा, जान को बाजा लगा कर अच्छे कर्मों का संपादन करते हुए महान् पुरुष होने की उत्कट अभिलाषा भला गाँव-गाँव में हम क्यों कर देख सकते हैं । यह भी हमने कलकत्ते ही में देखा । शिवनाथ, मैंने कलकत्ते का एक नहीं सैकड़ों सद्गुण देखे हैं, पर एक बात है, कि जहाँ कहीं एक सच्चा सद्गुण है तो दस उसको झूठी नकल मौजूद हैं । अगर दस सच्चे देशहितैषी हैं तो सौ देशहित के नाम से व्यर्थ हल्ला मचा कर भंडपना कर रहे हैं दस आदमी सच्ची समाज-रक्षा का यत्न कर रहे हैं तो सौ मनुष्य इसका बहाना करके लोगों की आँख में धूल भोंक कर पैसा

इकट्ठा कर रहे हैं, यही बात बुरी है। शिवनाथ—यह दोष हमारा है, कि उनका ? बसन्ती बहन तुम्हारी चटाई में खटमल हैं क्या ?

बसन्ती—क्यों शिवनाथ काट रहे हैं ?

शिवनाथ—नहीं कटते नहीं हैं, यों ही पूछता हूँ कि हैं कि नहीं ?

बसन्ती—नहीं भाई, मेरे घर में ऐसी चीज नहीं है। मैं अपने हाथ से बिछौना रोज धूप में डालता हूँ और सब चीजों को झाड़ू बोहार कर ठीक रखती हूँ। मैला कुचैला तो मुझे फूटी आँखों नहीं सुहाता।

शिवनाथ—उस दिन बैजनाथ भैया और हम देवी बाबू के घर गए थे, देवी बाबू घर के भीतर हम लोगों को खिलाने ले गए, तुमसे क्या कहूँ बसन्ती चटाई पर बैठते ही खटमलों ने काट काट कर नाक पर दम कर दिया। इसका सबब क्या है, बतलाओ ?

बसन्ती—सबब और क्या है, यही गन्दा रखना। चीज वस्तु गन्दी रखने ही से यह सब पैदा होते हैं।

शिवनाथ—बसन्ती, इसी तरह समाज गन्दा रखने से, उसमें छल रूपी खटमल पैदा होते हैं ! हम यदि दूसरों की निन्दा चाहेंगे, तो परनिन्दा बाजार में बिकेगी, हम यदि पण्डिताभिमानी मूर्खता पर लट्टू होकर मुँह बाये उसकी तरफ देखते रहेंगे, तो बाजार में वही मूर्खता ही विद्या के नाम से बिकने लगेगी। हम यदि खाली मुँहजबानी देश-हितैषिता के पीछे पीछे लगे डोलेंगे तो उसी देश-हितैषिता को भरमार हो जायगी। अक्सर देखने में आता है कि बाजार में जब किसी खास फैशन के कपड़े को लोग अधिक खरीदने लग जाते

हैं तो उसी कपड़े की धुँआधार आमदनी होने लग जाती है और उसका दाम भी चढ़ जाता है। हम लोगों की भी जैसे सद्गुणों में रुचि है वैसे ही सद्गुण पैदा हो रहे हैं। यह उनका दोष है कि हम लोगों का ?

बसन्ती—अच्छा, मैं एक बात पूछती हूँ, चटाई बिछोने वगैरः में खटमल-उटमल होते हैं तो धूप में देने या धोबी के यहाँ भेजने से साफ हो जाते हैं, पर समाज में ऐसे खटमल पैदा हों तब क्या करें बतलाओ ? क्या समाज भी धूप में सुखाये या धोबी के यहाँ भेजे जा सकते हैं ?

शिवनाथ—बसन्ती, समाज को साफ करने का भी उपाय है। जैसे सरज की रोशनी से चटाई के खटमल सब सरासर निकल जाते हैं, वैसे ही, सबो शिक्षा के गुण से समाज की सारी दुखदायी सामग्रियाँ भी एक एक करके समाज को छोड़ देती हैं। यदि शिक्षा का यह फल न हो, तो मैं कहूँगा कि वह शिक्षा शिक्षा ही नहीं है। यदि मुँहजबानी देशहितैषिता पर हम मोहित न हों तो तुम्हीं बतलाओ फिर वह कै दिन टिक सकती है ? पंडिताभिमानी मूर्खता देखकर यदि हम मुसकुराकर वहाँ से चलते बने तो बतलाओ ऐसी पण्डिताई कै दिन चल सकती है ? यह सब नकली चोजें जो आज कल इतनी पैदा हो रही हैं, इसमें गलती हमी लोगों की है उनकी नहीं।

वैजनाथ—शिवनाथ, तुम्हारा उत्साह देख कर मैं बड़ा प्रसन्न हुआ, पर तो भी शिक्षा से समाज की सारी चालबाजी, झल-कपट और चालाकी जाती रहेगी, मुझे तो ऐसी आशा नहीं है। शिक्षित देशों में जितने हथकंडे, चालाकियाँ हैं उतनी इस देश में नहीं हैं। मनुष्य-हृदय में कुमति और सुमति का जब तक निवास रहेगा तब तक संसार में संबाई और कपट दोनों

ही रहेंगे, पर हाँ, शिक्षा-प्रचार से समाज के कर्तव्य बढ़ जाते हैं यह मैं भी मानता हूँ ।

बसन्ती—क्यों जी, तुम लोगों के कालेजों में आजकल जो पढ़ाई होती है उसमें क्या इस तरह की शिक्षा नहीं दी जाती ?

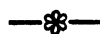
शिवनाथ—बसन्ती, बहुत से लोग कालेज की शिक्षा की बड़ी निन्दा करते हैं, पर मैं ऐसा नहीं करता । जिस शिक्षा के प्रताप से हम बड़े बड़े महान् पुरुषों के जीवन-चरित्र उनकी काररवाहियों से परिचित होते हैं, जिस शिक्षा के बल से हम प्रकृति के अद्भुत गुणों के जानकार होते हैं, वह क्या बुरी शिक्षा है ? जो इससे फायदा नहीं उठा सकते यह उनके मन का दोष है कुछ शिक्षा का अवगुण नहीं है ।

स्वार्थ त्याग और कर्तव्य-साधन के लिए अनन्त उदसाह और लगातार परिश्रम उन्नति का एक मात्र रास्ता है, भला बतलाओ तो सही इतने दिनों में हमने स्वार्थ-त्याग, निष्काम कर्तव्य साधन करने का सबक कितना सीखा है ? सोचते भी हृदय को पीड़ा होती है ।

बातचीत में बड़ी रात हो गई । शिवनाथ घर जाने के लिये उठे । बैजनाथ जी भी उनके साथ साथ दरवाजे तक आए, देखा कि रास्ते में गरमी की संख्या को चंद्रमा की ठंडी चांदनी खिली हुई है, और ठंडी ठंडी हवा चल रही है, अतएव दो चार कदम चलते हुए वे भी शिवनाथ के साथ कुछ आगे बढ़ गए । देवी बाबू आज शाम को हवा खाने निकले थे, बैजनाथ और शिवनाथ को देखकर वह भी उनके साथ हो लिए और शिवनाथ के घर तक साथ गए । झौटते हुए बैजनाथ जी ने देवी बाबू से कहा—मैंने कालेज के सैकड़ों

लड़के देखे हैं बहुतों से मिला-जुला हूँ, पर शिवनाथ के ऐसा सच्चा शिषित, उन्नत-हृदय, श्रेष्ठ विचारशील और उत्साही युवक नहीं देखा ।

देवी बाबू बोले—हाँ, लड़का अच्छा है. ईश्वर करे जीता रहे कुल का नाम रखेगा । और लिखना पढ़ना भी सीखेगा सही, पर लड़का होकर बूढ़ों की ऐसी बातें क्यों करता है ? मुझे डर है कि कहीं अंत को फाजिल न हो जाय ।



१३

तुलापट्टी के खत्रियों में देवी बाबू एक नामी रईस हैं । उमर कोई पचास के करीब होगी, शरीर म्थूल, कद नाटा और रङ्ग गोरा है, मुंह पर सदा हंसी छाई रहता है, इनकी मीठी बातों से सब प्रसन्न रहते हैं । पहले तो इनका जमाना अच्छा नहीं था, लड़कपन में इन्होंने बहुत कुछ तकलीफ उठाई थी और बचपन ही में पिता-माता के मर जाने पर इन्होंने किराने की दलाली करनी शुरू कर दी थी, इसीसे ज्यों त्यों कर गुजारा होता था । धीरे धीरे इनका भाग्य चमका, एक अंग्रेज सौदागर से भेंट हो गई । उसने भी कलकत्ते में नया “हौस” खोला था । देवी बाबू पर इस साहब की कृपादृष्टि हो गई और यह उस हौस के दलाल बन गए । जब दिन अच्छे आते हैं तो चारों तरफ से लक्ष्मी की बौछार होने लगती है । देवी बाबू के एक

मामा थे, उनका एक मात्र पुत्र जाता रहा। हाल ही में उनकी मृत्यु हो गई थी, अतएव उनकी लाख डेढ़ लाख की सम्पत्ति भी देवी बाबू के हाथ लगी। हौस की दलाला चमक चली, अस्तु, अब इन्हें किसी बात की कमी न रहा। पका चौमंजिला मकान, नीचे बैठकखाना जिसमें तख्तपाश पर गद्दी तकिया लगा रहता और बीच में बीस बत्ती का एक फ़ाड़ और दिवाल के आमने सामने दो दो जोड़ी दिवालगीर खोली से ढकी हुई लगी थी। आमने-सामने चार-पाँच तस्वीरें लटक रही थीं, तस्वीरों का कुछ मेल नहीं था। एक कार्ल जी का चित्र है तो बगल में एक रामियो जूलियट की तस्वीर लगी हुई है। देवी बाबू के घर में ठाकुर जी की सेवा भी होती थी, हर साल दोल जन्माष्टमी अन्नकूट पर खूब महोत्सव भोग गग होता था, अस्तु, यह एक नामी परिवारवाले गृहस्थ थे। कलकत्ते आने के थोड़े ही दिन बाद बैजनाथजीसे देवी बाबू का भेंट मुलाकात हुई। देवी बाबू अकसर उन्हें बड़ी खातिरी से अपने बैठक में ले जाते और कभी कभी खिलाते-पिलाते भी थे। बैजनाथ जी को जब कभी मौका मिलता देवी बाबू के यहां जाते और उनसे अपने कलकत्ते आने का उद्देश्य भी कहते। देवी बाबू बहुत कुछ दम दिलासा देते और कहते—आप ऐसे गुणवान आदमी को सांभ सवेरे जरूर कोई न कोई काम मिल जायगा। घबराते क्यों हैं, मैं खुद आपको 'हौस' के बड़े साहब के पास ले चलूंगा और आपको एक अच्छी जगह दिलवा दूंगा। आप हमारे दोस्त ठहरे, बेखटके रहिए। देवी बाबू की बातों से बैजनाथजी को बहुत भरोसा होता, पर यह भरोसा केवल भरोसा ही रहा। देवी बाबू में यह बड़ा गुण था कि उनके पास चाहे जो कोई आवे चिकनी चुपड़ी बातों से

उसे खुश कर देते थे। उनके पास सैकड़ों उम्मेदवार आते बात की कमी किसी से भी नहीं थी पर काम—इसमें काम कुछ भी नहीं था। अस्तु, देवी बाबू के बैठकखाने में हरदम उनको दस-पांच आदमी घेरे बैठे ही रहते थे। इधर काम-काज की तरफ जो कुछ हो, बातचीत और भलमनसाहत के बर्ताव में देवी बाबू ने कुछ कसर नहीं रखी। दो एक दिन बैजनाथ और शिवनाथ को घर बुला कर खिलाया-पिलाया और बैजनाथ जी की स्त्री से भेंट करने के लिए कई दफे बुलावा भेजा। बसन्ती बेचारी रात दिन घर के काम-धन्धे में लगी रहती थी, इससे उसको फुरसत नहीं मिलती थी कि कहीं जाए आवे पर देवी बाबू की गृहणो जी बुग न मानें इस डर से एक दिन सबेरे ही सबेरे रसोईपानी से निश्चिन्त हो, पालकी मंगा कर चम्पा और दोनों बच्चों के साथ देवी बाबू के घर गई। देवी बाबू उस समय आफिस गये हुए थे। बाहर बैठकखाने में सभाटा था पर बसन्ती ने भीतर जाकर देखा तो घर लोगों से भरा हुआ है दाइयां झाड़ू दे रहो हैं, घर धो रही हैं, कोई कपड़ा सुखा रही हैं कोई तरकारी बना रही हैं और कोई सब कामों का निचोड़ काम लड़भगड़ रही है। नीचे कल के हौज में दाइयों और बहू बेटियों की मजलिस गुलजार हो रही है। दो पहर के समय सब वहीं स्नान करने गई हैं तरह तरह की बातें ताने हंसी दिल्लगी हो रही है, साथ ही साथ उस जगह जो जो घरवाली मौजूद नहीं है, उनके चाल-चलन, चरित्र की अपूर्व समालोचना हो रही है।

रसोई-घर में नाते-रिश्ते की कोई कोई बुढ़िया बैठी हुई हैं, कोई मासकिन जी के लिए भात की बटलोई उतार रही

थीं, कोई दो एक बात करने के लिए आई थीं, कोई गोद में बच्चवा ले कर ऊंच रही थीं ।

बसन्ती चम्पा के साथ रेलदार बरामदे से होती हुई मालकिन जी के शयनागार में गई । जा कर देखा कि मालकिन जी तेल-मालिश करवा रही हैं, उनकी एक आश्रिता उनका केश खोल रही है और दूसरी छाती पर रगड़ रगड़ कर तेल मल रही है । न जाने कैसा तो मालकिन जी की छाती में दर्द रहता है । कविाज जी ने स्नान के पहले घण्टा भर अच्छी तरह से तेल मालिश करने की व्यवस्था दी है । मालकिन जी अपने स्वामी की तरह हृष्ट-पुष्ट नहीं थीं, बदन दुबला-पतला, चेहरा रूखा और मिजाज भी जरा चिड़चिड़ा था । इस परिवार के नाते रिश्ते वाला बहू बेटी, ननद, दाई, दहलती सबको रोज संध्या सबेरे इस मिजाज का स्वाद चखना पड़ता था, और सुनते हैं कि रात को देवी बाबू भी इसके स्वाद से वंचित नहीं रहते थे । देवी बाबू पहले गरीब थे, उन्होंने अपने हाथ से धन कमाया है, इसलिए इनके मिजाज में कुछ ऐसा घमण्ड नहीं था, पर एकाएक गरीब के घर से आकर नई बहू राज पर चढ़ी थीं, फिर उनके मिजाज का कहना ही क्या था, जमीन पर पैर नहीं पड़ते थे मिजाज माना आकाश पर चढ़ा जाता था । बसन्ती के घर में पैर रखते ही, मालकिन जी बोलीं—तुम लोग कौन हो ?

बसन्ती—यहो हम लोग कुन्दनार से आकर तुलोपट्टी में ठहरे हुए हैं, बाजपेई ब्राह्मण हैं । आपने कई बार बुला भेजा था, पर घर के काम धन्धे से फुसत नहीं मिलती थी, आज बड़ा चेष्टा से आई हूँ ।

शुश्रूषा—हाँ, हाँ, अब समझ गयी, आओ, बैठो । अगले

जमाने में मुहल्ले में कोई भी नया आदमी आता तो अड़ोसी-पड़ोसी से पहले मेल मिलाप करता था, पर भाई अब वह रीति नहीं रही, अब तो लोगों को न जाने घर से बाहर निकलते क्या होता है ? खैर तुम भाई तो, यही बड़े भाग्य। कुंदनपुर कहाँ है ? वहाँ भले मानुसों की बस्ती है ?

बसन्ती—हाँ है क्यों नहीं, तीस चालीस घर भले मानुसों की बस्ती है, और बहुत से छोटे आदमियों की बस्ती भी है। आरा का नाम तो सुना ही होगा, बस वहाँ से छः सात कोस पर हमारा गांव है।

गृहिणी—हाँ, हाँ, वही आरा, पटना, हमारे यहाँ की दाइयाँ सब वहीं की हैं, यह कह कर मालकिन जी जरा मुसकुराईं। बसन्ती चुप हो रही। थोड़ी देर बाद गृहिणी जी बोलीं—यह दूसरी शायद तुम्हारी बहिन है ? हाय, हाय, इसी उमर में बिधवा हो गई ! क्या करोगी, नारायण की जैसी मरजी, सबके भाग्य में सुख थोड़े ही है किसी के पाम रुपये होते हैं, कोई कंगाल है, भगवान् का जो इच्छा। तुम्हारे बच्चे दोनों अच्छे हैं ? ऐसे दुबले क्यों हैं ?

बसन्ती—ये जन्म से हाँ ऐसे हैं, कभी-कभी बुखार हो आता है, और छोटे के पेट में भा कुछ बीमारी हो गई थी अब कुछ अच्छा हुआ है।

गृहिणी—इनको दूध पिलाओ, जिसमें लड़के मोटे ताजे हो जायँ, यह देखो न हमारे लड़कों के लिए लड़के पाँछे सेर भर दूध की बंधी लगा हुई है आध सेर सबेरे और आध सेर शाम को, इतना भी दूध नहीं मिलेगा तो भला लड़के पलंगे कैसे ?

बसन्ती—दूध तो पिलाती हूँ, ग्वालिन जो दूध देती है,

आधा पानी आधा दूध, उससे भला क्या होगा, तुम्हीं बतलाओ ?

गृहिणी - अरे राम राम ! तुम ग्वालिन का दूध पिलाती हो, हमारे घर में भला ग्वालिन पैर रखे तो सही। घर में गऊ है, उस दिन वह किसी साहब की गऊ ८० में खरीद कर लाए हैं, पांच सेर दूध देता है। घर की गऊ का दूध पिलाए बिना क्या लड़के पलते हैं, ग्वालिन का दूध तो पोखरी का पानी है।

बसन्ती जरा धीरे धीरे बोलो - हाँ, पर सब की तो एक-सी हालत नहीं है, नारायण जी ने आपके ऐसा धन कितने आदमियों को दिया है ? हम गऊ कहाँ पावें बतलाओ।

मालकिनजी जरा खुश होकर बोलीं - "हाँ सो तो है ही। फिर क्या करोगी, जिस तरह हो बच्चों को बड़ा करो। जब जिस बीज की जरूरत हो हमारे पास आ जाया करो, हमारे घर में दूध की कमी तो है नहीं, जब जो मांगोगी मिल जायगा।

बच्चों की माँ - हाँ, क्यों नहीं इस घर में कमी किस बात की है ? दूध-दही का तो पनाला बहता है हमीं लांग खाकर नहीं अघाती, नौकर-नाई खाकर समाप्त नहीं कर सकते। तुम्हें जब जो जरूरत हो मालकिनजी के पास सीधी चला आना, मालकिनजी के मन में जो माया दया है, तुम भी तो ब्रह्मण की जाति ठहरी मांगने में लज्जा ही क्या है।

जमुना की माँ - हाँ क्यों नहीं, भगवान को कृपा से जैसा धन दीनत है, दान पुण्य भा वैसा ही है। मालकिनजी की बड़ी-लत अड़ास-पड़ोस की पांच जनां खाके गुजारा करती हैं।

गृहिणी—तुम्हारे स्वामी की कहीं नौकरी लगी है ? उनके पास आया था न ?

बसन्ती—हाँ, आये तो थे, बाबूजी ने कहा भी है कि कुछ करवा देंगे । सो आप लोग मन में करें तो नौकरी लगना कौन सी बड़ी बात है ।

गृहिणी—हाँ, क्यों नहीं, साहब लोगों के यहाँ इनका बड़ा मान है, इनकी बात कोई नहीं टालता ? वही अभी उसी दिन तो एक छोक्के को २५) पर नौकर रखवा दिया है, ब्राह्मण के घर का लड़का जूती चटकाता फिरता था, पैसे पैसे को मोह-ताज था ।

डेढ़ घण्टे बाद मालकिन जी की मालिश खतम हुई, मालकिनजी स्नान के लिए उठीं ।

बसन्ती सदा ही से बड़े शान्त स्वभाव की थी, संसार के बहुत से दुख क्लेश उसे सह गए थे, पर बड़े आदमियों के दरवाजे आकर खड़े होना उसने अभी तक नहीं सीखा था, सो यह पहली शिक्षा उसे जरा कड़वी लगी । अस्तु, गृहिणी जी से विदा होकर छोटी बाहन और बच्चों के साथ वह धीरे-धीरे बाहर आकर पालकी पर सवार हो घर चली आई ।

१४

कलकत्ता आने के बाद कई सप्ताह तक चंपा बड़े आनन्द से थी। नई-नई चीजें देखती सुनती और घर का काम-काज बहुत कुछ नए ढंग से करती थी। सरला बालिका का मन इससे बड़ा प्रसन्न रहता था। यद्यपि कलकत्ते की कड़ी गरमी, गांव से इन्हें अधिक सताती थी और गांव का छायापूर्ण ठंडी फूस की भोपड़ी की अपेक्षा कलकत्ता का यह छोटा सा पक्का दोमंजिला मकान, दोपहर के समय गरम आग मालूम पड़ता था, पर चंपा इन सब कष्टों को तुच्छ करके बड़े उत्साह से घर का काम-धन्धा करने लगी। यद्यपि उसका सदा का हँस-मुख चेहरा कुछ मलीन और शरीर कुछ दुबला हो आया था, पर वह हरदम घर के काम में लगी रहती और जब कभी फुरसत मिलती खेलने दौड़ जाती, अतएव उसके शरीर का यह थोड़ा सा परिवर्तन बैजनाथ या वसन्ती किसी ने नहीं लखा।

बरसात लगते ही, कलकत्ता की बरसाती हवा से चंपा को बुखार आ गया। एक रोज शरीर में बड़ी कमजोरी मालूम पड़ने लगी। शाम को लड़की घर का कुछ धन्धा नहीं कर सकी। साने को कोठरी में एक चटाई बिछा कर पड़ी रही।

संध्या को वसन्ती ने उस कोठरी में जाकर देखा कि चंपा सोई हुई है, देख कर बोली—ऐ चंपा, आज इस कुसमय में क्यों सोई हो। इस समय सोने से तबीयत खराब हो जायगी। चल, छत पर चलें।

चंपा—नहीं, म आज छत पर नहीं जाऊंगी ।

बसन्ती ने चम्पा के शरीर पर हाथ रखा तो देखा कि शरीर गरम है, माथा तप रहा है, बोली—चम्पा, तुझे बुखार ऐसा मालूम पड़ता है, उठ बिछौना ठीक कर दूँ । उसी पर सो रह ।

चम्पा—ना, यह बीमारी कुछ नहीं है, अभी अच्छी हो जायगी, मैं अब अच्छी हूँ, उठने का जी नहीं करता ।

बसन्ती—नहीं बहिन, उठ कर सो, तुझे बुखार हुआ है, सिर में दर्द हो रहा है, ऐसी हालत में क्या जमीन पर पड़ी रहेगी ?

बसन्ती ने विस्तर बिछा कर, बहिन को उठा कर सुलाया और आस-पास बैठ कर उसके शरीर पर हाथ फेरने लगी ।

रात को वैजनाथ और शिवनाथ आए, देर तक बिछौने के दोनों बगल बैठे हुए दोनों धीरे-धीरे बातचीत करते रहे । रात के दस बज चुके तब बसन्ती वैजनाथ जी के लिए रोटी बनाने गई । शिवनाथ को भी ब्यालू करने को कहा, पर वह बोले कि मैं घर जा कर खाऊँगा ।

रोटी हो गई, वैजनाथ रोटी खाने गए । शिवनाथ अकेले चम्पा के पास बैठे हुए उसकी सेवा करने लगे । लड़की का शरीर इस समय खूब गरम हो आया था और दोनों आंखे लाल हो गई थीं । पीड़ा से लड़की, छिन छिन में करवट बदल रही थी, घड़ी घड़ी पानी मांगती और सिर के दर्द से बीच बीच में रोती थी । शिवनाथ ने बड़े यत्न से उसकी आंख के आंम पोंछ दिए, माथे और शरीर पर हाथ फेरने लगे । रोगी के सुखे ओठों में दो एक बूँद पानी देकर बड़ी सावधानी से अपने दुपट्टे से उसका मुँह पोंछ देने लगे ।

बैजनाथ चटपट खा कर आ गए और शिवनाथ से बोले—बड़ी रात हो गई है, अब तुम घर जाओ। शिवनाथ ने देखा कि चम्पा का रोग बढ़ता ही जाता है, बोले—‘नहीं आज रात को यहीं रहूँगा।’

बसन्ती भी खा पी कर निश्चिन्त हो आई। तब शिवनाथ बोले बसन्ती, आज मैं यहीं रहूँगा अगर दो एक परौठे हो तो मेरे लिए रख छोड़ना।

बसन्ती—हाँ, परौठे हैं, चम्पा के लिए आटा गूँधा था सो उसने तो खाया नहीं, वही है, पर रात जागरण क्यों करोगे, हमलोग दोनों हैं हो, चम्पा को देखेंगे, तुम घर जाओ, दो पहर रात हो चुकी।

शिवनाथ—‘नहीं बसन्ती, तुम्हारा छोटा बच्चा भी बीमार है, तुम्हें उसे भी देखना पड़ेगा और बैजनाथ भैया आज बहुत थके मांदे हैं, रात को जरा सोएंगे नहीं, तो बीमार हो जाएँगे। हम दोनों जने रहेंगे तो बारी बारी से रात भर जाग सकेंगे।’

बसन्ती - अच्छा तो चलो व्यालू कर लो।

शिवनाथ—एक थाली में करके यहीं घर के एक कोने में ढांप कर रख दो मैं थोड़ी देर बाद खाऊँगा।

बसन्ती—‘सो क्या परौठे ठण्डे हो जायँगे, इतनी रात गई, अब क्या खाओगे?’

शिवनाथ खाएंगे जी, मुझे बासी परौठे ही अच्छे लगते हैं। तुम रख तो दो।

बसन्ती चौंके में गई और वहाँ से थाली में करके चार परौठे एक पथरी में रसे की तरकारी और अचार सजा कर

पत्ता ढक कर उसी कमरे के कोने में ला रखा । बच्चे दोनों सो गए थे, उन्हें उठा कर खाट पर सुलाया । और दिन तो चंपा, बसन्ती और दोनों बच्चे एक खाट पर सोते थे, पर आज बैजनाथ जी के पास दोनों बच्चों को सुला कर बसन्ती छोटी बहिन के पास आ बैठी । चम्पा के सिरहाने बैठे हुए शिवनाथ तब तक बराबर चुपचाप उसकी सेवा कर रहे थे ।

शिवनाथ—बैजनाथ भैया, आप अब जरा आराम कीजिए फिर भोर में आप को जगा कर मैं सोऊँगा । चम्पा का शरीर ज्यादा गरम हो गया है, और वह बहुत छटपटा रही है । हम में से एक आदमी का उसके पास बैठे रहना अच्छा है । बसन्ती अकेली न रह सकेगी ।

बैजनाथ सोने गए । शिवनाथ और बसन्ती दोनों रोगी के पास बैठे हुए उसकी सेवा करने या तकिए के सहारे से ऊँघते हुए रात बिताने लगे । रोगी को जरा भी नींद नहीं आती थी, वह छटपटा रही थी, सिर के दर्द से अधीर होकर कभी रोती या कभी प्यास से व्याकुल होकर पानी माँगती थी । शिवनाथ भूख-प्यास निद्रा सब बिसार कर उन सूखे होठों में जल सिंचन करते रहे ।

ढाई पहर रात बीत गई । तब बसन्ती ने बहुत जिद करके शिवनाथ को भोजन के लिये उठाया । उस समय चम्पा का बुखार जरा धीमा पड़ा था, और शरीर की गरमी भी कुछ कम हो गयी थी, पीड़ा की कुछ कमी होने से बालिका सो गई थी ।

बसन्ती बोली—शिवनाथ, अब तुम घर जाओ चम्पा की जरा आँख लगी है, तुम भी अब जाकर सोओ, सारी रात जागने से शरीर खराब हो जायगा ।

शिवनाथ—तुम्हें क्या सारी रात जागना अच्छा है, सारा दिन घर-गृहस्थी का धन्धा किए हो, फिर कल सारा दिन करना पड़ेगा। मेरा क्या, कल कालेज न गया सही।

बसन्ती—नहीं शिवनाथ, हम लोगों को तो रात जागने की आदत है, लड़के बाले बीमार होते हैं तो सारी रात जागना पड़ता है, हम लोगों को कुछ नहीं होता। तुम लोग मर्द ठहरे, तुम्हें क्या रात जागना सहेगा ? मेरी बात मानो जाओ। न हो तो कल सबेरे फिर देख जाना।

चम्पा की सचमुच आंख लग गई थी। यह देख कर शिवनाथ जी को भी कुछ धीरज आया और रात के सन्नाटे में रास्ते से होते हुए सबेरे चार बजे घर आकर वे सो रहे।

छः बजे तड़के ही उठकर शिवनाथ अपने एक मुलाकाती डाक्टर मोती बाबू के पास गये। मोती बाबू हाल ही में मेडिकल कालेज से पास कर के निकले हैं। तुलापट्टी ही में उनका घर और दवाखाना है, धीरे-धीरे अपनी डाक्टरी फैलाने की कोशिश कर रहे हैं। यह बड़े मेहनती, मनोयोगी, बुद्धिमान और विद्वान पुरुष थे, पर डाक्टरी बैदगी कुछ एक दिन में तो चल नहीं निकलती, अतएव अभी तक इनका कुछ ऐसा पसार नहीं हुआ था। इनके बड़े भाई गोपालदास हाईकोर्ट के एक नामी वकील थे। इनकी मदद से इन्होंने एक दवाखाना खोला था, पर इसमें नफा तो कुछ कम, नुकसान की सम्भावना ही अधिक थी। दुनिया में लाखों आदमी अपने अपने उदर-चेष्टा में घूम रहे हैं इसके बीच में एक युवा का आगे बढ़ना जरा कड़ी मंजिल है, चारों ओर का रास्ता बन्द, भीड़ भाड़ से रुका हुआ, पर मोती बाबू मेहनती और धीर प्रकृति के आदमी थे, मेहनत, यत्न और अपने गुणों से धीरे-धीरे उन्नति

का मार्ग साफ करने की ठान कर दृढ़ संकल्प और स्थिर चित्त से अपने काम में लगे हुए थे। इसी बीच में दो एक घरों में उनका नाम अच्छा हो गया था, जिस घर में वह दो चार दफे जाते उस घरवाले फिर दूसरे डाक्टर को नहीं बुलाते थे। सबेरे सात बजे शिवनाथ मोती बाबू को लेकर बैजनाथ जी के घर आए। मोती बाबू ने बहुत देर तक बड़ी सावधानी और यत्न से चंपा को देखा। बुखार इस समय कम हो गया था पर तो भी थर्मामेटर में १०१ डिगरी दिखाई दिया। नाड़ी गिनी तो १२०। गम्भीर मुंह किए हुए डाक्टर साहब बाहर आए।

बैजनाथ जी ने पूछा—कैसा देखा, रात से तो बुखार बहुत कम हो गया है, मालूम पड़ता है कि आज फाका करने ही से बुखार छूट जायगा।

मोती बाबू—नहीं, जनाब मैं समझता हूँ कि ऐसा नहीं है मुझको रिमीटेन्ट फीवर के सारे लक्षण दिखाई देते हैं। इस समय थोड़ा कम है, अभी भी अच्छा ज्वर है और दिन के समय और बढ़ जाय तो कोई आश्चर्य नहीं।

बैजनाथ जी जरा डरे। इन दिनों कलकत्ते में 'रिमीटेन्ट ज्वर, से बहुत से लोग मर रहे थे, बोले—बुखार कब कब तक रहेगा ?

मोती बाबू—मैं अभी ठीक नहीं कह सकता और एक दफे देख कर तब कहूँगा 'रिमीटेन्ट ज्वर' मालूम होता है, अगर वही हुआ तो जरूर कुछ भोगावेगा। आप लोग कुछ धरिए मत, डर की कोई बात नहीं है।

यह कह कर दवा का नुसखा लिख कर बोले 'दो दो घंटे पर यह दवा खिलाना, शाम तक खिलाना, शाम को हम

फिर आकर देखूँगा। रोगी का माथा बड़ा गरम हो गया है, आंखें लाल हो गई हैं, सारा दिन सिर पर बरफ रखना और पानी मांगे तो बरफ खिलाना और खाने के लिए अरारुट या नेसनल्स मिल्क देना, दिन में तन चार बार खिलाना। इस रोग का खाना ही दवा है।

फिर शिवनाथ के साथ घर से बाहर आकर बोले—शिवनाथ जी, आपको मेरा एक काम करना पड़ेगा।

शिवनाथ—कहिए।

मोती बाबू—मौका पाकर बैजनाथ जी से कहिएगा कि इस चिकित्सा के लिए मैं द्रव्य ग्रहण नहीं करूँगा।

शिवनाथ—क्यों ?

मोती बाबू—देखिए आपसे हमारी कितने दिनों की दोस्ती है, आप के गाँव के आदमी से मैं फीस नहीं लूँगा। और बैजनाथ जी कुछ ऐसे बड़े आदमी भी तो नहीं हैं, उनसे मैं फीस नहीं लूँगा।

शिवनाथ—बैजनाथ बाबू गरीब आदमी हैं तो क्या हुआ ? मैं उनको अच्छी तरह जानता हूँ, मुफ्त में इलाज करवाने के बदले अगर आप रुपया लेकर इलाज करेंगे तो वह ज्यादा संतुष्ट होंगे।

मोती बाबू—नहीं शिवनाथ जी, आपको मेरी यह बात माननी पड़ेगी। मुझे यह विश्वास नहीं है कि यह रोग जल्दी आराम हो जायगा, मुझको बहुत दिनों तक आना पड़ेगा, हमेरा आना पड़ेगा। यदि बिना फीस के आ सकूँगा तो जब जरूरत होगी चला आऊँगा कुछ संकोच नहीं होगा।

शिवनाथ—अच्छा, आपको बात मानता हूँ, वैसा ही करूँगा, पर आप के समय का भी तो मूल्य है, रुपए की

जरूरत भी है, बिना फीस के रोगीयों को देखने से आपका रोजगार किस तरह चलेगा ?

मोती बाबू—नहीं, शिवनाथबाबू, मेरा समय कुछ ऐसा कीमती नहीं है, अभी तक भी मेरी कुछ ऐसी चलती नहीं हुई है, घर ही में बैठा रहता हूँ। इस बारे में आगे क्या होगा यह भी मैं नहीं जानता। एक इसी रोगी के इलाज की फीस न लेने से मेरी कुछ विशेष हानि नहीं होगी। अपने दोस्त का एक काम करो, मेरी यह बात मानो। अन्त में लाचार होकर शिवनाथ ने डाक्टर बाबू की बात स्वीकार की और उनके जाने के बाद दवा, बरफ आरारुट मिसरी रोगी के लिए जो जो जरूरी चीजें थीं, खरीद लाए। उन्होंने उस दिन रोगी की शय्या के पास बैठे रहने के लिए बड़ी जिद की, पर वैजनाथ जी ने उनकी एक न मानी, उन्हें कालेज भेजा।

शाम को फिर मोती बाबू को साथ लेकर शिवनाथ आए। डाक्टर साहब रोगी को देखते ही समझ गए कि वह जिस बात से डरते थे, वही 'स्पष्ट रिमोटेंट ज्वर' है। रोगी की दोनों आंखें और भाँ लाल हो आई थीं, सारा दिन सिर पर बरफ रखे रहने पर भी तपन कम नहीं, चंपा का स्वाभाविक गोरा चेहरा ज्वर के प्रकोप से लाल हो आया था, सारा दिन छटपटाती हुई वह इस करवट से उस करवट करती रही, कभी जरा-सा आंख लगी तो कभी उठकर जिद करके बहन का गला पकड़ कर रोती, छन भर में थक कर फिर सो जाती, दिन भर यही हाल रहा। मोती बाबू ने थर्मामेटर लगाया तो १०५ डिग्री बुखार और नाड़ी की गति प्रति मिनट १५० मिली। वे कुछ चिन्तित हुए। घड़ी घड़ी दवा खिलाना मना

किया और दूसरा नुसखा लिखकर बोले—दिन में तीन दफे और रात को जब अपने आप जागे तक एक दफे पिला देना । पथ्य की विशेष न्यवस्था की, और शिवनाथ को निराले में ले जाकर कहा—इस रोग का खाना ही दवा है, घड़ी घड़ी पथ्य देना, यदि यथेष्ट भोजन नहीं मिला तो रोगी की जान नहीं बचेगी ।

कई दिनों तक चम्पा इस भयंकर ज्वर से कष्ट पाती रही । शिवनाथ ने अथ बैजनाथ की एक न मानी, पढ़ना छोड़कर रात दिन उन्हीं के घर वे रहने लगे, दवा पथ्य बाजार से खरीद लाना, रोगी को समय पर औषधि-पथ्य देना, सब काम अपने हाथ से करते थे, गृहस्थी के काम-काज के कारण बसन्ती कभी रोगी की शय्या से उठकर अन्यत्र जाती तो शिवनाथ वहीं चुपचाप बैठे रहते । यदि बैजनाथ जी कभी थकावट या चिन्ता से सो जाते तो शिवनाथ बिना पलक झपकाए रोगी की सेवा में लगे रहते थे । जब बुखार की प्रचण्ड गरमी से बालिका चम्पा छटपटाने लगती तो शिवनाथ आहार-निद्रा थकावट सब भूलकर तरह-तरह की बातें, तरह-तरह के किस्से, नाना प्रकार से दिलासा देकर चम्पा को शान्त करते थे, असह्य ज्वर की पीड़ा में शिवनाथ जी की इन बातों से चम्पा बेचारी को कुछ शान्ति मिलती थी । वे कभी सिर पर हाथ फेर कर, उसे धीरे धीरे सुला देते, कभी उसके दुबला-पतला गौर वर्ण रक्तशून्य बाहु-लता को अपने हाथ में लेकर रोगी को तुष्ट करते । सिर गर्म होने पर सारा दिन उस पर बरफ रखे बैठे रहते थे । आधी रात को रोगी की धीमी आवाज सबसे पहले उनके कान में पहुँचती, बालिका के सुखे होंठ उनके हाथ से एक घूंट

पानी या एक चम्मच अरारूट पाते, नींद खुलते ही बालिका को उनके हाथ से औषधि और पथ्य मिलता था ।

दस बारह दिनों में चम्पा बहुत कमजोर हो गई, अब उठने बैठने की ताकत भी नहीं रही । आंख से अच्छी तरह दिखाई भी नहीं देता । मुँह सूख कर पीला ठांठर हो गया ज्वर बराबर रहता था । सबेरे १०२ डिग्री से घटता नहीं था और शाम को १०५ डिग्री तक चढ़ जाता था ।

मोती बाबू जरा चिन्तित हुए, बोले—शिवनाथ ! चौदहवें दिन यह रोग आराम होना चाहिए, यदि ऐसा न हुआ तो रोगी की जान का खटका है । बालिका जैसी कमजोर हो गई है, इससे मुझे मालूम पड़ता है कि और ज्यादा दिन तक तकलीफ बरदाश्त नहीं कर सकेगी ।

तेरहवें दिन डाक्टर साहब दिन भर रंगी के पास रहे और हरदम रोग पर दृष्टि रखी । शाम को ज्वर जरा कम हुआ, पर उससे कुछ भरोसा नहीं किया जा सकता था । डाक्टर साहब बोले—देखो शिवनाथ बाबू, आज रात भर रोगी को खूल सावधानी से देखना, कल सबेरे थर्मामीटर लगा कर देखना यदि ६८ हो जाय यदि १०० से जरा भी कम हो तो उसी समय पांच ग्रेन क्यूनाइन खिला देना, आठ बजे के भीतर ही मैं आऊँगा । शिवनाथ ने ये सब बातें बैजनाथ या बसन्ती किसी से भी नहीं कहीं । शाम को घर से भोजन करके आकर चम्पा की शय्या के पास वे बैठ गए, रात भर अपनी जगह से हिले तक नहीं, क्षण भर भी पलक नहीं, झपकाई । पौ फटने की सफेदी खिड़की से नजर आई, उस समय सारे घर में सन्नाटा छाया हुआ था । बैजनाथ जी सोए हुए थे, बसन्ती भी सारी रात जाग कर दोनों बच्चों के पास सो गई

थी, बच्चे दोनों भी सोए हुए थे। पहली रात को बहुत कुछ छटपटाने के बाद चंपा की भा। इस समय आँख लग गई थी। घर में एक दीया चल रहा था, टिमाटिमाते हुए दीपक की मन्द ज्योति रोगी के सूखे हुए पीले मुख पड़ रही थी।

शिवनाथ धीरे धीरे उठे, रोगी के अतिशय क्षीण हाथको धीरे धीरे पकड़ कर उन्होंने उठाया, नाड़ी ऐसी तेज थी कि गिन नहीं सके। फिर थर्ममीटर लगाया, घड़ी को तरफ देखते हुए गाल पर हाथ रख कर बैठ रहे। इस समय उनका कलेजा धक धक कर रहा था। घड़ी टिक टिक बोलने लगी, एज मिनट, दो मिनट, चार मिनट पाँच मिनट बीता, उन्होंने थर्मामीटर रोगी के बगल से निकाला। निकाल कर दीये के पास गए, कलेजा उछल रहा था, हाथ काँप रहा था। पहले तो दीये की धीमी रोशनी में उन्हें कुछ दिखाई नहीं पड़ा। हाथ से सिर के बाल हटाकर माथे का पसीना पोंछा, निद्राशून्य चक्षुओंको एक बार दो बार पोंछा, फिर थर्मामीटर की तरफ निगाह डाली। क्या देखा ? देखते ही चौंच पड़े ! पर नहीं दीये की रोशनी का ठीक विश्वास नहीं, शायद गलती हुई हो। दिल बाँध कर खिड़की के पास जाकर सुबह के उजियाले में फिर थर्मामीटर को देखा, १०३ डिग्री दिखाई पड़ा। माथे पर हाथ मार कर, वहीं धरती पर गिर पड़े।

इनके गिरने का आवाज से बसन्ती की नींद खुल गई। बहिन के पास जाकर देखा तो वह सो रही है, खिड़की के पास देखा कि शिवनाथ धरती पर सोए पड़े हैं ! मन में कहने लगी—आहा ! शिवनाथ बेचारा सारी रात जाग कर थक गया है, यहीं जमीन ही पर पड़कर सो गया, आहा ! हम लोगों के लिए इसने कितनी

तकलीफ उठाई है। शिवनाथ कुछ नहीं बोले, उनके दिल में जो भीषण पीड़ा हो रही थी बसन्ती को उसका भागी क्यों बनाते ?

और भी एक हफ्ते बुखार रहा। चम्पा इतनी कमजोर हो गई कि करवट भी नहीं बदल सकती थी। पानो पीने के लिए सिर भी नहीं उठा सकती थी। झाड़ू की सींक की तरह जरा जरा अंगुली हिलाती थी। चम्पा का मुँह ऐसा हो गया था, कि उसकी तरफ देखा नहीं जाता था, पर निराशा से ज्ञान शून्य होकर चुचचाप मिट्टी के पुतले की तरह बैठे हुए शिवनाथ सारी रात उसके मुँह की तरफ देखते रहते थे। गरीब की लड़की, बचपन में खाने पहिने की तकलीफ सहकर भी पली थी, दुर्दैव से बचपन में विधवा होकर भी, बाहिन के स्नेह से, यह छोटा सा फूल ग्राम की कुटिया में कई दिन के लिए खिला था। अहा ! आज शायद उस पुष्प ने फिर से मुँह बन्द कर सिर नीचा कर लिया। दरिद्रा बालिका का जीवन-इतिहास शायद आज समाप्त होने लगा है। बीसवें दिन से डाक्टर बाबू भी रात दिन बैजनाथ जी के घर रहे। शिवनाथ को एकान्त में ले जाकर उन्होंने ने कहा---देखो भाई, तुमसे हम कोई बात छिपाएँगे नहीं, और एक दिन में यदि ज्वर नहीं छूटेगा तो इस कमजोर मुर्दे के शरीर में प्राण टिका कर रखना आदमी की ताकत से बाहर है। दो तीन दिन मैं और देखूँगा, फिर मुझे बिदा करना। मुझ से जो हो सका किया, पर प्राण रखना या लेना भगवान के हाथ है।

बाइसवें दिन शाम को ज्वर जरा घट गया, पर उससे कुछ उम्मेद नहीं की जा सकती थी। रात को दोनों रोगियों की शय्या के पास बैठे रहे। उस दिन रात भर चम्पा सोई

रही। यह आराम होने का चिह्न है या मरने की कमजोरी की पहली निशानी है ? बड़े तड़के शिवनाथ ने फिर थर्मामेटर लगाया। थर्मामेटर लेकर खिड़की के पास गए। न जाने क्या देखा, सिर पर हाथ मार कर चुपचाप जमीन पर गिर पड़े।

मोती बाबू जरा नहीं घबड़ाए। विपद के समय धीरता चिकित्सकों का कीरता है। धीरे धीरे उन्होंने शिवनाथ के हाथ से थर्मामेटर लिया, देखा, और धीरे से शिवनाथ का हाथ पकड़ कर उठाया।

शिवनाथ ने निराश होकर पूछा—हूँ। तो अब बालिका की आयु समाप्त हो गई ?

डाक्टर—नहीं, ईश्वर बालिका को दीर्घायु करें, अब तो यह बच गई।

थर्मामेटर देखने में शिवनाथ ने गलती की थी ६८ डिग्री दिखाई पड़ रहा था। चम्पा के शरीर पर हाथ फेर कर देखा तो ज्वर छूट गया बुखार छूटने से कमजोर बालिका गहरी नींद में सो रही है। सिर से बाल हटा और माथे का पसीना पोंछ कर शिवनाथ घर आए हफ्ते भर तक उन्होंने रात जागरण किया था, मुँह सूख गया था आँखों के नीचे श्यामता छा गई थी पर आज उनके मन की सारी घबराहट जाती रही।

बीमारी आराम होने के बाद चम्पा कई दिनों तक बिछौने से उठ नहीं सकी। बिछौने से उठने के कई दिन बाद तक घर से बाहर नहीं निकल सकती थी। इसके बाद धीरे धीरे उठकर बरामदे में टहलने लगी या कभी शिवनाथ जी की मदद से छत पर जरा जाकर बैठती थी। हलका चिड़िए ऐसा दुबला पतला शरीर शिवनाथ जी अनायास ही दोनों हाथों से उठा कर छत पर ला रखते थे और फिर छत से नीचे ले आते थे।

अब उन्होंने कालेज जाना भी शुरू कर दिया, पर हर रोज शाम को वैजनाथ जी के घर आते और नाना प्रकार की बातें, किस्से कहानों कह कर चम्पा को प्रसन्न रखते थे। नौ बजे चम्पा के सोने के बाद आप घर जाकर सोते। चंपा भी हर रोज शिवनाथ जी का आसरा देखती रहती थी, उनके पैरों की आहूट पहले उसी को सुनाई देती, शिवनाथ सीढ़ी चढ़ते ही पहले चंपा का शान्त, सफेद, हंसमुख चेहरा देख कर तृप्त होते।

छत पर ले जा कर शिवनाथ घंटों चंपा को इधर-उधर की बात सुनाया करते। कुन्दनपुर की बात, लड़कपन के खेल की कहानी, चंपा की गरीब माता की अवस्था, अपनी माता की कहानी बहिन की अवस्था, इत्यादि नाना प्रकार की बातों से उसका दिल बहलाते थे। चंपा भी एकाग्र मन से शिवनाथ जी की मीठी-मीठी बातें सुनती और उनके हंसमुख चेहरे की

तरफ निहारती रहती थी। चम्पा शिवनाथजी के अमृत मय वचनों से तृप्त होती थी। रात तक उनके अमृतमय वर्चनों को सुनती रहती, उस अमृतपूर्ण, स्नेहशाली, प्रसन्न मुख की तरफ देखती रहती या थक कर उनके हृदय पर सिर रख देती। यत्न के साथ ही शिवनाथ जी का स्नेह बढ़ने लगा। वह बालिका का दुबला-पतला हाथ अपने हाथ से पकड़ कर उसका सिर अपने हृदय पर रख कर तृप्त होते थे। एक दिन दोनों इसी तरह छत पर बैठे हुए थे कि वहां बैजनाथ जी आए और शिवनाथ को देख कर बोले—शिवनाथ, आज गोपाल बाबू ने हम लोगों को न्योता दिया है, चलोगे नहीं ?

शिवनाथ—हाँ, हाँ, मैं तो भूल ही गया था, मेरी कहीं भी जाने की इच्छा नहीं होती, पर बिना गए चलता भी नहीं।

बैजनाथ—नहीं, देखो चम्पा की बीमारी के दिनों में गोपाल बाबू हम लोगों को दिलासा देने और अपने भाई के इलाज का देखभाल के लिये रोज आते थे, उनके घर तो जाना ही होगा। चलो अभी चलना होगा।

शिवनाथ और चम्पा दोनों उठ खड़े हुए। बैजनाथ जी ने चम्पा को पकड़ कर धीरे-धीरे सीढ़ों से उतारा और उसे कमरे में सुला कर आप घर से बाहर निकले। रास्ते में चलते-चलते शिवनाथ से बोले—तुमने भाई, इस बीमारी में हमारे लिए जो किया है, उसका बदला हम इस जन्म में नहीं चुका सकते, पर इसके सबब से तुम्हारी पढ़ाई लिखाई में भी बड़ी हानि हुई है, महाने भर से कालेज नहीं गए हो, अभी भी तुम्हारी पढ़ाई ठीक से नहीं हो रही है, मन लगा कर पढ़ो। तुम्हारी परीक्षा में अब ज्यादा देरी नहीं है।'

शिवनाथजी कुछ देर तक चुप रहे, फिर बोले—हाँ, अब

समय तो थोड़ा ही रह गया है, अब जरा मन लगा कर पढ़ना जरूरी भी है। चम्पा अब अच्छी हो गई है पर बसन्ती से कह देना कि जब कभी फुरसत मिले उसे रोज छत पर ले जा कर बातचीत से उसका मन बहलाए रखे। डाक्टर ने कहा है कि मन बहला रहने से चम्पा का शरीर बहुत जल्द पुष्ट हो जायगा। बातचीत करते हुए दोनों गोपाल बाबू के घर जा पहुँचे।

मोती बाबू के बड़े भाई गोपाल दास बड़े बाजार के एक नामी रईस थे। इनकी उमर तीस से ज्यादा नहीं थी, पर यह बड़े बुद्धिमान, देशहितैषी और उत्साही पुरुष थे, इसी उमर में हाईकोर्ट के नामी वकीलों में इनकी गिनती हो गई थी। म्युनिसिपलिटि के मेम्बर भी थे और शहर की उन्नति के लिए यथासाध्य चेष्टा किया करते थे। मकान इनका बहुत बड़ा नहीं था, पर साफ सुथरा और सौफियाने ढंग का बना हुआ था। बाहर एक मंजिला बैठखाना था, उसमें एक टेबुल, पाँच छः कुर्सियाँ, पुस्तकों से भरी हुई दो काँच की आलमारियाँ और दिवाल पर आमने सामने चार पाँच नफीस तस्वीरें लटक रही थीं। जमीन चटाई से मढ़ी हुई और सारा घर साफ सुथरा, स्वामी की रुचि और बुद्धिमत्ता का परिचय दे रहा था। टेबुल पर मोमबत्ती के दो समादान जल रहे थे। इन दोनों के आते ही गोपाल बाबू ने हँसकर खातिरी से बैठाया और बैठे हुए बहुत देर तक इधर उधर की बातें करने लगे। इनका स्वभाव बड़ा गम्भीर था। ज्यादा बोलते नहीं थे पर बर्ताव बड़ा यथोचित होता था। चम्पा की बीमारी के समय रोज बैजनाथा के घर जाते थे, उनकी यथासाध्य सहायता करते और बातचीत से उन्हें खुश रखते थे।

बहुत देर तक की बातचीत के बाद बैजनाथजी बोले—
 “कलकत्ते आकर आप जैसे पुरुषों से भेंट कर मैं बड़ा प्रसन्न हुआ हूँ। मैं गाँव गँवई का रहने वाला हूँ, वहाँ बुद्धिमान विद्वान आदमियों के कदाचित् ही कभी दर्शन होते हैं और आप लोगों के ऐसे उत्साही और देश-हितैषी जज्जन भी वहाँ बहुत कम दिखाई देते हैं।

गोपालदास—केवल मुँहजबानी देश हितैषिता है, या मन में ऐसी इच्छा हो भी तो वह काम में नहीं आता। हम लोग मामूली आदमी ठहरे, देश के लिए क्या कर सकेंगे ? अख्तियार ही क्या है ? इसका उचित स्थान या समय भी कहाँ है ?

बैजनाथ—जो जितना सके यदि उतना ही करे तो बहुत कुछ हो सकता है। सुनते हैं कि म्युनिसिपल कमिटी के मेम्बर होकर आप बहुत कुछ उपकार कर रहे हैं और सब लोग आप की तारीफ भी करते हैं।

गोपालदास—उपकार क्या है, कर्तार लोग जो कुछ हुकुम देते हैं वही होता है हल लोग भी वही कर छाड़ते हैं। कलकत्ते वालों को अपने मेम्बर चुनने का अख्तियार मिला है। लाट रिपन साहब सारे भारतवर्ष के खास खास शहरों को यह अख्तियार दे कर लोगों के सम्मान पात्र हो गए हैं, हम लोग और भी अख्तियार पाने की कोशिश कर रहे हैं देखो मिलता है कि नहीं।

बैजनाथ—मुझे तो पूरा विश्वास है कि हम लोगों को और अख्तियार अवश्य मिलेंगे, और मिलने से हम लोगों का उपकार भा होगा।

गोपालदास—बहुत उपकार होगा, इसमें भला क्या सन्देह

है ? देशशासन करने का ढंग हम लोग सैकड़ों वर्ष से भूल चुके हैं, ग्राम-शासन की चाल भी भूल गए हैं, केवल आपस में मुँहजबानी एक दूसरे की निन्दा और गाली-गलौज करना यही हम लोगों की जातीय उन्नति का उद्यम रह गया है। पर तो भी मुझे पूरा भरोसा है कि धीरे-धीरे हमारी उन्नति होती जायगी और अधिकार भी मिलते जायँगे। जैसे रात के बाद सबेरा अवश्य ही होता है, वैसे ही शिक्षा के बाद हम लोगों के अधिकार का विस्तार भी अवश्य ही होगा।

शिवनाथ—आप की बातों से मैं बड़ा सन्तुष्ट हुआ, मेरे मन में भी ऐसी ही आशाएँ उग रही हैं, हम लोगों के इस कठिन परिश्रम से हमदर्दी दिखाने वाले कै सज्जन हैं ? हम लोगों की ऊँची ऊँची अभिलाषाएँ दूसरों की दिल्लगी का लक्ष्य हैं, हमारे उद्यम की विफलता से वह खुश होते हैं हमारी जातीय चेष्टा, राष्ट्रीय जीवन संचार के कठोर उद्यम पर वह लोग दिल्लगी उड़ाते चुटकी बजाते हैं। मरणापन्न राष्ट्र जिस समय फिर से उठने की कोशिश करने लगे, कुछ आशा बाँधे तो क्या वह किसी की जरा सी हमदर्दी की उम्मीद भी नहीं कर सकता ?

गोपालदास—शिवनाथ जी, आप की उम्र में मैं भी ऐसा ही सोचता था, किसी अँगरेजी अखबार में जरा सा ताना-तरेज देख कर मेरा हृदय दुख जाता था। पर विचार कर देखिये केवल हमदर्दी आदि जो कुछ सद्गुण हैं, वे सब पोले माल हैं, देखने में बड़े सुन्दर दिखाई देते हैं, पर उनका मूल्य कुछ नहीं है। शिवनाथ जी, हम लोगों की क्षमता हमारी ही योग्यता और साधुता पर निर्भर है। कुछ दूसरों के हाथ में नहीं है। आओ, हम मिल कर काम करना सोखें फिर दूसरों

की हमदर्दी का आसरा न ताकेंगे, दूसरे के उपहास, तानों की परवाह नहीं करेंगे, दिन पर दिन आगे बढ़ते जायेंगे, फिर हमारी उन्नति का मार्ग कौन रोक सकता है ?

मोती लाल—मेरा भी ऐसा ही विश्वास है कि हम लोग धीरे धीरे उन्नति कर रहे हैं, पर भाई, यह उन्नति कितनी धीरे धीरे हो रही है। राजनीति की बात छोड़ दीजिए, समाज की ही बात लीजिये। मुँहजबानी, पुस्तकों समाचार-पत्रों में हम लोग कितनी बहस और तर्क-वितर्क करते हैं। पर वास्तव में एक भी सामाजिक उन्नति करने में कितनी देरी लगती है, बीसों वर्ष के आन्दोलन और लेकचरबाजी से एक भी सामाजिक कुरीति नहीं उठने पाती।

गोपाल बाबू—मोती भाई, मैं तो इसे इस जाति को दोष नहीं गुण समझता हूँ। जो जाति या समाज चटपट अपनी रीति नीति बदलने में तत्पर रहता है। वह ज्यादा दिन टिकता नहीं। तुमने तो फ्रांस का इतिहास भी सुना होगा, सौ वर्ष का जमाना हुआ, फ्रेञ्च लोगों ने सारी कुरीतियों को एकाएक उठा देने का निश्चय किया था उसका नतीजा क्या हुआ ? भयंकर राजविप्लव, धर्म-विप्लव, यह तो तुम जानते ही हो। किसी रीति रिवाजके बदलने में समाजको चटपटी नहीं करनी चाहिये, नहीं तो लाभ के बदले हानि अधिक होगी।

मोती—पर जिन रीतियों से एकदम सबनाश हो रहा है, क्या उनको भी नहीं उठाना चाहिए।

गोपाल—बहुत कुछ सख्त बूझ कर आलोचना करके तब उनमें हेरफेर करना उचित है। आलोचना, आन्दोलन से भी कुछ ऐसा विशेष लाभ होता नहीं दीखता। यदि समाज में जान होगी, मुर्दा न होगा तो समयानुसार लोग आप ही

हानिकारक रीतियों को त्याग देंगे। जिन्दा समाज का यही लक्षण है, उसका सुधार धीरे धीरे स्वयमेव हो जाता है।

मोती—मैं भी यही कह रहा था। यह सच है कि हमारे समाज का सुधार हो रहा है, पर हमारे जीवन की नाड़ी बड़ी क्षीण है। इस लिये सुधार की गति भी निहायत ही धोमी है। दूसरी तरफ देखिए व्यापार ही में हम लोगों की क्या उन्नति हो रही है। इसमें तो नए कानून की जरूरत नहीं, न राजाज्ञा की अपेक्षा है, न समाज के रस्म-रिवाजों से कुछ वास्ता है, जरा-सी कोशिश की उद्यम की जरूरत है। सो भी हमसे नहीं होता। अपने देश की रुई से अपना वस्त्र नहीं बना सकते, यूरोप से कपड़ा न आवे तो लँगोटी भी पहिनने को न मिले, दिन पर दिन देशी जुलाहों का सर्वनाश हुआ जा रहा है।

बैजनाथ—भला मिल के कपड़े का मुकाबला जुलाहे बैचारे हाथ से बुनकर किस तरह कर सकेंगे। मैंने ग्रामों के बहुत से बाजार बहुत से गरीबों के घर देखे हैं। मुझे याद आता है 'क पहले सबके घर में एक एक चरखा रहता था, पर अब तो एक चरखे के भी दर्शन न होंगे। उसका सबब यह है कि अब बड़िया से बड़िया विलायती सूत थोड़े दामों में बिकता है। बाजार में जो देशी कपड़ा १॥१॥ को बिकता है, वैसे ही विलायती कपड़ा ॥२॥ को मिल जाता है। इससे आम लोगों को बहुत फायदा हुआ, क्योंकि थोड़े दामों में उन्हें अच्छा कपड़ा मिला है, पर जुलाहे हाथ से कपड़ा बुनकर मिल का मुकाबला कभी न कर सकेंगे, यह निश्चय है।

मांती लाल—मैं भी यही कहता हूँ। आजकल सभ्य देशों

से हाथ का काम उठता जा रहा है, इसलिए अब बिना मशीन से काम किए हमें भी कोई चारा नहीं है। फिर इस भारतभूमि को मशीनों से क्यों न पाट दें ? हम लोगों में क्या इतना उत्साह, इतनी विद्या-बुद्धि नहीं है।

गोपालदास—मोती भाई, यहाँ विद्या-बुद्धि की कमी नहीं है, रुपए की कमी है। बिना भारी पूँजी लगाए एक मिल नहीं चल सकती और सबसे भारी हममें एक शिक्षा की कमी है, हम लोगों ने अभी दस जने मिलकर कोई काम करना नहीं सीखा है, यही शिक्षा सारी सभ्यता की प्रधान सहायक है। देखो, हमारे देश में विद्वान हैं, धनी हैं, राजनीतिज्ञ, धर्मप्रचारक सभी हैं, बुद्धिमानों की भी कमी नहीं है, पर दस आदमी का मिलकर एक काम करना यह शिक्षा और ही वस्तु है। यह हम लोगों को अभी तक नहीं आई। दस विद्वान मिलकर कोई उपकार का काम कर रहे हों या दस राजनीतिज्ञ मिलकर ऐक्य फैला रहे हों, या दस धनी मिलकर कोई बड़ा व्यापार कर रहे हों, ऐसा दृश्य तो शायद ही दिखाई देता है। सभी आप आप को प्रधान हैं। पर तो भी हमें उम्मेद है कि और शिक्षाओं के साथ हम यह भी सीखेंगे, क्योंकि बिना यह सीखे हमारा सभ्य होना असम्भव है।

यों ही बातचीत हो रही थी कि भीतर से नौकर ने आकर खबर दी कि भोजन तैयार है, सब लोग भोजन करने भीतर गए, भोजन के उपरान्त पान-तम्बाकू से सब की खातिरों कर थोड़ी देर तक और बातचीत करके गोपाल बाबू ने सबको बिदा किया। शिवनाथ जी अपने घर गए। बैजनाथ जी गोपाल बाबू की बातें सोचते सोचते ऐसे लवलीन हुए कि उन्हें बिलकुल खबर ही न रही कि किधर जा रहे हैं। रास्ते में

चन्द्रमा की ठंडी चांदनी से रजियाला हो रहा था, ठंडी ठंडी हवा चल रही थी, बैजनाथ जी टहलते टहलते चितपुर की तरफ जा निकले। वहाँ पहुँचने पर होश आया, न जाने कितनी रात गई, यही सोचते हुए लौट पड़े तो पीछे से गाड़ी की गड़गड़ाहट सुनाई पड़ी। मुँह फेरकर देखा तो फिटन की जोड़ी दौड़ी हुई चली आ रही है। सफेद बड़े बड़े घोड़ों की टापें मानो धरती को छूती नहीं हैं। घोड़े सड़े चले आ रहे हैं, फिटन गड़गड़ाती हुई बैजनाथ जी के बगल से होती एक बगीचे के फाटक के भीतर चली गई। उसके बाद फिर ऐसी ही एक जोड़ी आई, दो काले हेलर एक लेन्डो गाड़ी में जुते हुए थे। वह गाड़ी भी गड़गड़ाती हुई बगीचे के फाटक में घुस गई। फाटक के भीतर जाते समय किसी पहरेदार के खिलखिलाकर हँसने की आवाज आई।

बैजनाथ जी जरा उत्सुक हुए, विशेष देखने के लिए बाग के फाटक के पास गए—देखा कि फाटक पर नरपतसिंह, मेधा ओम्हा, निर्मल दूबे, गलमुच्छा चढ़ाए हाथ में लठ लिए दरवान लोग छाती ऊँची किए टहल रहे हैं। बगीचे के भीतर पत्थर की बड़ी सुन्दर सुन्दर पुतलियाँ और एक तालाब था। तालाब के ऊपर ही एक आलीशान इमारत थी, जिसकी खिड़कियों में लटकाकर परदे टँगे हुए थे और उनमें से छनकर बिजली की तेज रोशनी बाहर पड़ रही थी और रह-रह कर बाजे की आवाज और स्त्री-कण्ठ निसृत गीत सुनाई पड़ रहा था।

बैजनाथ जी ने धीरे से एक दरवान से पूछा—दरवान जी, यह किसका बगीचा है? दरवान जी ने जरा दाढ़ी बमेठी और मूँछ पर ताव देकर कहा—वाह! तुम नहीं जानते, शहर के

बड़े २ आदमी जानते हैं, तुम जानते नहीं, तुम नये आदमी हो क्या ?

बैजनाथ—हाँ भाई, हम नए आदमी हैं, इधर कभी आना नहीं हुआ, इसीलिए पूछते हैं ।

दरवान—यही होगा, यहाँ सब कोई यह बगीचा जानते हैं ! कलकत्ते के जितने बड़े बड़े आदमी हैं जमींदार, वकील, फौसली सब इस बगीचे में आते हैं ।

बैजनाथ—ऐसा ही होगा, हम गरीब आदमी हैं, हम भला यह सब बात किस तरह जानें !

दरवान—ठीक है, तुम्हारी तरह आदमी यह बगीचा नहीं जानता । आज बड़ा नाच होगा । बहुत रईस लोग आए हैं । बड़ा जलसा है ।

बैजनाथ—नाच करवाता कौन है ? बगीचा किसका है ?

दरवान—रघुनाथपुर के जमींदार चौधरी विजय-नारायण जी !

बैजनाथ जी के सिर पर मानो आकाश टूट पड़ा ।

हाय, हतभागिनी तारा । यदि धन से, संगमर्मर मण्डित इन्द्र पुरी तुल्य महल से, काली या सफेद जोड़ी से ही सुख होता, तो आज तेरे करम क्यों फूटते ?

१६

जिस दिन से बैजनाथ जी विजयनारायण जी का बगीचा देख आए थे, उसी दिन से हमेशा चिन्तित और गम्भीर रहते थे। एकाएक खोल कर बसन्ती से भी न कह सके। बसन्ती से यह बात छिपाते हुए भी उन्हें बड़ी तकलीफ होने लगी। क्या करें? कौन उपाय करें? बेचारी हतभगिनी तारा की खबर क्योंकर लें? क्या तारा को किसी तरह की मदद पहुँचा सकेंगे?

यही सब सोचते विचारते कई दिन बीत गए। अन्त में उन्होंने निश्चय किया कि चाहे जो हो, एक दिन विजयनारायण के घर जरूर जाएंगे। लड़कपन में जब विजयनारायण कभी कुन्दनपुर में आते तो उनको बहुत मानते थे, शायद अब भी बैजनाथ जी की दो एक सलाह मान लें, और नहीं तो एक बार अपनी आंखों से तारा की हालत तो देखते आवेंगे, फिर जो होगा, उपाय किया जायगा।

बैजनाथ जी ने ये ही सब बातें मन ही मन ठीक कर लीं, पर विजयनारायण जी से मुलाकात होना कोई हंसी खिलवाड़ तो था नहीं। चौधरी विजयनारायण जी बड़े नामी धनवान रईस थे, उनके सैकड़ों दोस्त थे, काम-काज का लगातार भँभट था, बैजनाथ ऐसे मामूली आदमी से मुलाकात करने की उन्हें फुरसत कहां? विजयनारायण जी शोभाबाजार में रहते थे, बैजनाथजी के पास गाड़ी-जोड़ी तो थी ही नहीं जो सवार होकर विजयनारायण जी से मिलने जावे। एक दिन पैदल ही

उनके बादशाही महल में गए। फाटक के दरवानों ने इनकी मामूली शकल देख कर उधर निगाह भी नहीं की और न इनकी बातों पर ही कुछ ध्यान दिया। बहुत कहने सुनने से भी खटिया रूपी सिंहासन पर से कोई नहीं उठा। कोई अंकड़ रहा या, कोई जम्हाई ले रहा था, कोई दाल चुन रहा था, कोई घर की दाई से हंसी दिल्लगी कर रहा था। बहुत देर के बाद उनमें से एक ने कृपा करके बैजनाथजी की ओर दृष्टि उठाई और पूछा—क्या है, बाबू? तुम सबेरे से क्यों बैठे हुए हो?

बैजनाथ—मैं विजयनारायण जी से मुलाकात करने आया हूँ, क्या उनसे भेंट होगी। बड़ी दूर से आया हूँ, जरा जाकर खबर तो करो, कहना कि कुन्दनपुर के बैजनाथ बाबू मुलाकात करने आए हैं।

दरवान—गांव के बहुत से आदमी आया करते हैं, महाराज जी सबसे मुलाकात नहीं कर सकते, उनको इतनी फुरसत कहाँ?

बैजनाथ—अच्छा, एक दफे जाओ तो। बड़ी जरूरत है, मुलाकात हो जाती तो अच्छा होता।

दरवान—सभी कोई एक न एक जरूरत लेकर आते हैं, महाराज जी से सभी लोगों को कुछ न कुछ जरूरत है, सभी कुछ न कुछ आसरा रखते हैं। तुम्हारा गांव कहाँ, लुन्टनपुर है, वहां लुटेरे लोग बसते हैं?

बैजनाथ—नहीं दरवान जी, कुन्दनपुर है, लुन्टनपुर नहीं जहां तुम्हारे मालिक की ससुरार है। तब एक महाशय जो खटिए पर अधलिटे हुए सब बातें सुन रहे थे, जम्हाई लेकर उठ कर बोले—‘हां, हां, हम जानते हैं, उसी कुन्दनपुर गांव

में महाराज जी ने विवाह किया है। तुम क्या महाराज जी की ससुरार के आदमी हो ?

बैजनाथ—हाँ, उसी गांव के हैं, महाराज से रिश्तेदारी भी है।

अब इनमें दो तीन बुद्धिमान गलमुच्छे वाले थोड़ी देर तक आपस में कुछ सलाह करने लगे। एक बोला—अहा गांव गंवई से सैकड़ों कंगले आया करते हैं, निकाल बाहर करो, दूसरा कहने लगा—नहीं, नहीं, महाराज जी की ससुरार का आदमी है, इसे एकाएक निकाल देने से माँ जी सुनेंगी तो नाराज होंगी। तीसरे ने यह फैसला किया कि अच्छा थोड़ी देर और बैठाओ।

बैजनाथ जी और भी थोड़ी देर तक बैठे। यह जरा चिन्ताशील समालोचना प्रिय थे। बड़े आदमियों के दरवानों की सभ्यता और सामाजिक आचार-व्यवहार की विशेष समालोचना का मौका इन्हें हाथ आया, और उससे इन्होंने बहुत कुछ उपदेश भी पाया।

जब दरवानों ने देखा कि यह कंगला टलता ही नहीं तो उनमें से एक खटिया से मुश्किल से उठा, और लम्बे चौड़े हाथों को आकाश की तरफ फैलाकर, जरा शरीर तोड़ अंकड़ाई ले, दाड़ी उमेठ, धीरे धीरे ऊपर गया। बैजनाथ जी आसरा देखते रहे। आध घंटे के बाद दरवान जी ने ऊपर से आकर खबर दी—जाओ इस समय मुलाकात नहीं होगी।

बैजनाथ—मेरा नाम बताया था ?

दरवान—अरे नाम क्या बताऊँ ? इतना सबेरे क्या महाराज जी से मुलाकात होती है। महाराज जी अभी सोकर नहीं उठे हैं। दस बजे उठते हैं। उसके बाद आना।

बैजनाथ जी क्या करें, लाचार होकर लौट आए। एक दिन दस बजे के बाद गए, उस समय महाराज जी घर पर नहीं मिले। एक दिन शाम को गए, महाराज जी बगीचे चले गए। एक दिन चार बजे गए, महाराज जी कहीं महफिल में चले गए थे। चार पांच दिन योही व्यर्थ दौड़-धूप करके एक दिन फिर शाम को गए, सौभाग्य से उस रोज विजयनारायण जी घर पर थे।

दरवान ने पूछा—तुम्हारा क्या नाम है? धामनाथ कि जामनाथ?

बैजनाथ—नहीं, नाम बैजनाथ है, कुन्दनपुर गांव से आया हूँ।

दरवान ने ऊपर जा कर खबर दी, नीचे आकर बोला—उपर जाइए। बैजनाथ जी ऊपर गए। रघुनाथपुर के पुश्तैनी चौधरी घराने के दरवान साहब के वारिस चौधरी विजयनारायण जी की उम्र करीब पच्चीस वर्ष की होगी। उज्ज्वल गौर वर्ण, शौकीनी और पोशाक लिवास का तो कहना ही क्या है। इस समय अपने खास दोस्तों के साथ उक्त चौधरी साहब विराजमान थे। उन्होंने बड़ी खातरी से बैजनाथ जी को मखमला कुर्सी पर बैठाया। बैजनाथ जी ने अपने को धन्य माना। सहसा कोई बात न छेड़ सके। इस बैठके की शोभा देख कर कुछ देर तक मोहित हो रहे। अब तक उन्होंने चौरंगी के बड़े बड़े अंगरेजों के महलातों के बरामदे में फरांसीसी पंखा चलते सड़क से देखा था लाट साहब की कोठी के फाटक तक हो आए थे, ताक-मांक करके दो एक अंगरेजी दूकानों का भीतरी ठाट भी कुछ कुछ देखा था, पर ऐसे सजे-सजाये नवाबी ठाट के कमरे के भीतर जाने का सौभाग्य उन्हें

आज तक प्राप्त नहीं हुआ था। कमरे की जमीन पर निहायत उमदा गलीचा मढ़ा हुआ था, उसमें की गुलाब लता, पत्ते, शाखाओं पर बैठी हुई चिड़ियाँ अजब बहार दिखा रही थीं। ऐसी फर्श पर चार जगह से पैबन्द लगा धूल भरा हुआ जूता रखते हुए बैजनाथ जी को कुछ संकोच हुआ। गलीचे पर आबनूस की लकड़ी की गद्दीदार लंबी चौड़ी नाना प्रकार के हरे मखमल से मढ़ी हुई कुर्सियाँ थीं। ऐसे मखमल का कोट कभी बैजनाथजी के बच्चों को भी पहिनना नमीब नहीं हुआ होगा। संगमरमर के टेबल, मूर्तियाँ ऊपर से बिलौरी भाड़ में बिजली की रोशनी चमक रही थी, जिससे घर में दिन ऐसा उजाला हो रहा था, बैठकेकी खिड़की से रोशनी नीचे सड़कपर पड़ रही थी। एक तरफ संगमरमर के टेबल पर सितार, इसराज बीण आदि बाजे रखे हुए थे, एक कोने में बूटेदार छोट की गिलाफ से ढका हुआ एक पिआनो रखा था, बगल में छोटे छोटे कई संगमरमर के टेबल थे, उन पर काँच का एक बड़ा डिक्केंटर और कई ग्लास रखे हुए थे। दीवाल पर चारों ओर असल्यर कम्पनी के यहां के बड़े आईने लगे हुए थे जिनमें बैजनाथ अपना दरिद्र चेहरा चारों तरफ प्रतिबिंबित देख कर और भी लज्जित हुए। ऊपर कई निहायत खूब सूरत आयल पेटिंग टंगे हुए थे, जिनमें मानो इन्द्रपुरी से स्वयम् आ कर विवस्त्रा मेनका रम्भा विलास कर रही थीं।

खैर, बैठके का वर्णन तो एक तरह से हुआ, अब विजय नारायण जी की मित्र-मंडली का वर्णन क्योंकर किया जाय ? यद्यपि आज ज्यादा भीड़ भाड़ नहीं है, पर तो भी चौघरी जी के चुने हुए, कई गुणवान प्रिय मित्र बैठका गुलजार किए बैठे हैं, मानो विक्रम की सभा में नवरत्न विराजमान हैं। इस मित्र-

मंडली का पूरा वर्णन करना तो मेरी ताकत से बाहर है, पर दो चार बातों में पाठकों को इनकी पहिचान करवाए देते हैं।

चौधरी जी की दाहिने तरफ छन्नू बाबू जौहरी बैठे हुए हैं, उम्र करीब तीस-बत्तीस की होगी, रंग गोरा और चेहरा खूब-सूरत है। काली किनारी की चुनी हुई देशी धाती, अर्द्धी का पंजाबी आस्तीन का कुरता और चुना हुआ दुग्ठा कंधे पर है, सिर पर लखनऊ के कटाव की बहुत नफीस टोपी लगी हुई है, पैरों में काला बार्निसदार पंप सूज चमक रहा है। यह नाम को जौहरी है, जवाहिरात का रोजगार करते तो इन्हें कभी देखा नहीं, पर हाँ अक्सर अमीरों की दाहिने-तरफ इनका आसन रहता है। गाने बजाने में, हंसी दिल्लगी में अमीरों के मन बहलाने में इनके ऐसा होशियार आदमी दूसरा नहीं था, और ऐसा भी सुना जाता है कि मामले मुकदमों का रोशवार में उनकी बुद्धि विलक्षण थी। यह शहद की मक्खी की तरह प्रत्येक खिले पुष्पों से शहद चूसने में बड़े दक्ष थे बहुत से मधुचक्रों से शहद ला ला कर अपने आइरन सेफ रूपी मधुभांड में भर रखा था। ऐसा भी पता लगा है कि बान्ड हैम्ड नोट आदि गूढ़ मंत्रों में भी यह विशेष दक्ष थे। नाबालिक या युवक धनी सन्तानों के प्रति अक्मर इन मंत्रों का प्रयोग किया करते थे। पर हम लोग, इन बातों पर विश्वास नहीं करते हम तो इनकी मीठा मीठी सरस बातों ही पर लट्टू हो रहे हैं।

छन्नू बाबू के बगल में गोकुल बाबू बैठे थे। इनके ऐसा गुणवान् विद्वान् कार्यकुशल हँसने बोलने में अद्वितीय पुरुष मिलना दुर्लभ था। हाइकोर्ट के वकील थे, अंगरेजी बोलने में खास विलायती गोरों की भी मात करते थे, कोट, पेन्ट अंगरेजी बोलने में इनकी शान्ति का कौन था ? शेम्पेन, हिस्की

या बल्लारेट का गुणागुण इनके सिवाय कौन परख सकता था ? इनके ऐसा प्लाटफार्म लेकचरार कौन था ? कलकत्ते का कौन ऐसा शिस्तित होगा जिसका दिल इनकी नेशनेलटी का लेक्चर सुन कर न पसीजा हो ।

इनके पीछे नंगेसिर हरिशंकर बाबू बैठे हुए थे । आधे हाथ का पंजाबी कुरता पहने, सोने का चेन झुलाए मुसकुरा रहे थे । हरिशंकर बाबू पुराने जमाने के आदमी हैं, पर बहादुरी कैसी है ? कौन अंग्रेजी पढ़ा लिखा इनकी तरह नौकरी पा सकता है ? यह सिर पर पुराने ढंग का सफेद फंटा बांध कर रोज आफिस जाते हैं, पुराने ढंग की अंगरेजी बोलते हैं, बड़े बड़े साहब अफसरों के खिलौने हैं सब इनको बहुत चाहते हैं, सनातन धर्म के स्थम्भ स्वरूप हैं नए सुधारक युवकों को हरिशंकर जी दो चार खरी-खोटी सुनाने और उपदेश देनेसे नहीं चूकते । इनके एक तरफ यूरोपीयन सभ्यता के अवतार मिस्टर बनरजी विराज रहे हैं । इनके कोट पेंट नेकटाई, साने का कमानी का चश्मा वेसूकोट का दोहरा चेन, हाथ का शेरी का ग्लास देख कर भला कौन कह सकता है कि यह यूरोपीयन नहीं हैं ? पर हाय ! रंग ने बड़ा धोखा दिया ? काला कहाँ तक गोरा हो जाय ? तो भी क्या हुआ, यूरोपीयन का काजू जो भी मिले वही परम भाग्य है । मिस्टर बनरजी सारे यूरोप में घूम आए हैं, पर तो भी स्याह चेहरा सफेद नहीं कर सके । छन्नू बाबू कभी कभी इनके पीछे खड़े हाकर दोस्तों से कहते—अब यूरोपीयन सभ्यता का अर्थ समझे, मिस्टर बनरजीके चेहरे की अपेक्षा पोशाक की शोभा ही कुछ अधिक है ।

हरिशंकर बाबू के पास विश्वम्भर बाबू बैठे हैं । यह मुहल्ले

के एक बड़े भारी रईस हैं, विरादरी के पंच हैं, किसी बड़े हाउस के मुसद्दी हैं। इनके धन दौलत का अन्त नहीं है नया आलीसान छ-मंजिला महल गाड़ी-घोड़ा किसी बात की कमी नहीं है इसके बगल में सिद्धेश्वर बाबू, गृधेश्वर बाबू पुश्तैनी रईस लोग विराजमान थे। कहाँ तक वर्णन करें। तात्पर्य यह है कि धन रूपी मधु चक्रके चारों तरफ शहद की मक्खियाँ भिनभिना रही थीं। धन रूपी तख्त ताऊस के रत्न चमक दमक रहे थे। वैजनाथ जी ने कई महीने कलकत्ते रहकर देखा कि फकत विजय नारायण के यहाँ ही क्यों, समाज में चारो तरफ ये रत्न विराजमान हैं। यह महानगरी इन रत्नों की चमक से चौंधियाई जा रही है।

भला ऐसे समाज में वैजनाथ बेचारे क्या बोलते और क्या कहते। 'हंस मध्ये बक्रो यथा' की तरह कुछ देर तक चुपचाप बैठे रहे। एक बार बड़ी मुशकिल से विजय नारायण जी के बगीचे की बात इन्होंने छेड़ी बस फौरन ही सारी मित्र मंडली हजार मुँह से उस बगीचे की तारीफ करने लगी, विजय नारायण जी ने वैजनाथ जी को एक रोज बाग ले जाने का न्यौता देकर धन्य किया, वैजनाथ बेचारे लज्जित हो रहे। फिर कुन्दनपुर का जिक्र छेड़ा, बांकापुर के अमान का जिक्र छेड़ते ही चौधरी जी ने जरा शिर नीचा कर लिया, इस बात को सब लोग सुनी अनसुनी कर गये। मित्र मंडली जरा अधीर होने लगी, कोई सितार लेकर उसका कान उमेठने लगा, कोई तैल चित्र की तरफ देखने लगा, किसी को घड़ी के टाइम की याद आ गई।

वैजनाथ जी ने यहाँ का रंग ढंग देखकर विजय नारायण जी हाथ जोड़ा और साढ़ी उतर चलते बने।

क्या एक बार जनाने महल में जायँ ? विजयनारायण जी ने एक बार भी बैजनाथ जी घर को भँतर जाने को नहीं कहा ? पर क्या हतभागिनी तारा को बिना देखे ही चले जायँ । चौकमें आकर बैजनाथ जी कुछ आगा पीछा करने लगे । इसी समय गड़गड़ाती हुई दो और गाड़ियाँ फाटक के पास आकर खड़ी हुई । गाड़ी से उतर कर हंसी की खिलखिलाहट से सारा मकान गुंजाती हुई न जाने कौन ऊपर गई । महफिल जमी, सितार तबले की आवाज सुनाई देने लगी । साथ ही किसी स्त्री के मधुर कण्ठ की सुरीला तान से सारा भवन गूँज उठा ।

बैजनाथ जी धीरे धीरे एक दो कदम चल कर एक चहार दीवारी पार कर जनाने आंगन में जा खड़े हुए । कहीं कोई शब्द भी तो नहीं सुनाई पड़ता । किसी आदमी की सूरत या किसी के गले की आवाज कुछ भी नहीं सुनाई देती । अन्धेरे में कुछ देर तक खड़े रहे, आंगन में खड़े हुए उनका दिल धड़कने लगा । किसी को बुलावें क्या ? केवल चौमंजिले की एक काठरी में ही दीयों की रोशनी दिखाई दे रही थी । बैजनाथ जी बहुत देर तक उस रोशनी की तरफ देखते रहे । आवाज देने की हिम्मत नहीं हुई । थोड़ी देर बाद एक दुबला पतला हाथ उस कमरे की खिड़की में दिखाई दिया । धारे धारे खिड़की बन्द हो गई । रोशना बुझ गई, सारा अंधेरा हो गया कलेजे को दोनों हाथों से दबा कर बैजनाथ जी चुपचाप घर से बाहर निकल आए ।

१७

वैजनाथ जी घर आकर सोचने लगे कि मैंने बड़ी बेवकूफी का काम किया है। स्त्री के कष्ट के समय स्त्री ही दिलासा दे सकती है। आज सब बातें खोलकर स्त्री से कहूँगा, वह जो कर सकेगी करेगी। घर में आते ही वसन्ती ने देखा कि पति का मुँह बड़ा गंभीर, बड़ा मलीन है, अस्तु उन्हें देखते ही बोली—आज क्या हुआ है जी ? तुम्हारा मुँह ऐसा क्यों हो गया है ?

वैजनाथ—बता रहा हूँ। बैठो। चम्पा सो गई ?

वसन्ती—चम्पा खा पीकर सोई है। कोई बुरी खबर तो नहीं है ?

वैजनाथ—कहता हूँ सुनो। यह कहकर वैजनाथ जी ने तारा के पति विजयनारायण का यावत् चरित्र वर्णन किया। वसन्ती ने सुन कर आँचल से आँसू पोंछा, और बोली—यह ऐसा होगा, यह तो मैं जानती ही थी, अभागिनी तारा भी जानती थी।

वैजनाथ—किस तरह ?

वसन्ती—यह तो मैं नहीं जानती पर मालूम पड़ता है कि कलकत्ते से पहलेही उसने कुछ उड़ती पुड़ती खबर सुनी थी, वह जरा चुप्पी लड़की है, किसी से कुछ बोली नहीं, पर कुन्दनपुर से जाते समय तारा बेचारी अपना रोना रोई थी सही।

वैजनाथ—अब क्या करें ? जो सब रंगढंग देख आया हूँ, उससे तो मालूम होता है कि दिवान जी के घराने की दौलत दो एक बरस में स्वाहा हो जायगी, विजयनारायण जी जन्म के

रोगी हो जायँगे और तारा बेचारी दो ही वर्ष में दाने दाने को मोहताज हो जायगी ।

बसन्ती—यह तो दो बरस बाद की बात है, इस समय तारा है कैसी ? वह स्वभाव ही से कुछ अभिमानिनी है, अपने पति का चाल चलन किस तरह बरदाश्त कर रही है ? कुन्दनपुर से आकर इतन बड़े मकान में अकेला लड़की किस तरह रहती है ? उसका तो कोई लड़का बाला, सखी-सहेला कोई भी नहीं है, जिससे मनकी बात कहे । तुमही एक बार जाकर उससे दो बात तो कर आते ?

बैजनाथ—मेरी तो हिम्मत नहीं पड़ो, तुम एक बार जाकर जो मुनासिब समझा करो। आगे नारायण जी की जैसी मरजी । इसके दूसरे दिन खा पीकर दोनों बच्चों को चम्पा के पास छोड़ कर, बसन्ती पालकी पर चढ़ कर तारा से मिलने गई । चम्पा भी तारा बहिन से मिलने के लिए उत्सुक हुई पर बसन्ती ने उसे यह कह कर कि आज नहीं बाहन, फिर दूसरे दिन जाऊँगी तब तुम्हें लेती जाऊँगी घर छोड़ती गई ।

लंबे चौड़े सोने के कमरे में जाकर बसन्ती ने देखा कि तारा अकेला बैठी हुई, परांदा घट रही है, दाई-नौकर सब नीचे हैं । तारा को देख कर बसन्ती चौंक गई । ऐं ! यही क्या वह कुन्दनपुर की तारा है, जिसकी खूबसूरती की चर्चा चारों तरफ फैली हुई थी ? मुंह का रंग काला हो गया है, आंखों के नीचे श्याम-ता छा गई है, गले के दोनों हाड़ दिखाई दे रहे हैं, बाहें दोनों बहून ही पतली, शरीर सूख कर कांटा हो गया है । चार महोने बहले बसन्ती ने जिस शरीर में नई जवानों का भग्न उमंग देखा था आज वह शरीर तीस वर्ष की रोगी स्त्री सा दीख पड़ा ।

गले के हाड़ पर से मोती की माला लटक रही थी, हीरे के दोनों कड़े हाथों में ढल ढल कर रहे थे ।

बसन्ती के पैर की आइट पाकर तारा ने मलीन मुंह पीछे फेरा, परांदा रख कर चठी और मलीन मुंह से बोली—अः बसन्ती बहन, तुम आई हो, मैं हर गोज़ तुम्हें याद करती थी । तुम अच्छी तो हो ?—लड़के-बाले अच्छे हैं ?

तारा की ये धीमी बातें सुनते ही बुद्धिमान बसन्ती तारा के दिल की हालत और चार महाने को सारी कहानी समझ गई । बड़ी मुश्किल से मन का आवेग रोक कर तारा के दोनों हाथ पकड़ कर बोली—हाँ बहन, हम लोग सभी अच्छे हैं । चंपा को बड़ा ज्वर आया था, अब वह भी अच्छी है । तुम अपना हाल कह ! बड़ी दुबल हो गई हो !

तारा—कुछ नहीं बसन्ती बहन, मुझे भी कलकत्ता आने पर आंव की बीमारी हो गई थी, वह तो अच्छी हो गई है, अब जरा खांसा हो जाती है । कलकत्तेका पाना हम लोगों को नहीं सहता, कुन्दनपुर ही में हम लोगो की तबीयत ठीक रहती है ।

बसन्ती के रुखे मुँह पर जरा सी हँस दिखाई दी ।

बसन्ती—फिर कुन्दनपुर जाने की इच्छा है ? हम लोग यही नवरात्र बाद जायेंगे ? तुम भा चलोगा क्या ?

तारा—हाँ, पर यह तो मेरा अधीन नहीं है । वे मानें तब तो । मैं समझती हूँ कि वे जाने नहीं देंगे ।

बसन्ती—तो फिर यहाँ तुम्हें देखे मुनेगा कौन ? हम लोग रहते हैं इतनी दूर, और बच्चा को छाड़ कर हर रोज़ आ भी तो नहीं सकते । तुम्हें खाना हुई है शरीर दुबला हो गया है, तुम्हें देखने सुनने वाला आदमी भी तो चाहिये ।

तारा—क्यों बसन्ती बहिन, रोज दोनों समय डाक्टर आते हैं, उन्होंने एक अच्छा डाक्टर लगा दिया है उसी की दवा खाती हूँ।

बसन्ती—यह तो ठीक है, पर अपने आदमी के बिना क्या इलाज ठीक से हो सकता है और तुम्हारे शरीर का यह हाल है, गृहस्थी कौन देखता है। अच्छा तो ताई जी को चिट्ठी लिख कर बुलालो न, जब तुम्हारा जी कुछ ठिकाने आ जायगा तो वह चली जायँगी। नहीं तो तुम भी कुछ दिन गांव पर जा रहना।

तारा—नहीं, माँ को बुला कर क्या होगा। मेरी बीमारी का इलाज हो ही रहा है। और घर में बीसों नौकर-चाकर दाइयाँ हैं किसी बात की तकलीफ नहीं है। माँ को बुला कर क्या होगा ?

बसन्ती—तो भी बहुत मुझे ऐसा मालूम होता है जैसी होनी चाहिए, तुम्हारी वैसी पृष्ठ नहीं हो रही है माँ जैसी टहल क्या और कोई कर सकेगा। हजार हो पेट की बेटी ही तो हो। अच्छा विजयनारायण तो खयाल रखते हैं न ?

धीमे स्वर से तारा ने जवाब दिया—हाँ, मैं जब जो चाहती हूँ मिल जाता है किसी बात की कमी नहीं है।

बुद्धिमान बसन्ती ने देखा कि यद्यपि तारा के सारे सुख और आशाओं पर पानी पड़ गया है पर घोर अभिमान के कारण वह अपनी असली पीड़ा का हाल छिपा रही है। अन्त में सोच विचार कर बसन्ती ने कहा—नहीं बहिन, मैं समझती हूँ कि ताई जी कुछ दिन यहाँ आकर रहें तो अच्छा हो। देखो भाई, दुःख सुख बीमारी सीमारी हम सब के पीछे लगी ही हुई है ऐसे समय में अपना आदमी जैसा करेगा वैसा क्या गैर कर सकता है। यही देखो न, चंपा बीमार हुई, शिवनाथ था, कितनी सेवा उसने की तब आराम हुई। तुम भी सुख कर कांटा

होगई हो, सदा खांसती रहती हो इस लिए अभी से जरा संभल कर चलना अच्छा है। मेरी बात मानो, ताई जी को आज ही चिट्ठी लिखो कहो तो मैं ही लिखूँ। अहा ! तारा बहिन, तुम क्या थी और क्या हो गई हो। यह कह कर बसन्ती ने प्यार से तारा के सिर पर हाथ फेर कर सामने के बाल संवार दिए।

यही इतना सा स्नेह तारा को बहुत दिनों से नहीं मिला था। इससे उसका जी उमड़ आया। आंखें डबाडबा आईं और एक लंबी सांस लेकर वह धीरे-धीरे बोली—बसन्ती बहन, तुम मुझे लड़कपन से ही बहुत चाहती हो—और बोल नहीं सकी आंचल से आंसू पोंछने लगी। बसन्ती ने बड़े प्यार से कहा क्यों तारा रानी, तुम क्या मुझे नहीं चाहती ?

तारा—अहा ! तुम्हें नहीं चाहूँगी तो किसे चाहूँगी। जब तक जीऊँगी तुम्हें चाहूँगी।

बसन्ती—तो बहन, आज मुझसे इतना छिपा क्यों रही हो ? मैं क्या तुम्हारे मन का दुःख नहीं जानती ? दुनियां में तुम्हारे सुख की आशा पर पानी फिर गया है यह क्या मैं नहीं समझती ? विवाह के बाद पहलेपहल जिस पति के प्रणय से तुम मुग्ध थी, मुझसे मिलते ही जिस का जिक्र करती थी, वह प्रणय का सुख समाप्त हो गया, यह क्या मुझ से छिपा है ? तुम ये सब बातें मुझ से छिपाती क्यों हो ? मैं क्या परायी हूँ ? मेरा तुम्हारा तो जी-जान एक है, तारा, हमीं तुम गैर होंगे तो दुनिया में फिर अपना कौन होगा ?

अब यह स्नेह तारा सह नहीं सकी, आंखों से आंसूओं की झड़ी लग गई, अपने प्राण की बसन्ती बहिन की गोद में सिर रखकर, तारा बेचारी एक बार जी खोल कर रोई। बसन्ती की गोद से आंसू से डबाडबाई आंखें उठा कर, तारा

बोली—बसन्ती बहन, तुम से क्या कभी मैंने कुछ किया था जो आज छिपाऊंगी। पर आज माफ करो, यह सब बात फिर किसी रोज कहूँगी।

बसन्ती—नहीं बहिन, मैं आज ही सुनूँगी। मन का दुःख मन में दबा रखने से और ज्यादा कष्ट होता है, अपने आदमी से जी खोल कर कह देने से जी बहुत कुछ हलका हो जाता है।

तारा—जो पूछो, कहूँ।

बसन्ती—मैं पूछती हूँ, विजय अब पहले-सा तुम्हें चाहते हैं, देखते सुनते हैं ?

तारा—बसन्ती बहिन, नहीं चाहते हैं, यह किस तरह कहूँ, जब जो दरकार होता है मिलता है, डाक्टर बुलवाकर इलाज करवा रहे हैं, देखते-सुनते नहीं हैं, यही किस मुँह से कहूँ।

बसन्ती—तारा, तूने क्या मुझको मर्द समझा है कि यह सब बातें कहकर भुलावा दे रही है ? क्या रोटी-कपड़े और दवा-पानी से ही पति का यत्न समझा जाता है ? वह क्या पहले की तरह तुम्हें प्यार करते हैं, पहले की तरह जी खालकर तुम से प्रेम करते हैं, पहले की तरह क्या तुम्हारे प्रेम से सुखी होते हैं ? तारा रानी, क्या औरतों को यह बात औरतों से मुँह खोलकर पूछनी पड़ती है ? पति का जो प्रेम है, वही रिश्तों का एकमात्र आधार और जीवन है। मैं पूछती हूँ वह तुम्हें प्राप्त है या नहीं ?

बेचारी अभागिनी तारा “नहीं” यह शब्द उच्चारण नहीं कर सकी, केवल सिर हिलाकर, फिर बहिन की गोद में उसने मुँह छिपा लिया।

बसन्ती का मुख गंभीर हुआ, धीरे-धीरे बोली—तारा

रानी, यह रत्न गंवाने से तो काम नहीं चलेगा, तुमने क्या इस रत्न की रखवाली का पूरा यत्न किया था ?

तार रोती हुई बोली—नारायण जानें, मेरा प्रेम तिल भर भी कम नहीं हुआ है, अब भी उन्हें देख कर मेरा जी ठंडा होता है ।

बसन्ती—तारा, तुम्हारा प्रेम मैं जानती हूँ, तुम पवित्रता हो, इस जिन्दगी में तुम्हारी प्रीति घटेगी नहीं, पर देखो बहिन, खाली प्रेम से पति का स्नेह नहीं टिकता और न गृहस्थी ही चल सकती है । औरतों का और भी कुछ कर्तव्य है, हम लोगों को और भी कुछ सांखना पड़ता है ।

तारा—बसन्ती बहन जो पति हैं तन-मन के स्वामी हैं, भोजन वस्त्र देते हैं, सब तरह से रक्षा करते हैं, हम स्त्रियाँ सिवाय प्रेम के इसके बदले उन्हें और क्या दे सकती हैं ? हम अबलाओं का और क्या है बतलाओ ?

बसन्ती—हाँ तारा, तेरा कहना ठीक है पति को जी-जान से चाहना यही हम लोगों का मुख्य धर्म है, पर नहीं, इसके अलावा हम लोगों को और भी कुछ सांखना होता है । जो स्वामी हमारे लिए इतना करते हैं, हमें चाहिए कि उनका मन खुश रखें गृहस्थी सदा आनन्दमयी रखने के लिए हम भी जरा यत्न करना संखें । जरा-सो मीठी जवान से बहुत सा मन का दुःख जाता रहता है, गुस्सा ठंडा हो जाता है, हम लोगों की थोड़ी सी चेष्टा और हँसमुख चेहरे से गृहस्थी आनन्दमयी हो जाती है । हमें चाहिए कि गृहस्थी के क्लेश को क्लेश न समझें आँख मुँदकर इस कड़वे काढ़े को पी जाँय, किसी के क्रोध वाली बात कहने पर भी हँसकर टाल दें कोई छोटी बड़ी बात कह भी दे तो मौन हो जायँ, अपने को तकलीफ हो तो हो, जहाँ

तक बन पड़े दूसरों को कष्ट न होने दें, दास-दासियों से कोई अपराध हो भी जाय तो उन्हें समझा कर क्षमा कर दें, इन्हीं सब बातों से गृहस्थी में सुख होता है, और इन्हीं बातों में लापरवाही करने से सारी जिन्दगी कड़वी हो जाती है। तारा रानी ! मैंने तो बहुत से चंगे भले औरत-मर्द देखे हैं, उनमें मुहब्बत भी होते देखा है, पर तोभी उनकी गृहस्थी शमशान हो गई देखी, कारण क्या ? यही जरा सा टंडा मिजाज धीरज, संसार के मार्ग को सुगम कर देता है, इन्हीं बातों के न रहने से गृहस्थी कंटक-जाल हो जाती है। उस समय लोग सोचते हैं कि पहले से इन सब बातों का जरा यत्न रखते तो जिन्दगी सुख से बीतती, ऐसा क्यों होता है, पर 'अब पछताए होता क्या, जब चिड़िया चुग गई खेत, गया मौका हाथ नहीं आता। गृहस्थी का एक मात्र बन्धन स्वामी-स्त्री का प्रेम एक बार टूट जाने से फिर नहीं जुटता, कहावत है, मन और दूध फटा फिर नहीं मिलता, जिन्दगी का खेल एक बार समाप्त होने पर पीछे फिर उस खेल को नए सिरे से शुरू करने का हमें अख्तियार नहीं है।

तारा—बसन्ती बहिन, लड़कपन में तुम्हीं से ये बातें मैंने सुनी थीं। कुन्दनपुर में तुम्हारी गरीब की गृहस्थी देख कर यह सिखावन मैंने सीखी थी, भगवान जानते होंगे ! कि यदि मैंने इन बातों में कुछ कसर की हो, कोई गलती की हो। लोग मुझे कहते हैं कि “इसे धनका बड़ा घमंड है,” पर नहीं मेरे परम गुरु स्वामी मुझे हमेशा हीरे-मोती जड़ाऊ गहने पहिनाकर वृत्त होते थे, इसी से मैं पहिनती थी, जो लोग मुझे कहते थे कि इसे अपनी सुन्दरता का बड़ा घमंड है, पर बहिन, तुम जानती ही हो इसी रूप पर वह उन दिनों मोहित थे, इसीका मुझे

घमंड था उन्हें संतुष्ट रखने के सिवाय संसार में मेरा और कोई व्रत नहीं था। कलकत्ते आकर अपना यत्न मैंने दूना कर दिया, क्योंकि मेरे सिवाय इस घर में औरत और कोई थी नहीं, मैं यदि उनकी सेवा में यत्न नहीं करती तो और कौन करता ?

बसन्ती—तारा बहिन, मैं तो पहले ही से जानती थी कि तुम ऐसा करोगी। मैं तुमको लड़कपन से जानती हूँ, और लोग तुम्हारी निन्दा चाहे भले ही करें, पर मैं तुम्हें बुरी नहीं कहती। धीरज, क्षमा, स्वामी के प्रति यत्न, स्नेह, हँसमुख रहना, यह सब गुण तुमने सीखे हैं। कितनी इन गुणों को धारण करती हैं। पाँहले जमाने में हम लोग बड़ो बड़ी गृहस्थियों में बहू, बेटी हो कर रहतीं, सास ननद, माँ-बाप के डर से हम लोगों के अलहड़पन का गरम मिजाज बहुत कुछ दबा रहता था, मुँह बन्द किए रहती थीं, सास की आज्ञा से गृहस्थी चलती थी। अब सभी ने अलग-अलग रहना सीखा है, लड़के भी मनमानी करते हैं, बहुएँ भी अपना कर्तव्य भूल जाती हैं, गृहस्थी का सुख मटियामेट हो जाता है।

तारा—बसन्ती बहन, मेरे जी में भी कभी कभी यही बात उठती है कि एक साथ रहने की चाल अच्छी थी, लड़के भी अवारे नहीं होने पाते थे, और बहुएँ भी सिधार्ई सीखती थीं।

बसन्ती—तारा रानी, दुःख सुख तो सभी तरह से हैं। देखो न कामिनी तो बड़ी भारी गृहस्थी में है, हाय ! वह क्या सुखी है ? एक साथ रहने का क्या यही सुख है ?

तारा—कामिनी के दुःख का कारण और है। बूढ़े स्वामी से विवाह हुआ है, पति का प्रेम किसे कहते हैं, यह उसने स्वप्न में भी नहीं जाना।

बसन्ती—अरे ! पति का प्रेम तो किनारे रहा, वह बेचारी बाजार मजदूरिन की तरह सवेरे सन्ध्या तक खटती है और बिना अपराध रास्ते के भिखमंगे से भी गई बीती गाली-गलौज सहती है भला बतलाओ तो इसका क्या कारण है ?

तारा—सुना है कि उसकी चचेरी सास सब बड़ी कर्कशा हैं, इसीसे बेचारी का यह हाल है ।

बसन्तो—पर गृहस्था में सभी अच्छे होंगे, इसीका क्या ठिकाना है ? यदि कोई एक आदमी भी खराब या चिड़चिड़ा हुआ तो सारा दिन भगड़े मचे रहते हैं । कामिनी ऐसी सीधी-सादा है कि मरना, उसी बेचारी का है । यही सब देख सुन कर जिनके पास दो पैसे हांते हैं, वे अलग रहने लगते हैं, नहीं तो अपने आदमी को कोई छोड़ना नहीं चाहता । खैर, इस तरह अलग रह कर भी यदि हमें जो चाहिए वही बर्ताव करें, सास के भय से जो सीखता थी वह अपना बुद्ध से सखें तो भी गृहस्थी में बहुत कुछ सुख-आनन्द मिल सकता है । आज कल की लड़कियां इन सब बातों को विशेष सीखती नहीं हैं, शायद आगे चलकर सीखें ।

ये ही सब बातें हो रही थीं कि नीचे सड़क पर जोड़ी को आवाज सुनाई दी, एक गाड़ी फाटक पर आकर खड़ी हुई । तारा तो इसका मतलब समझ गई । इसलिए देखने नहीं उठी पर बसन्ती उठकर खिड़की में से झांक कर देखने लगी । देख कर उसकी आंखों से आंसू बहने लगे । विजयनागायण जी बगीचे से आए थे । उनकी पोशाक सिकुड़ी हुई, केश बिखरे हुए थे, वे एक दम बेहोश थे दो नौकर डंडा डोली करके उन्हें ऊपर उठा लाए ।

आंखों में आंसू की धारा बहाती हुई, बसन्ती ने दोनों हाथ पसार कर तारा को कलेजे से लगा लिया और बोली—तारा

बहिन, अहा, नरायण जी साक्षी हैं कि स्त्री जहां तक तकलीफ सह सकती है, तुमने वरदाशत की है, इस दुःख से अब तारा, तारा नहीं रही । मालूम पड़ता है कि रात जाग जाग कर भूखी रह रह कर रो रो कर तुम्हारा यह दशा हो गई है, बीमारी भी हो गई है, क्या करोगी बहन, जो सहना पड़े सहो, अपनी तरफ से उनकी सेवा में कुछ कमी मत करना, कड़ी-कड़ी बात जवान से मत निकालना, नहीं तो और भी खराबी होगी, इस बीमारी की यह दवा नहीं है । चुपचाप यह तकलीफ बरदाशत करो, जब मौका मिले मीठी बातों से उन्हें खुश करना, कभी बात चीत या इशारे से भी उनका अपमान मत करना । अगर रोना हो तो छिप कर रोना । जिनके साथ विजय आज इतना मौज उड़ा रहे हैं, दो दिनों में हाँ उन पर नाराज हो सकते हैं । बुरी से बुरी चाल चलने वाले आदमियों ने भी अपनी आदत छोड़ी है फिर से पवित्र स्निग्ध गृहस्थी का शान्ति-दायक स्नेह ढूँढा है. यह मेरी आखों देखी बात है । मैं तुम्हारा माँ को आज ही चिट्ठी लिखूंगी, धीरज धरो, आशा बाँधे रहो मेरे प्राणों की तारा रानी, भगवान की लीला अपार है उनके आगे कोई बात कठिन नहीं है, थोड़े दिनों में वे तुम्हारे सब दुःखों का अन्त कर देंगे । दोनों बहन परस्पर गले गले लग कर देर तक रोती रहीं । तारा ने बसन्ती की बातों का कुछ जबाब नहीं दिया, केवल मन ही मन कहा— हाँ थोड़े हाँ दिनों में भगवान् मुझे मौत देने की कृपा करें तो दुःखों का अन्त हो ।

१८

बसन्ती अपने मकान के दरवाजे पर पहुँच कर पालकी से उतरने भी नहीं पाई थी कि चंपा सीढ़ियों से उतरती हुई नीचे आकर बोली—जीजी, जीजी आओ देखो कौन आया है।

बसन्ती—कौन है ?

चंपा—आओ न, आप ही देखोगी। यही सोनेके कमरे में है।

बसन्ती—कौन है, शिवनाथ ?

चंपा—नहीं वे नहीं हैं। अच्छा जीजी, शिवनाथजी अब क्यों नहीं आते।

बसन्ती—उन्हें क्या और कोई काम नहीं है। थोड़ेही दिनों में उनकी परीक्षा होने वाली है, पढ़ने लिखने से छुट्टी नहीं मिलती, इस लिए शायद रोज नहीं आ सकते।

चंपा—परीक्षा कब होगी जीजी ?

बसन्ती—यही जाड़े के दिनों में होगी।

चंपा—अच्छा तब आवेंगे तो ?

बसन्ती—आवेंगे क्यों नहीं ? अब भी कभी कभी आ ही जाते हैं, परहाँ रोज नहीं आ सकते। जब फुरसत मिलेगी तभी आवेंगे। ऊपर कौन बैठा है ?

चम्पा—अच्छा बतलाओ तो कौन है ?

बसन्ती—क्या गोपाल बाबू के घर से आई हैं ? वही तो कभी कभी आती जाती है।

चम्पा—वे नहीं हैं।

बसन्ती—नहीं तो शायद देवी बाबू की स्त्री होंगी। इतने दिनों पर शायद गरीबों पर दया करके पधारी हैं ?

चम्पा—नहीं जीजी, वे भी नहीं हैं। कामिनी बहन आई हैं ?

बसन्ती—ऐं कामिनी ! कलकत्ते कब आई ? मुझे तो कुछ खबर ही नहीं। यह कहती हुई बसन्ती ने ऊपर जाकर कामिनी को देखा। बहुत दिनों पर उससे मिलकर बड़ी खुश हुई बोली—ऐं, कामिनी, तम कलकत्ते कब आई ? सब राजी खुशी है तो ?

कामिनी—यही पांच-सात दिन हुए। काम-धन्धे के भंभट से अब तक तुमसे मिलने आ नहीं सकी। आज मम्मली सास से कह सुनकर तब आई हूँ। हालत ठीक नहीं है।

बसन्ती—क्यों क्या हुआ है ? कोई बीमार है क्या ?

कामिनी—उनकी तबीयत बहुत खराब है, उन्हीं के इलाज के लिए कलकत्ते आना हुआ है, बांकीपुर में सैकड़ों इलाज हुए पर कुछ फल नहीं हुआ। अब कलकत्ते के अंग्रेज डाक्टर का इलाज हो रहा है। जो नारायण की मरजी, इतना कहकर कामिनी रोने लगी।

बसन्ती—बीमारी क्या है ?

कामिनी—बुखार और आँव खून का दस्त। न तो बुखार ही उतरता है और न दस्त ही बन्द होता है। आह ! उनका शरीर पतला सींक सरीखा हो गया है। फिर आँखों पर आँचल रखकर कामिनी रोने लगी।

बसन्ती—अच्छा तो रोती क्यों हो, बहन। रोने से क्या होगा ? इस समय अच्छी तरह इलाज कराओ। बीमारी हुई है, आराम हो जायगी, कविराजी इलाज क्यों नहीं कराती।

पुराने बुखार आँव के दस्त का जैसा इलाज कविराज कर सकते हैं वैसा क्या अँगरेज डाक्टर कर सकेगा ?

कामिनी—अरे बसन्ती जीजो, क्या कविराज बाकी बचे हैं ? सब कविराजों ने हार मान ली, तब अँगरेज डाक्टर बुलाया गया है। बाँकोपुर के जितने अच्छे कविराज थे सबका इलाज किया गया, कलकत्ते से नामी-नामी कविराजों को बुलाकर इलाज करवाया गया कुछ भी तो नहीं हुआ।

बसन्ती—अच्छ, अब देखो अँगरेज डाक्टर के इलाज से कैसा रहता है। तुम लोगों का डेरा कहाँ है ?

कामिनी—बड़ी दूर है बहिन, काल घाट में ठीक गंगा किनारे एक किराए का मकान किराये पर लिया गया है।

बसन्ती—इतनी दूर कालीघाट में क्यों ? क्या इतने बड़े शहर में कोई मकान नहीं मिला ? और सुनती हूँ कि आज-कल बरसान के दिनों में कालीघाट में बहुत से लोग बीमार हो रहे हैं, जरा खुला जगह में रहना ठीक था।

कामिनी—यह किस तरह हो बसन्ती बहन ! वे लोग क्या कलकत्ता आना चाहते थे ? मेरी सासों सब कहने लगीं कि वहाँ जाति-पाँति का विचार नहीं, आचार निभे क्योंकर। अन्त में बड़ी मुशकिल से कालीघाट के एक पंडे की मारफत एक घर ठक करके तब हम लोग आए। रोज सब लोग गंगा नहान हैं काली जी की पूजा होती है। रात-दिन पूजा पाठ, अनुष्ठान हो रहा है न जाने काली जी के आगे कितनी तरह का मनातियाँ मानी गई हैं मेरी सासों ने भैंसा बाल देने की मानत मानी है, मेरे पास क्या है, बसन्ती बहिन, पर मैंने अपनी चाँदी का कढ़नी बेच कर जाड़े दूध के बलि देने की मानत मानी है, अहा ! वह यदि इस बार अच्छे हो गए,

तभी तो ठीक है, हम लोगों की भी जान बचेगी, नहीं तो बहिन, यह इतनी भारी गृहस्था सब तीन तेरह हो जायगी। मान सम्भ्रम रुपया पैसा, जमीन-जायदाद नाम-सुनाम, कुल-गौरव जो कुछ है, सब उन्हीं से है, वेही सब के सिर हैं, अकेले सब करते धरते गृहस्थी चला लेंते हैं वे न रहेंगे तो फिर हम लोगों को किसका सहारा रहेगा ! हे भगवान ! जन्म भर के लिए इस कंगालिन का करम मत फोड़ना।

जन्म भर में जिसने कभी भी पति के प्रेम का सुख नहीं पाया है, प्रेम या प्रणय क्या चीज है जो जानती भी नहीं, वही आज पति-वियोग विन्ता की यातना से धरती पर लोट रही है। धन्य हिन्दू स्त्री का पति-प्रेम !

बसन्ती ने बहुत तरह से कामिनी को दिलासा दिया, कहा-डर क्या है बहिन, इलाज तो हा ही रहा है, फिर डर किस बात का है। वे हैं, तुम्हारे भाई शिवनाथ हैं, सब कोई देखे भालेंगे, बीमारी जल्दी आराम हो जायगी। यहां देखो न, चंपा कितनी बीमार थी, शिवनाथ ने कितनी मिहनत की, दिन-रात खाना सोना छोड़ कर रोगी की सेवा की, तब चंपा अच्छी हुई, नहीं तो क्या चंपा बचती ?

कामिनी—शिवनाथ क्या रोज यहां आता है ?

बसन्ती—पहले तो आता था, आज कल परीक्षा का दिन पास आगया है, शायद लिखने-पढ़ने में लगा है, इसी लिए अब तो इधर महीने भर से नहीं आया है।

कामिनी बसन्ती जीजी, उससे कभी कभी बुला लिया करो. यहां आके कुछ उधर की बातचीत से दिल बहलाता रहेगा तो अच्छा रहेगा, दिन-रात पढ़-पढ़ कर बेचारे का चेहरा भांवा पड़ गया है। आंखें गड़हे में घँस गई हैं। कल मुझ से

मिलने आया, तो मैं उसे सहसा पहचान ही न सकी ।

बसन्ती—ऐं यह क्या ! मुझे तो कुछ पता भी नहीं है जब यहाँ आता जाता था तब तो चेहरा-मोहरा अच्छा था, इसी बीच में ऐसा हो गया है ? यों भी भला पढ़ते लिखते होंगे ? परीक्षा न देगा न सही, तो क्या इस लिए बीमारी मोल लेगा ? मैं उनसे अभी कहती हूँ, शिवनाथ को एक रोज बुला लावेंगे नहीं तो कभी कभी शनि या रविवार को यहीं आकर रहो तो हर्ज क्या है ?

इसके बाद तारा की बात छिड़ी, बसन्ती ने जो कुछ देखा था बहुत कुछ दुःख करते हुए कामिनी को सब सुनाया, कामिनी भी सुन कर रोई । अन्त को बसन्ती बोली — मैं आज ही ताई जी को लिखती हूँ, वह आकर जो करना होगा करेगी, मुझसे तो अब यह दुःख देखा नहीं जाता । किसी तरह कलकत्ता छोटे तो जान बचे, कुंदनपुर जा कर हड्डी में हवा लगे ।

कामिनी — तुम लोग तो इसा भादों महीने में जाने वाले थे ? भादों महीना तो खतम हो चला ।

बसन्ती—बात तो थी, पर जा नहीं सके । तारा अलग बीमार है, तुम्हारे घर में इतनी बड़ी बीमारी छोड़ कर किस तरह जाऊँ । अब तो दशहरे बाद जाना होगा । नवरात्र में, भी देरी नहीं है । एक महीना होगा ?

कामिनी—तो तुम्हारी जमीन की फसल कौन देखे भालेगा ?

बसन्ती—आते समय वे खिलावन को जमीन बटवारे में दे आए हैं । खिलावन हम लोगों का पुराना आदमी है, हमारा हिस्सा खत्ते में बन्द कर रखेगा, उसकी कुछ चिन्ता नहीं है ।

और थोड़ी देर तक बातचीत करने के बाद कामिनी बिदा हुई । शाम को बैजनाथ जी घर आए । बसन्ती ने मामूली जल रान

की सामग्री सामने ला रखी और दोनों सलाह करने लगे ।

वैजनाथ—इधर तारा की बीमारी और दुर्दशा उधर कामिनी के स्वामी की कड़ी बीमारी, और तुम कहती हो, कि शिवनाथ भी नादानों की तरह शरीर की तरफ कुछ ध्यान न देकर लिख पढ़ रहा है । किस किस तरफ देखें ! क्या करें ! मेरी तो भाई किसी आफत बिपत्त के समय तुम्हीं मंत्री हो । क्या उपाय ठीक करती हो ?

वसन्ती—भाग्य का लिखा न राजा की फौज से ढलता है, और न मन्त्री की मन्त्रणा से । पर हम लोगों की जितनी सामर्थ्य है, करेंगे ।

वैजनाथ—तो भी क्या करने का विचार है ? तारा को क्या कह कर आई हो ?

वसन्ती—कह और क्या आऊँगी ? मेरे पेट में जो बुद्धि थी वही दे आई हूँ । आज कल के मनचले चंचल पतियों को वश में करने का जो मन्त्र जानती हूँ, वही सिखा आई हूँ ।

वैजनाथ—भला वह महा मन्त्र क्या है, जरा मैं भी तो सुनूँ ।

वसन्ती—सुनो न, तारा के घर में एक बड़ा कटहल का पेड़ है । मैं कह आई हूँ कि इसी की एक मोटी डाल से एक लूब भारी मुँगरा बनवा कर अपने स्वामी को उससे अच्छी तरह सिखावन देना । यही महा मन्त्र है ।

वैजनाथ—नहीं, बृहस्पति जी का ऐसा महामन्त्र कभी हो नहीं सकता ।

वसन्ती—तब क्या ?

वैजनाथ—यही कच्चे आम की चटपटी चटनी बना देना, आमरस बना देना, इत्यादि बृहस्पति जी के दो एक महा मन्त्र तो मैं जानता हूँ । और भगवान् जाने ।

बसन्ती—अच्छा तब वही सिखा आई हूँ । और ताई जी को चिट्ठी लिखूँगी, उनके आने से तारा का मन भी लग जायगा और विजय भी सम्भवतः लज्जित होकर सुधर जायगा ।

बैजनाथ—ताई जी भला दामाद के घर क्यों आने लगीं ?

बसन्ती—सब बातें लिखने ही से आवेंगी, हजार हो आखिर तो माँ का मन है ।

बैजनाथ—और कामिनी का क्या उपाय किया ?

बसन्ती—यह तुम्हारे जिम्मे रहा । तुम्हारी नौकरी-चाकरी तो खूब हुई, अब रोज एक बार कालीघाट जाकर रोगी की सेवा करनी पड़ेगी । उस घर में कोई भी समझदार आदमी नहीं है, शायद काली जी का प्रसाद खिला खिला कर लोग रोगी का रोग और भी बढ़ा देंगे, जिसमें इलाज ठीक तरह से हो, यह तुमको देखना होगा ।

बैजनाथ—मैं अपनी शक्ति के अनुसार कुछ कसर नहीं रक्खूँगा । कल तड़के ही जाऊँगा । अच्छा शिवनाथ का क्या इन्तजाम किया ? तुम रही एक तरफ मैं रहा दूसरी तरफ । इधर शिवनाथ को कौन देखे भालेगा ?

बसन्ती—हाँ यही तो मुझे उस छोकड़े की बात याद ही नहीं रही । अरे चम्पा, तू जरा शिवनाथ जी की सेवा कर सकेगी । नहीं तो वह पढ़ पढ़ कर शरीर मिट्टी कर लेगा ।

चम्पा छत पर खेल रही थी, दौड़ती हुई आकर बोली—

“क्यों जीजी मुझे बुलाया था ?

बसन्ती हँसती हुई बोली—हाँ रानी ! बुलाया था ! मैं पूछती हूँ कि तू जरा शिवनाथ की सेवा कर सकेगी ?

लड़की का मुँह लज्जा से लाल हो गया, वह दौड़ कर भाग गई ।

१६

आश्विन महीने का नवरात्र निकट आने लगा । लड़कों की खुशी का ठिकाना नहीं रहा । नया नया कपड़ा, नया जूता नई सजावट, नई टोपी पहनेंगे, स्कूल में छुट्टी होगी, दुर्गा पूजा में नाच-तमाशा नाटक देखेंगे । दुर्गा जी के भस्मान के दिन गाड़ी पर चढ़ कर मेला धूमधाम देखेंगे । मारे आनन्द के लड़के फूले नहीं समाते थे ।

गृहिणियों की खुशी का कहना ही क्या था ? कोई बड़ी भारी त्योहारी की तैयारी कर रही हैं, नए दामाद के यहाँ भोजन कर समधिन को तुष्ट करेंगी । कोई बड़ी भारी त्योहारी को उम्मीद कर रही हैं, बी० ए० पास लड़के की शादी करके भारी गठरी मिली है । लड़के की घड़ी चेन अच्छे फैशन की नहीं थी, इसलिए उसे तोड़ फेंक कर समधिन जी की सिकड़ी बिकवा कर नवीन घड़ी चेन वसूल की गयी है, और शाम के पैर पर पैर रख कर छत पर बैठी हुई अपनी बुद्धिमान अन्य पड़ोस की गृहिणियों से सलाह कर रहीं हैं, देखूंगी इस बार समधिन कैसी त्योहारी भेजती हैं अगर मन माफिक नहीं हुई तो लात मार कर फेंक दूँगी । ब्याह के समय आँख में धूल मोंक दी थी, देखूंगी न किस तरह धोखा देती हैं । मेरा लड़का क्या पानी में बह कर आया है, ऐसा लड़का कलकत्ते में कोई एक निकाल तो दे । उनकी बुद्धि तो सठिया गई है, ऐसे लड़के को ऐसे घर में ब्याह दिया अच्छा देखूंगी न त्योहार पर पाई पाई न समझ लूँ तो बाप की बेटी नहीं ।”

रोती हुई बालिका बधू आज तीन महीने से पिता के घर जाने के लिए व्यर्थ आँसू बहा रही है। मालकिन जी बिना त्योहारी देखे बहू को नहीं भेजेंगी।

साधारण गृहस्थों की युवतियाँ भी दिन गिन रही हैं। पति परदेश में नौकरी करते हैं, दशहरे की छुट्टी में घर आकर स्त्री का मुँह देखेगे। अगर इस बार नहीं आए तो ? यदि साहब ने छुट्टी न दी ? ऐंजी, क्या साहब लोगों के मन में जरा भी दया-माया नहीं है ? स्त्री बाल-बच्चों के लिए क्या उन लोगों का मन कभी घबराता नहीं है ?

शौकीन बाबुओं की खुशी का क्या कहना है ? कोई बाजरा ठीक कर रहे हैं। नाच तमाशे की तैयारी कर रहे हैं, साथ ही साथ न जाने और भी क्या क्या तैयारी कर रहे हैं, हम क्यों कर जानें ? अपने को क्या मतलब ? अपने काम से काम।

बंगदेश के गाँवों में भी लोगों के चेहरे पर हँसी दिखाई दे रही है। माता वसुन्धरा की कृपा से, किसान सब भादों महीने में अनाज काट कर, जमींदार को लगान दे रहे हैं, बनिए का कर्ज पटा रहे हैं, आज साल में दो तीन-महीने के खाने लायक धान जमा कर सके हैं। किसानों की स्त्रियाँ चोरी से वसी में का थोड़ा-सा थान पार करके हाथ की चाँदी की चूड़ी बनवा रही हैं या बाजार में जाकर नई साड़ी खरीद रही हैं। बरसात के बाद सुन्दर बंगदेश जल से स्नान कर हरी-भरी पोशाक पहिन कर अजीब शोभा दिखा रहा है, चन्द्रदेव शरद ऋतु की निर्मल चाँदनी की निराजी छटा अलग दिखा रहे हैं। न ज्यादा गरमी ही है, न सरदी ही है, मन्द मन्द वायु प्राणियों को आनन्द देती हुई बह रही है। गृहस्थ का घर धन-धान्य से पूर्ण हुआ, बेचारे गरीब किसान गृहस्थों के मनमें जरा खुशी

हुई। ओपड़ी पर नई छाजन डलवाई गई, घर का घेरा मरम्मत करवाया गया। बंगदेश में नवरात्र की दुर्गापूजा में इतनी धूम धाम होने का यही सबब है। और कोई सबब तो हमें मालूम नहीं।

यद्यपि शरद ऋतु के आगमन से सब ओर आनन्द छाया हुआ है, पर दुःखियों के भाग्य में इस समय भी सुख नसीब नहीं था, दुःखियों का दुःख तो दूर भी हो सकता था पर शोकांतों का शोक दूर होना कठिन था। तारा की माँ कलकत्ता आई, बसन्ती भी घड़ी घड़ी तारा को देखने जाती पर तारा की बीमारी बढ़ती ही गई। सास के आने पर पहले तो विजय नारायण जी कुछ दिनों तक जरा अनमने से रहे पर बहुत दिनों की आदत पड़ जाने से उनकी चालचलन सुधर नहीं सकी। अब उन्होंने घर के भीतर आना जाना भी बन्द कर दिया। बाहर ही खाने-पीने का इन्तजाम कर लिया। तारा की माँ गाँव लौटने की तैयारी करने लगीं, पर दिन पर दिन लड़की की हालत खराब होते देख कर उसे छोड़ नहीं सकीं। तारा बेचारी और भी दुबली हो गई, बरसात बीतने पर उसकी खाँसी और भी बढ़ गई; मुँह एक दम सूख गया, आँखें गड़हे में धँस गईं, पर इस हालत पर भी वह मुँह से हाँस भी नहीं निकालती थी, अपने फूटे भाग्य की चर्चा कभी किसी से नहीं करती, हर रोज धीरे-धीरे गृहस्थी का नियमित धन्धा करती, बसन्ती से मिलती-जुलती बातचीत करती, माता की सेवा करती और पति के लिए तरह तरह का पाक-व्यंजन तैयार करके बाहर भेज देती थी।

बैजनाथ जी की देखभाल और सेवा टहल से कामिनी के पति की बीमारी कुछ घटी, पर एक तो बुढ़ाई की उमर दूसरे

इतनी भारी गृहस्थी का रोज तरह-तरह का उपद्रव. कालीघाट के पण्डों की नित्य नई लीला, बड़ी कठिनाई से यदि जरा-सा आराम होता, तो एक दिन की बदपरहेजी सब बातें बिगड़ जाती थीं, इस लिए बैजनाथ जी को इनके आराम होने की विशेष आशा नहीं हुई।

बसन्ती कभी-कभी शिवनाथ को बुला भेजती, पर इन दिनों उनकी पढ़ाई की बड़ी धूमधाम थी, इसलिए आ नहीं सकते थे। अच्छी तरह पढ़ेंगे नहीं तो परीक्षा कैसे देंगे? बसन्ती ने अधिक जिद नहीं की, केवल रोज नए-नए तरह के व्यंजन बना कर भेज देती थी। चम्पा बड़े यत्न से मिश्री का पन्ना बना कर, पपीता बना कर, मूंग की दाल भिंगाकर अपने हाथ से थाली में सजा कर दाई के हाथ शिवनाथ जी के यहाँ भेज देती थी। शिवनाथ जी बहुत मना करते पर लड़का जरा पेटू था, क्योंकि मूंग की दाल चटपट खा-पीकर एक ही घूँट में मिश्री का पन्ना पी जाता था, और फिर दाई को कहता—दइया, कल से यह सब मत लाना, वे लोग रोज-रोज इतनी तकलीफ क्यों करते हैं? मुझे कुछ जरूरत नहीं है। दाई खाली बर्तन हाथ में उठा कर जाती हुई कहती—हाँ सो तो जानती ही हूँ। पर पेटू लड़के का कहना न मान कर चम्पा हर रोज मिश्री का शरबत बनाकर भेजती। इसी तरह कई सप्ताह बीत गये। अन्त को नवरात्र दुर्गा पूजा आ पहुँची। गोपाल बाबू के साथ बैजनाथ जी कई बंगाली रईसों के यहाँ प्रतिमा-दर्शन, नाच-तमाशे में नाटकों में गए, अन्त में प्रतिमा-विसर्जन का दिन आ पहुँचा, बड़ी धूमधाम से भसान हो गया, कलकत्ता महानगरी में चारो तरफ आनन्द छाया हुआ था। बाजे-गाजे और गाने-बजाने की ध्वनि से सारा

शहर गुलजार हो रहा था। सड़कों में लड़के, बूढ़े, बच्चे, युवा, स्त्री-पुरुष नींच ऊँच सब तरह के लोग नदी की धारा की तरह आ जा रहे थे। गरीब से गरीब आदमी भी एक नया वस्त्र पहिन कर खुश हो रहा था। दुर्गा पूजा का उत्सव इस महानगरी को कंपायमान और आनन्द स्रोत से स्नान करा कर समाप्त हुआ। इसके बाद परस्पर भाई सखा मित्र माता पुत्र सब प्रणाम नमस्कार आशीर्वाद करके गले मिलने इत्यादि से वृत्त हुए। मानो आज संसार ने अपना द्वैत भाव त्याग दिया, शत्रु ने शत्रु को, अपराध प्रस्त ने अपराधी को क्षमा किया। मनुष्य-हृदय की कोमल वृत्तियाँ सब जाग उठीं। दया करुणा, क्षमा स्नेह प्रीति से आज बंगवासी सब स्नात हो रहे हैं। शरद ऋतु की चाँदनी रात में कलकत्ते की सड़कों पर प्रेम-मुहूर्त्त आनन्द की लहरें चलने लगीं।

रात के दस बजे थे। बसन्ती चौके से भोजन करके उठी। लड़के दोनों सोए हुए थे, चम्पा सोई थी, और बैजनाथ जी भी सो गए थे। दाई घर जा चुकी थी, बसन्ती सदर दरवाजे का हुड़का चढ़ाकर, ऊपर चढ़ ही रही थी कि किसी के द्वार खटखटाने की आवाज आई। इतनी रात को कौन आया है ? बसन्ती जरा आगा-पीछा करने लगी। उसने पूछा—कौन है ? दरवाजे पर कौन खड़ा है ? कुछ जवाब नहीं आया। तब हिम्मत करके बसन्ती ने आप ही जाकर दरवाजा खोल दिया। एक पुरुष भीतर आया। पहले तो बसन्ती पहचान नहीं सकी, पर देखा कि शिवनाथ है। पर ऐं ! यह क्या ? शिवनाथ जाँड़ी यह कैसी शकल हो गई है। बड़े-बड़े लंबे रुखे केश ललाट और आँखों पर पड़े हुए हैं, आँखे गड़हे में घँस गई हैं, पर अग्नि-सी जल रही हैं, मुंह बड़ा गम्भीर सूखा हुआ है, शरीर

दुबला है। केवल एक मैला-कुचैला दुपट्टा ओढ़े बसन्ती के सामने आ खड़े हुए। दोनों भीतर आए। शिवनाथ बोले—बहुत दिनों से आ नहीं सका, कुछ बुरा मत मानना बसन्ती बहिन, आज दसहरे का प्रणाम करने आया हूँ।

बसन्ती—जीते रहो शिवनाथ, तुम्हारी बड़ी उमर हो, व्याह हो, घर गृहस्थी करो, भगवान् करें इन आँखों से देखती जाऊँ, छोटे भाई को और क्या असीस दूँ।

बसन्ती की स्नेह भरी वाणी सुनकर शिवनाथ जी की आँखों से आँसू गिरने लगे, कुछ बोल नहीं सके। बसन्ती के दोनों चरण पकड़ कर उन्होंने प्रणाम किया, उसने बहुत से असीस देकर हाथ पकड़कर उनको उठाया और कहा—शिवनाथ, तुम बहुत दिन से यहाँ नहीं आए तो क्या हुआ, मैं रोज तुम्हारी खबर लेती थी, और यह पूरा भरोसा था कि हम लोगों पर कुछ भी तकलीफ पड़ने ही से तुम जरूर आओगे। पर ऐसी भी कोई लिखाई-पढ़ाई करता होगा? शरीर पहले कि पढ़ना पहले? अहा! तुम्हारी दोनों आँखें बैठ गई हैं, मुँह सूख गया है, शरीर दुबला हो गया है। वाह! इस तरह दिन-रात जागकर कोई भला पढ़ता होगा? तुम्हीं एक अनोखे पढ़वइया हुए हो। देखो शिवनाथ! तुम अब बच्चे नहीं हो, समझदार जवान लड़के हो, तुम्हें भी क्या समझाना पड़ेगा? अपनी बहिन की बात मानो, रात को अच्छी तरह सो जाया करो, समय पर भोजन किया करो, तुम्हारे ऐसे लड़के को परीक्षा में पास होने की क्या परवाह है?

शिवनाथ के सूखे होठों में जरा-सी हँसी दिखाई पड़ी, धीरे-धीरे बोले—

बसन्ती बाहिन, परीक्षा ही देने से क्या जिन्दगी का सुख बढ़ता है ? देखो बैजनाथ भैया ने क्या कोई परीक्षा दी है, पर उनके ऐसे सुखी दुनियाँ में कितने आदमी हैं ?

बसन्ती—तब परीक्षा के लिए इतनी चिन्ता क्यों ? शरीर मट्टी किस लिए कर रहे हो ?

शिवनाथ—परीक्षा की मैं जरा भी परवाह नहीं करता ।

बसन्ती—फिर इतनी चिन्ता किस बात की लगी है ?

शिवनाथ जी ने कुछ जवाब नहीं दिया बसन्ती को वहीं चबूतरे पर बैठाया, आप पास बैठे, बसन्ती के दोनों हाथों का पकड़ कर सिर नीचा करके आँखों से बड़ी-बड़ी आँसूओं की बूँदे बहाने लगे ।

बसन्ती—एँ ! यह क्या शिवनाथ ? रोते क्यों हो ? जी में कुछ दुःख हुआ है क्या ? तो मुझसे कहते क्यों नहीं ? शिवनाथ, बचपन से लेकर आज तक ऐसी कौन-सी बात हुई जो तुमने मुझसे नहीं कही, मैंने ही तुमसे कभी कोई बात छिपा दी है ? इतने दिन का स्नेह क्या आज भूल गए । अपनी बसन्ती जीजी को क्या परायी समझा ?

शिवनाथ—बसन्ती बहन ! जिस दिन तुम्हें परायी समझूँगा उस दिन फिर दुनियाँ में मेरा अपना कोई भी नहीं रह जायगा । मैं मन की पीड़ा तुमसे नहीं छिपाऊँगा । मैं बड़ा ही अभागा पापी हूँ ।

बसन्ती ने देखा कि शिवनाथ जी थर-थर काप रहे हैं, आँखें अग्नि-सी जल रही हैं । वह भी जरा घबड़ा गई, फिर धीरज रखकर धीरे-धीरे बोली—शिवनाथ, कुछ संकोच मत करो, मन की बात मुझसे कह डालो ।

शिवनाथ—बसन्ती बहन, मेरे मन की बात मत पूछो, मैं बड़ा पापी हूँ, मेरा मन पाप-चिन्ता से काला हो गया है। बड़े भाई के तुल्य मित्र के घर आकर मैंने असद् आचरण किया है, अपनी बहिन के अमृत रूपी स्नेह के बदले उ। विष दिया है। मेरे मन की बात मत पूछो, मेरा हृदय घोर पाप की कालिख से कलंकित है।

शिवनाथ जी ने बसन्ती के दोनों हाथ छोड़कर उसकी दोनों भुजाओं को पकड़ा, इतने जोर से पकड़ा कि बसन्ती की दुर्बल कोमल भुजाएं लाल हो गईं। शिवनाथ जी थर-थर कांप रहे थे, आँखों से मानो अग्नि की चिनगारियाँ निकल रही थीं।

बसन्ती ने शिवनाथ की ऐसी अवस्था कभी नहीं देखी थी, वह डर गई। क्या इस आदर्श चरित्र छोटे भाई के जी में कोई पाप चिन्ता है? बसन्ती स्वप्न में भी यह विश्वास नहीं कर सकी। पर आज इस सन्नाटे की रात में, इस पागल सरीखे युवक को देखकर अकेली औरत कुछ डर गई, पर बुद्धिमान बसन्ती ने उस भय को छिपा कर स्पष्ट स्वर से कहा—शिवनाथ, तुम्हें बचपन से मैं अपना छोटा भाई समझती हूँ, तुम भी मुझे बहन कहकर बुलाते हो, अपनी बड़ी बहिन से छोटा भाई जो कुछ कह सकता है बिना संकोच के कह डालो।

शिवनाथ—मैंने जो बुरा आचरण किया है, जिस पाप-वासना को मन में जगह दी है, वह बड़ी बहिन के सामने कहने लायक नहीं है, मैं महा पापी हूँ।

इस पर बसन्ती क्रुद्ध होकर बोली—अच्छा तो फिर मुझ से वह बात कहने की कोई जरूरत नहीं, मेरा हाथ छोड़ दो, अपनी बहिन की इज्जत रखो।

शिवनाथ जी ने बसन्ती की बांह छोड़ दी, फिर उसकी गोद में मुंह छिपा कर बच्चों की तरह रोने लगे। बसन्ती को कुछ भी समझ में नहीं आया। बच्चे की तरह जिसका शुद्ध आचरण है, बच्चे की तरह जो पैर पर गिर कर रो रहा है, क्या उसके मन में कोई पाप-वासना रह सकती है ? उसने धीरे धीरे शिवनाथ जी का मुंह ऊपर उठाया, अपने आंचल से धीरे धीरे उनके आंसु पोंछ दिए, फिर धीरे से कहा—शिवनाथ, तुम्हारे मन में ऐसी चिन्ता उदय नहीं हो सकती जो मेरे सुनने लायक न हो, तुम्हें जो कहना हो कहो, मैं सुनूँगी।

शिवनाथ—परमात्मा इस दया के लिए तुम्हें सुखी करें। बसन्ती जीजी, मुझे एक बात का अभय दे दो कि यदि मेरी बिनती निष्फल हो, प्रतिज्ञा करो कि यह बात किसी से कहोगी नहीं। मेरी पाप-चिन्ता मेरे प्राण के साथ शीघ्र ही लय हो जायगी, जिससे संसार से यह बात जाहिर न होने पावे।

बसन्ती—अच्छा मैंने मना।

शिवनाथ जी थोड़ी देर तक कुछ सोचने लगे, फिर दोनों हाथों को हृदय पर रखकर मानो मन के आवेग को रोकने की कोशिश करने लगे, और फिर से बसन्ती के दोनों हाथ पकड़ कर उसके पैर तक अपना सिर नीचा कर के धीमी आवाज से बोले—पुण्यहृदया सरला विधवा चम्पा से मेरा ब्याह कर दो।

बसन्ती के सिर पर मानो आकाश टूट पड़ा। पल भर में उसने छः महीनों की सारी घटनाओं का सारा मर्म जान लिया।

शिवनाथ जी रुँधे हुए कण्ठ से कहने लगे—बसन्ती जी जी मैं बड़ा पापी हूँ, आज छः महीने हुए जिस रोज पहले

पहल मैंने चंपा को कुन्दनपुर में देखा, उसी रोज मेरा मन डोल गया। सिवाय किताब पढ़ने के मैं और व्यसन से अनजान था, पुस्तकों के सिवाय और किसी तरह के प्रेम से मैं बेखबर था, उसी दिन से सीधी-सादी, अनुपम सुन्दरी, तेरह वर्ष की लड़की को देख कर मेरा हृदय उथल पड़ा। मैंने समझा था कि समय पाकर दिल की यह कमजोरी जाती रहेगी, पर नहीं दिन पर दिन कलकत्ते में अधिक विष पान करने लगा मेरा शरीर-मन, आत्मा सब छिन्न-भिन्न हो गया। बसन्तो बहन, तुम शुद्ध मन से मुझे रोज अपने घर आने देती थी, मैं हर रोज तुम्हारे घर आता था बैजनाथ भैया बड़े भाई के तुल्य स्नेह करके रोज मुझे अपने घर आने देते थे। मैं मन में कालकूट विष धारण कर, पाप-वासना साथ लेकर, हर रोज इस पवित्र गृहस्थाश्रम में आता था। ओह ! परमात्मा क्या यह महा पाप महा-छल क्षमा करेंगे। बसन्ती बहन, तुम क्या क्षमा करोगी ? चम्पा की बीमारी के बाद जब हर रोज उसे दिलासा देने में आता था तो बहुत देर तक बैठे बैठ कर दोनों में बातचीत होती थी। उस समय मैं होश हवास खोकर क्या पापचिन्ता करता था, बसन्ती बहन तुम्हें सुनाऊं। मेरा ब्याह होगा, गृहस्थी होगी, सुन्दरी चम्पा उस गृहस्थी की रानी होगी मेरी जिंदगी को आनंदमय कर देगी, इसी सोच में मैं उन्मत्त हो जाता था, आकाश के तारों में यही चिन्ता पाठ करता, वायु के झकोरों में यही शब्द सुनता था। रोज आते आते, मेरे होश-हवास जाते रहे, यहां तक कि पढ़ाई में विघ्न हो रहा हूं कह कर बैजनाथ भैया ने मुझे एक रोज टोका तब मुझे होश हुआ। चूल्हे में जायें पुस्तकें और परीक्षा, मुझे इसकी कुछ भी परवाह नहीं थी, पर जिस भारी तूफान में मेरी जिन्दगी की किरती पड़ी है, शायद कहीं

सीधी-सादी चंपा बेचारी भी उस आफत में न पड़ जाय, यह भयएकाएक मेरे मन में जाग उठा। बस उसी दिन से मैंने इस पुण्य आश्रम में आना छोड़ दिया। मैंने सोचा था कि चंपा को न देखने से मैं उसे भूल सकूँगा, पर नहीं वह आशा वृथा हुई। बसन्ती जोजी ! मैं दो महीने से इस पाप-चिन्ता को बिसार देने के लिये जी जान से लगा हुआ हूँ, पर यह चेष्टा वृथा—नदी के वेग को हाथ से रोकने के तुल्य हुई। मैंने पढ़ने में मन लगाने की कोशिश की, थिएटर-तमाशे में जाकर इस चिन्ता को भुला देने की कोशिश की, संगी-साथियों से मिला जुला, गाने बजाने के स्थानों में गया, पर हाय ! इस काल चिन्ता को नहीं भुला सका। घर की दीवारों पर, रात को निर्मल आकाश में पुस्तक की प्रति लाइन में, थिएटर में, तमाशे में, से हर जगह उसी सुन्दरी का सरल मुख देखता रहा हूँ। बहन, दो महीने से मेरी जो हालत हो रही है उससे रास्ते का कँगला अच्छा होगा। मैं पापी हूँ, पर, तुम मुझे घृणा मत करना, तुमही घृणा करोगी तो फिर दुनियाँ में मेरा स्नेह करने वाला कौन रहेगा ? मैं कहां सिर छिपाऊँगा ? इतना कहकर फिर शिवनाथ जी रोने लगे, आंखों से आंसू की धारा बहने लगी। बसन्ती ने चुपचाप बैठ कर शिवनाथ जी की सब बातें सुनीं। क्या जवाब देती। शिवनाथ की बातें, पागल की बातें हैं, पर यह कह देने से ही तो यह उन्मत्त युवक आजही आत्म-घात कर लेगा।

बसन्ती ने धीरे से शिवनाथ जी के आंसू पोंछ दिए, और कहा—छिः शिवनाथ, अपने को ऐसा दुःखी क्यों करते हो ? ऐसा धिक्कार क्यों देते हो ! तुम्हें मैं बचपन से छोटे भाई सरीखा जानती हूँ। तुम्हें क्या मैं घृणा कर सकती हूँ। इसमें

घृणा की कौन-सी बात है ? यही तो कि, हम लोगों में विधवा विवाह की चाल नहीं है, पर ऐसा विवाह हो सकता है कि नहीं, उनसे पूछूँगी, जो होगा वे करेंगे, इसमें अपने को इतना दुःखी करने की क्या जरूरत है, तुम्हारी इस बात से वे चाहे जो कुछ निश्चय करें, यह निश्चय समझो कि इस जिनंदगी में, तुम्हारे ऊपर से हम लोगों का स्नेह कदापि घटने का नहीं ।

शिवनाथ—बसन्ती जीजी, तुम्हारा मुँह मीठा हो, तुमने मुझ पर इतनी दया की । आज मुझे घृणा करके निकाल बाहर नहीं किया, तुम्हारी यह दया मैं इस जिनंदगी में कभी नहीं भूलूँगा ।

बसन्ती—शिवनाथ, मालूम होता है कि आज अभी तक तुमने कुछ खाया पिया नहीं है, कुछ खाओगे ? मुँह हाथ धो लो उनके लिये पूरी की थी, उसमें की बची हुई कई एक रखी हैं । आओ एक बरफी के साथ खा लो ।

शिवनाथ—नहीं बहन, आज कुछ नहीं खाऊँगा, मुझे भूख नहीं है ।

बसन्ती—अच्छा, तो कल सबेरे एक बार आना, उनसे सलाह की जायगी ।

शिवनाथ—तुम्हारे हाथ जोड़ता हूँ, माफ करो । भैया जो कहें, तुम ही मुझसे कह देना, इसके पहले मैं उन्हें मुँह नहीं दिखा सकूँगा ।

बसन्ती—कल न आओ न सही, पर कभी कभी आया तो करो, अपने को इस तरह दुःख देओगे तो बीमार हो जाओगे ।

शिवनाथ—माफ करो जीजी, माफ करो, इस बात का कुछ किनारा हुए बिना मैं चंपा को मुँह नहीं दिखाऊँगा । देखो

बसन्ती जीजी, खूब होशियार रहना, जिसमें चंपा यह बात किसी तरह न सुन पावे । उसका मन डोलने न पावे, यदि मेरी आशा पूरी न हुई तो दुनियां में एक अभागा रहेगा और एक बेचारी को अभागिनी करने की जरूरत नहीं है ।

बसन्ती—अच्छा, इस बारे में उनकी जो मरजी होगी, तुम्हें चिट्ठी में लिख कर भेज दूँगी ।

शिवनाथ—नहीं, चिट्ठी में यह बात मत लिखना, मैं आप आकर तुमसे पूछ जाऊँगा । कब आऊँ बतलाओ । मेरे भाग्य में विधाता ने सुख लिखा है कि दुःख इसकी सूचना मूँके कब मिलेगी ।

बसन्ती—शिवनाथ यह बात कोई दो एक दिन में तय होने की तो है ही नहीं, बहुत कुछ देखना-सुनना सलाह बात, साचना विचारना पड़ेगा । अच्छा तुम पन्द्रह-सोलह दिन बाद आना ।

शिवनाथ—यही सही, मैं दिवाली की रात को फिर आऊँगा, बीच में जो कई दिन है, मेरी मुर्दे की सी हालत रहेगी ।

—:❀:—

२०

ज्योंही शिवनाथ जी घर से बाहर निकले त्योंही देवी बाबू के घर की एक दाई हाथ में बड़ी सी थाली लिये हुए भीतर आई । थाली रखकर बोली—आज दसहरे का दिन है, मालकिन जी ने कुछ फल फलेरी और मीठा भेजा है । कई जगह जाना रहा इसलिए इतनी रात हो गई ।

बसन्ती—अच्छा, वसी चौतरे पर थाली रख दे, खाली करके कल अपनी दाई के हाथ भेज दूँगी।

दाई ने थाली चौतरे पर रखी, फिर सिर की धोती जरा सरका कर, मुँह फिरा कर, गाल में अँगुली देकर वह मुसकराने लगी।

बसन्ती—क्यों रे क्या हुआ है जो हँस रही है, क्या कहीं से कुछ तमाशा देखकर आई हो।

दाई—हाँ तमाशा ही है और क्या ? भले आदमी के घर हो तो तमाशा और हम लोगों के यहाँ हो तो चट से लोग कानाफूसी करने लग जायँ।

बसन्ती—सो क्या ? कहाँ क्या तमाशा हुआ है ?

दाई—नहीं बहूजी ! हम लोग गरीब आदमी ठहरे, हमें इन सब बातों से क्या मतलब, पर यह तो जानती ही हो कि देखने वाले लोग कानाफूसी किए बिना नहीं रहते।

बसन्ती—अरे क्या तूने देखा है, सो कुछ खोल कर बोल भी ?

दाईजी ने जरा सिर के कपड़े को और सरकाया और मुसकरा कर बोली—मैं कहती हूँ, कि जो छोकड़ा इतनी रात को तुम्हारे घर से अभी निकल कर गया वह कौन है ?

बसन्ती जरा डरी। बाहर का दरवाजा अभी तक बराबर खुला रहा। क्या दाई ने खड़े खड़े सब सुन तो नहीं लिया ? जरा क्रोधित हो कर बोली—तेरी आँख फूट गई है क्या ? शिवनाथ आया था और कौन था ? पहचानती नहीं ? आज क्या यहाँ नखरा करने आई है ?

दाई—आँख नहीं फूटी, बहूजी आँख नहीं फूटी, शिवनाथ जी थे यह तो पहले ही से देख लिया था, पर क्या भले आदमी के लड़के भले आदमियों के घर की औरतों से इसी

तरह हाथापाई करते होंगे ? क्या जानूँ भाई, तुम लोगों के गांव-गाँवई की क्या चाल है, मैं तो आज तीस बरस से कलकत्ते में नौकरी करती हूँ ऐसी चाल तो मैंने कहीं नहीं देखी। जो, हो भले आदमियों के घर की बातों से अपने को क्या मतलब ? किसी तरह सांझ-सबेरे रुखा-सूखा खाकर पेट भर जाय वही बहुत है, अपने को इन सब बातों से क्या मतलब ?

बसन्ती को पहलेही से मालूम था कि देवी बाबू के घर की दाई सब बड़ी बेहया हैं, पर आज इस दाई के ताने और व्यंग्य से उसे बड़ाही गुस्सा आया, पर क्रोध जाहिर करने से और भी हानि होगी, यह सोच कर उसने गुस्से को रोका और कहा—अरे दइया, तू क्या जानती है ? बात यह है कि शिवनाथ की मां तो उसका व्याह करती नहीं, इसी लिये अकेला घर में रह रह कर और पढ़ पढ़ कर पागल सा हो गया है। क्या बक रहा है, उसका कुछ ठिकाना है ?

दाई—अरे, पागल हुआ है तो हो न दूसरों के घर के भीतर आकर ऊधम क्यों मचाते हैं ? व्याह के लिये पगला हुआ है तो जाय जाकर व्याह करे, तुमसे हाथापाई क्यों करता है ? क्या तुमसे व्याह करना चाहता है ?

बसन्ती—चल मुँहझौंसी। तेरी जवान में क्या कोई बात अटकती ही नहीं ? जो मुँह में आता है, वही बकजाती है। शिव-नाथ एक लड़की देख आया है, उसी से व्याह करना चाहता है, पर शरम के मारे घर में किसी से तो कह नहीं सकता वही मुझसे कहने आया था।

दाई—अरे बहूजी, अब छिपाती क्यों हो ? मैंने क्या कुछ सुना नहीं है। मेरी आंख थोड़े ही फूट गई है कि कुछ देखा नहीं या बहरी हूँ कि कुछ सुना नहीं। वही चम्पा

चम्पा का नाम ले ले कर जो शिवनाथ जी रो रहे थे, चम्पा के लिए कलेजा फटा जाता था यह क्या मैंने सुना नहीं है ? तुम लोग भला यह बात मुँह से क्योंकर निकालो ? ऐसी बात क्या कभी कोई भलामानुष जबान से निकालता है, या आज तक किसी ने कान से सुनी है। ऐं ! विधवा का ब्याह ? हरे राम, छिः छिः छिः, ऐसे भले आदमियों के घर को सौ सौ दण्डवत, हम लोगों के यहां कोई ऐसी बात करे तो उसी दम बिरादरी से निकाल दिया जाय ! हरे राम, छिः ! छिः ! छिः ! ऐसी बदनामी की बात किसी ने कभी सुनी भी होगी ? यही भले आदमियों का घर है ! अरे, भंगी चमारों के घर में भी किसी ने ऐसी बात नहीं सुनी होगी। राम राम छिः ! छिः ! छिः ! मेरा तो होश गुम्म हो गया है, हाय ! हाय ! यह क्या ! यही भले घरों की करतूत है।

इस बार बसन्ती बहन सचमुच डर गई । जब तक बड़े आदमी के घर की मुँहफट दाई उस पर ताने फेंक रही थी तब तक तो वह सब बरदाश्त करती गई, पर चम्पा के नाम से यह कलंक फैलावेगी यह सोच कर उसके होश-हवास जाते रहे । उसने निश्चय कर लिया था कि, शिवनाथ की पगली बातें मैं कदापि स्वीकार नहीं करूँगी पर विधवा के लिए मामूली झूठा कलंक भी बड़ा भयंकर है, झूठ सच की खोज कौन करता है, इन सब बातों का कलंक फौरन चारों तरफ फैल जाता है, मिटाए नहीं मिटता ।

बुद्धिमती बसन्ती ने बहुत कुछ सोच-विचार कर बकस से एक रुपया निकाला, और कभी देवी बाबू के घर से कुछ खाने पीने की चीज आती, तो दाई को दो पैसे देकर बिदा करती थी, पर आज दाई के हाथ में एक रुपया रख कर

बोली—दइया, तू तो देबी बाबू के घर की पुरानी नौकरानी है, आज दसहरे का दिन है, तुझे और क्या दूँ। रुपया ले जा एक नई धोती खरीद लेना, और शिवनाथ जो पागलपन की बात बक गया है, उसका जिकर किसी से मत करना। आज दसहरा है, शायद कहीं से भांग पीकर आया होगा, इसी लिए पागलों की बातें बकता था। पागल की बात का भला क्या ख्याल करना। अरे, भले आदमी के घर क्या ऐसा काम होता होगा ? हम लोगों का भी मान-सम्भ्रम है, शिवनाथ जी की भी माँ हैं, बहिन हैं, ऐसा काम भला कभी हो सकता है ? जा, पागलपन को जो बातें सुनी हैं, किसी को कहना मत, देख खबरदार जिसमें इस पागलपन की खबर किसी को न हो।

चमचमाता रुपया देखकर दाई का मन कुछ पसीजा। रुपया लेकर बोली—हाँ बहूजी, क्यों नहीं, भला पागल की बातों का कोई ख्याल करता होगा ? शिवनाथ जी ने ता थोड़ीसी भांगही पी थी, यही देखो न हमारे घर के छोकड़े सब बोतल पर बोतल न जाने क्या ला-ला कर गटागट पी जाते हैं, और चाल-चलन भी बस दण्डवत करने लायक है। रात को घर नहीं रहते, न बाप-माँ का डर और न घर में किसी की लज्जा-शरम। क्या करें ! आज कल घर-घर यही हाल है, आज कल के छोकड़ों की बात का ख्याल ही क्या करना। अरे राम राम ! वह सब बात क्या मैं मुँह में ला सकूँगी या किसी से कह सकूँगी मैं किसी से नहीं कहूँगी बहूजी, किसी से नहीं कहूँगी, तुम बेखटके रह।

दाई खुश होकर अपने घर गई। जो। लोग स्त्री-बरिष्ठ और स्वभाव से जरा भी जानकार हैं उन्हें यह बतलाना फजूल है कि तार की खबर की तरह बसन्ती के घर की यह बात थोड़ी

ही देर में तुलापट्टी, बड़ा बजार पार होकर काली घाट तक जा पहुँची । दूसरे दिन सबेरे शहर भरमें कोलाहल मच गया । देवी बाबू की गृहिणी जी, पैर फैला कर तेल मालिश करवा रही थीं, इस खबर को सुनते ही जैसे मेढ़क देख कर सर्प फुफकार उठता है — फुफकार उठीं ।

“हाँ यह तो होना ही था, होगा क्यों नहीं ! अब आज-कल तो नीच-ऊँच का विचार है नहीं, न जाने कहाँ गाँव-गाँव से आकर लोग ब्राह्मण बन बैठते हैं । उनके किसी पुरखा ने कभी किसी ब्राह्मण के साथ नाता-रिश्ता किया है ? वह क्या जाने ब्राह्मण का मान । छिः छिः ऐसों को घर बुलाना ! उनकी तो अकल मारी गई है, जो उन लोगों के साथ उठते-बैठते हैं । आज घर आने तो दो, उनकी सब भलमनसी निकाल देती हूँ । न तो अपने नाम का ख्याल है न तो मान-मर्यादा का ध्यान है बड़े भारी हौस के बाबू बने हैं, जिसके साथ मन आया उठने-बैठने लग गए । अरे, यह तो मैं तभी जानती थी रे तभी जानती थी, जब यहाँ के किसी से मिलने के लिए घर से पैर नहीं निकालती थी । जभी बुलायी गयी तभी आई । मैंने तभी समझ लिया था कि कैसे ब्राह्मण हैं । और देखो न ठाट-बाट कैसा ? उस बिधवा छोकड़ी को पाड़दार साड़ी पहनाकर लाती है, लाड़-प्यार किया जाता है । ऐसा होगा नहीं ? यह सब तो होगा ही । जैसी जात है वैसी ही तो चाल-चलन होगी । चमार-मेहतरों के घर और क्या होगा ? यह तो होना ही था । जैसा मुसलमानों के यहाँ विधवा का निकाह होता है कि नहीं, बस यह भी वही है, वही ।

बच्चों की माँ ने जो मालकिन जी के कलेजे के दर्द के

लिए उन्हें लगातार तेल की मालिश कर रही थी, रुखे स्वर में कहा—यह भला ब्राह्मण होंगे। क्या ब्राह्मणों के घर की विधवा इसी तरह रहती हैं ? हाय हाय ! और कुछ सुना है कि नहीं, यह छोकड़ी एकादशी के दिन बाजार के दोने उड़ाती है, तेल-उबटन लगाया जाता है, कंघी मिस्सी—छिः ! छिः ! छिः ! यही देखो आज एकादशी है, भला कोई कह तो दे कि सबेरे से एक घूँट पानी भी पीया है।

जमुना की माँ ने मालकिन जी के केशों में तेल लगाती हुई कहा—इतनी ही बातें नहीं हैं ? गाड़ी चढ़ाकर उस छोकड़ी को हवा खिलाने ले जाया जाता है, शिवनाथ जी रोज एक बार उससे मिलने जाते हैं। छिः ! छिः ! राम ! राम ! लज्जा-शरम एकदम पानी में बहा दी गयी।

मालकिन—ऐसी लड़की को भी धिक्कार है ! लड़की की माँ को भी धिक्कार है ! ऐसी लड़की क्या पेट में रखी जाती है ? पैदा होते ही नमक खिलाकर मार डालना चाहिए। विधवा हो गई, तब भी जरा लज्जा-शरम नहीं, सिर खोलकर शिवनाथ के साथ छत पर टहलती है, शिवनाथ के लिये मिश्री का शरबत भेजा जाता है। भला शिवनाथ ही का क्या अपराध है बताओ। आखिर तो मर्द का मन ठहरा। ब्याह-शादी भी तो नहीं हुई है। इस तरह यदि दोनों बहिन मिल कर उसे फुसलावेंगी तो वह भला लड़का भूलेगा नहीं ? ऐसी लड़की का मुँह देखना चाहिए ? मार झाड़ू मार झाड़ू।

इसी तरह से बकते बकते मालकिन और उनकी दोनों बहिनों का सुर धीरे-धीरे सप्तम पर चढ़ने लगा, मालकिन के कलेजे का दर्द बहुत बढ़ गया, दम पर दम कविराज जी आने

लगे । शाम को देवी बाबू मालकिन जी की तबीयत का हाल पूछने आए, मुँह से जबान निकालते ही वह ऐसी बिगड़ उठी कि दुम दबाकर बैठके में जा बैठे । मालकिन जी के गले की आवाज सुनकर नीचे हौज पर सब बहू-बेटियाँ काना-फूसी करने लगीं ।

पहली—क्यों रे क्या हुआ है इतनी बकीभकी क्यों हो रही है ?

दूसरी—अरे, तूने नहीं सुना है, सुनने लायक बात है ।

पहली—नहीं तो, कहो न, कहो न ।

दूसरी—ले सुन, वही जो कौन एक बैजनाथ ब्राह्मण कहाँ तो गांव-गँवई से आकर इसी मुहल्ले में रहता है न, वही जो उस दिन उसकी जोरु और साली अपने यहाँ आई थी, सो वह साली तो विधवा न है, सुनती हूँ कि शिवनाथ के साथ उसका ब्याह होगा ।

तीसरी—चल मुँहमौंसी ! विधवा का भला ब्याह होता है ?

दूसरी—क्यों होगा नहीं ? सुना है कि नहीं, विद्यासागर नाम का कोई एक बड़ा भारी बंगाली पण्डित है, वह कहता है कि विधवा का विवाह होना चाहिये । उसने विधवाओं के विवाह करवाये हैं ।

चौथी—अरे ! वह तो बड़ा रसिया है रे ! विधवा का विवाह करवाता है । अच्छा, क्या वह बूढ़ी विधवा का भी विवाह करवाता है ?

दूसरी—करावेगा क्यों नहीं ? लड़की राजी होने ही से हुआ ।

चौथी—तब, बच्ची की माँ और जमुना की माँ का भला

क्या अपराध है ? चोरी करके दूध मलाई उड़ाती ही हैं, लुफ छिप कर चुरा कर सिर में का खुशबू वाला तेल डालती ही हैं, तो फिर विद्यासागर को कहला कर व्याह कर लेने ही से हुआ, फिर इतनी चोरी-चमारी क्यों करनी पड़े ! खुल कर खेलें न ।

पहली—अरे चुप चुप ! कहीं सुन लेगी तो कलेजा निकाल डालेगी । अच्छा शिवनाथ जी तो, बड़े भले मानुस हैं, वह ऐसा काम क्यों करते हैं ?

दूसरी—चल बैठ । बहुत से भलेमानुस देखे हैं । मर्ती का मन डोलते क्या देरी लगती है । बस गोरी-गोरी लड़की देख करके मुँह से लार टपक पड़ती है ।

तीसरी—अच्छा जी, लड़की कितनी बड़ी है ।

दूसरी—कोई तेरह-चौदह वर्ष की होगी । रंग भी गोरा है, मुसकुरा मुसकुरा कर शिवनाथ जी से बातें करती है । मिश्री का शरबत पिलाती है, और न जाने उसके साथ और भी कुछ पिलाती है । इसी लिए तो उनकी भी अक्ल मारी गई है । हजार हो, आखिर तो मर्द का मन ठहरा ।

चौथी—अच्छा तब तो शिवनाथ जी से उस लड़की की बहुत दिनों की मुलाकात है ।

दूसरी—तुमने अब तक सुना क्या खाक ? यह मजे की बात तुमने समझी नहीं । मुलाकात तो वही गाँव-गाँवई से ही हैं । न जाने भाई ! वहाँ क्या हुआ । बिना समझे-बूझे दूसरे की निन्दा अच्छी नहीं, पर कलकत्ता आकर जो जो रङ्ग-रेलियाँ मच रहीं हैं, बड़ा बाजार भर में भला किसी से छिपी हैं । तू क्या जानती है ? शिवनाथ ने पहले तो उस लड़की को लाकर कुछ दिनों तक अपने घर में रखा, उसके बहिन बहनोई भी उसी घर में थे, फिर बैजनाथ जी की रङ्ग-रवैया बेढंगा

देख कर अलग किराए के घर में जा कर रहने लगी, वहाँ जाते ही राधा रानी कृष्ण-विरह व्यथा से बेहोश हो गई, बहाना किया गया कि बड़े जोर से बुखार आया है, बस फिर क्या था, हमरे कृष्ण जी महाराज भी चटपट वहाँ जा पहुँचे। अरे, कहाँ तक सुनेगी। दो एक बात हो तो सुनाऊँ। अरे, कृष्ण जी की माखन-चोरी लीला की कथा सुनी है कि नहीं, वही आज-कल के छोकड़े सब चोरी-बरजोरी सब इल्म सीखें हुए हैं, देख होशियार रहना।

चौथी—चल, मुंहमौंसी !

दाइयों की मजलिस अलग बैठ गई। बुढ़िया दाइयों के मुंह से सुन कर युवती दाइयाँ भी सबेरे से, बरामदे, में इधर-उधर सब जगह कानाफूँसी कर रही थीं। एक लंबीसी युवती दाई बोली—अरे ! सच्ची है क्या ? क्या सचमुच शिधवा का ब्याह होगा क्या ? दूसरी मोटी-ताजी युवती दाई बोली—अरे, तूने नहीं सुना सब ठीकठाक हो गया है, सगुन भी आ गया, बैजनाथ महाराज ने सोनार को गहना बनने दिया है और तू पूछती है कि होगा की नहीं ?

दुबली—तबतो यह चाल, चल जायगी। भलेआदमियों के यहां होगा तो फिर छोटी जातों में भी होने लगेगा।

मोटी—क्यों क्यों ? क्या तेरा भी मन चबता है क्या ? क्या उस कहार के छोकड़े से ब्याह करेगी ? वह तो तेरा रिश्ते में कुछ लगता है न ? वही, जो उस दिन सीढ़ी पर खड़ी होकर उससे कानाफूँसी कर रही थी।

दुबली—चल मुंहमौंसी। मुझे ऐसी बात ? अपने मन की बात कहती होगी ? वही जो तेरी जात का सुख मोदी है,

अभी उसी दिन तो उसकी जोरू मरी है, उसे दो मुट्ठी भात उबाल देने वाली कोई नहीं है। तू जो नमक-मिर्ची खरीदने के बहाने हरदम उसकी दूकान पर जाती है, क्या उसका घर आबाद करने का मन है ?

मोटी—तेरे मुँह में लूका।

इसी प्रकार से दोनों युवती दासियाँ अपने अपने मन की बात जाहिर कर रही थीं कि एक बुढ़िया दाई आ पहुँची, बोली—क्यों रे क्या हुआ है जो तुम लोग गाली-गलौज कर रही हो ?

मोटी—नहीं कुछ नहीं। यही शिवनाथ महाराज के ब्याह की बात कर रही थी। अरे भाई ! भले आदमी जो करें सो थोड़ा, बस जितना जूता-भाड़ है, हमी लोगों के लिए।

बूढ़ी—अरे ! भले आदमी जो करते हैं, उसमें कुछ रहस्य है। तभी तो करते हैं कि योंही करते हैं ? तू तो कान में रुई ठूसे रहती है, तुझे भला क्या खबर ?

दोनों युवतियाँ—ऐं, क्या कहा ? बतलाओ, बतलाओ ?

बूढ़ी—सुना नहीं है शायद ? बैजनाथ महाराज को जो अब ब्याह करने के सिवाय कोई चारा नहीं है, शायद पूरा दास्तान तुम लोगों ने नहीं सुना है ?

दोनों नहीं तो, क्या है क्या ?

बूढ़ी—अच्छा सुनना हो तो मेरे पास आ, कान में कूँगी।

दोनों युवतियाँ काम-धंधा फेंक कर बुढ़िया के पास दौड़ी गईं। बुढ़िया उनके कान के पास मुँह ले जाकर बोली—अरे, सुना नहीं है बैजनाथ महाराज की साली को जो छः महीने का पेट है।

सच्ची बात प्रगट होने लगी ?

बड़े बाजार से कालीघाट तक खबर जा पहुँची । कामिनी की तीनों सासों को उस दिन एकादशी का व्रत था, इससे एक तो पहले ही से मिजाज कुछ बिगड़ा हुआ था, दूसरे यह समाचार सुनकर एक दम तेल के तड़के की तरह जल भुन गईं । सबसे बड़ी जो जरा भली थी बोली—आज-कल का जो जमाना हुआ, न पाप-पुण्य, न आचार-विचार, जो जिसके मन में आता है कर डालता है, जहन्नुम में जाय, जो जैसा करेगा, पावेगा । अपने को इन सब बातों से क्या मतलब ?

छोटी बोली—क्या हुआ है क्या ? हमारे घर की बहू का भाई विधवा से ब्याह करेगा ? राम ! राम ! कैसी घृणित बात है, छिः ! छिः ! आजकल क्या लोगों को अपने नाम का कुछ भी खयाल नहीं रहा, जो जी में आता है करते हैं ? अरे, ऐसा काम तो डोम-चमारों के यहाँ भी नहीं होता । हाय ! हाय ! हम लोगों के कुल में कालिख लगेगी, छिः छिः, न जाने कहाँ की लड़की ब्याह कर अपना कुल डुबावेगा । हाय ! हाय ! राम राम छिः ! छिः ।

मझली तो बड़े जोर से गर्ज कर कामिनी से बोली—क्योंरे, मुँहमौसी, हरामजादी, अरे तुम लोगों के मन में क्या यही था ? चुल्लू भर पानी में डूब नहीं मरी । मरी नहीं मर, मर । हम लोगों के कुल में यह लांछन । अरे, क्या ससुर का कुल एक दम से डूबो दिया । अब तो बट्टे से कुचल कर तेरा मुँह भरता कर दूँ तो सही । भाडू से तेरी पीठ की खाल उतार लूँ तो मेरा नाम । तेरा सिर मुड़ा कर एक गाल में कालिख और एक गाल में चूना लगा कर घर से नहीं निकाला तो मेरा नाम नहीं । कामिनी बेचारी रो रो कर हैरान हो

रही। सन्ध्या को उसने बसन्ती को एक चिट्ठी लिखी। ऐं बसन्ती बहिन ! यह क्या सुनती हूँ ? यह निन्दा, यह कलंक यह अपयश हमलोगों के कुल में कैसे ? यह काम मत करना। शिवनाथ पागल हो गया हो तो उसे घर में मत घुसने देना। यह काम होगा तो मैं यहां समुझार में मुँह नहीं दिखा सकूंगी। मेरी सास सब मुझे जीती नहीं छोड़ेगी। फिर अपनी कामिनी को नहीं देख पाओगी।

कलकत्ते भर में यह खबर फैल गई। बसन्ती की ताईजी ने आदमी से कहला भेजा - बसन्ती। तुझे और चम्पा को मैं अपने पेट की बेटी सरीखी जानती हूँ, पेट की बेटी की तरह मैंने पाला-पोसा है। बूढ़ी ताई की बुढ़ौती खराब मत करना बेटी। बाजपेयी घराने में कालिख मत पोतना बेटी।

बसन्ती के सिर पर मानो बिजली गिर पड़ी। उसने देखा कि दाई को जो एक रुपया घूस दिया था उसका कुछ फल नहीं हुआ। संसार भर में कलंक फैल गया है।

—*—

२१

बसन्ती से सब दास्तान सुनकर बैजनाथ को बड़ा दुःख हुआ, पर शिवनाथ जी पर वह जरा भी नाराज नहीं हुए, और न उनकी बातों में उन्होंने कुछ अधर्म या पाप का लेश देखा। बैजनाथ बड़े शान्त धीर स्वभाव के आदमी थे। इसलिए वर्तमान काल की प्रचलित प्रथा के विरुद्ध सहसा

कोई काम करके अपने भाई-बिरादरी, रिश्तेदार, अड़ोसी-पड़ोसी मित्र-मुलाकातियों से बैर ठानना नहीं चाहते थे, और शिवनाथ पर पहले उनकी जैसी श्रद्धा थी वैसी ही रही, तिल भर भी नहीं घटी। अस्तु, उन्होंने बहुत कुछ सोच-विचार, सलाह बात करके इस बात को तय करने का निश्चय किया।

भाग्यवश उन्हें सलाह देने वालों की भी कमी नहीं रही। मुण्ड के मुण्ड सलाहगीर सब आ आकर उन्हें समझाने लगे। बहुत से हितैषी मित्र, जिन्होंने अब तक बैजनाथ जी को कभी एक बात भी नहीं पूछी थी, सलाह देने समझाने-बुझाने आए, बड़े बड़े शास्त्री पण्डित शास्त्रों की व्यवस्था बतलाने, समाज संस्कारक असली संस्कार का तत्व समझाने और समाज संरक्षक सनातन धर्म की दुहाई देने बैजनाथ जी के घर आ धमके। इतने दिनों से कलकत्ता आकर बैजनाथ गली-गली धूल उड़ा रहे हैं, पर उन्हें अब तक पता नहीं था कि कलकत्ता नगरी में उनके इतने शुभचिन्तक मौजूद हैं।

पहले तो बिरादरी के पंच, पण्डित द्वारकानाथ, गंगाशरण पं० लक्ष्मी नारायण, विद्याधर, लीलाधर, आदि बूढ़े चौधरी लोग बैजनाथ के यहां पधारे। इधर-उधर की बहुत सी बातें करके द्वारकानाथ बोले—आप ऐसे भद्र पुरुषों के यहां आने से और विशेषकर आपके शिष्टाचार से हम लोग बड़े प्रसन्न हैं। हम लोग हमेशा आपकी खबर लेते रहते हैं और दिल से सदा आपकी भलाई चाहते हैं। अच्छा! आपकी नौकरी का क्या हुआ? एक बार साहबों से मिलकर कोशिश तो कीजिए, आप कहिए तो गिल्लंडर कंपनी के बड़े साहब से

आपकी मुलाकात करा दें, मेरा भानजा वहाँ का खजांची है। माना प्रकार की बातों से वे अपनी प्रीति का परिचय देने लगे बहुत देर के बाद शिवनाथ जी की चर्चा छिड़ी। गंगाशरण जी बोले—अजी क्या कहें, आज-कल अंगरेजी पढ़ पढ़ कर सब लड़कों की मति खराब हो गई है अपने कुल का रसम-रिवाज कुछ सीखे तब तो। तुम तो भाई समझदार लड़के हो, तुम ऐसा काम हरगिज मत करना, बैजनाथ ! हम लोगों को पूरा भरोसा है कि तुम्हारे ऐसा भलामानुष स्वप्न में भी कभी ऐसी मूर्खता नहीं करेगा। कोई बेवकूफ हो तो समझावें भी।

लक्ष्मी नारायण—अरे भाई, जानते ही तो हो, जब तक दो चार हमलोग बुढ़े सुढ़े मरते नहीं, तभीतक बिरादरी की खैर भी है, नहीं तो कौन किसके लिए सिर खपाता है। बिरादरी में कोई आदमी भूल-चूक से कोई ऐसा काम न कर बैठे, जिसमें पीछे से उसे दुख उठाना पड़े इसी बात की रात दिन निगरानी रखनी पड़ती है। शिवनाथ तो अंगरेजी पढ़ कर क़स्तान हो गया, जो जी में आता है करता है, हम लोगों की एक नहीं सुनता। जरा दिन जाने दो, फिर बच्चा जी को आप होश आवेगा। तुम उस बदमाश बच्चे छोकड़े को अब घर में पैर मत रखने देना। जो हुआ सो हुआ, थोड़े दिन में आपही बात ठंडी पड़ जायगी। कौन इतना याद रखता है।

विद्याधर—और नहीं तो क्या ? वही उस दिन पाँडे जी के यहाँ जो एक वारदात हो गई तुम लोग तो जानते ही हो। पाँडे जी तो समझदार थे। मामला दबा गए। अब बतलाओ तो सही कौन उसकी चर्चा करता है ?

लीलाधर—और नहीं तो क्या ? किसे गर्ज पड़ी है कि दूसरों की बात याद करता रहे। अपने काम-काज से फुरसत मिलती

ही नहीं, फिर दूसरों की चर्चा से कौन सिर खपावे । क्या कहें ? आज कल तो सब आप आप को प्रधान हो गए हैं । दस वर्ष पहले मुहल्ले के बुढ़ड़े, पंचों से बिना पूछे क्या कोई भी काम हो पाता था ? क्यों विद्याधर भाई, ठीक कहता हूँ कि नहीं ? हम लोगों से पूछे बिना क्या कोई भी कुछ कर सकता था ?

विद्याधर—क्या मजाल कि करे ? और अब भी क्या हुआ, जो जरा भलेमानुस सभभदार आदमी हैं, हम लोगों से पूछे बिना कोई काम भी नहीं करते, वही देखिए न. गए साल हरिबाबू की विधवा पतोहू के नाम से कुछ कलंक फैला । हरिबाबू बेचारे बदहवास मेरे पास दौड़े आए । बोले कि 'महाराज जी बतलाइए, अब क्या करें ! इस विपत्तिसागर से आप बिना अब कौन उबारे । मैंने उन्हें फौरन सलाह दी कि 'जब तुम हमारे पास आ गए हो, तो बेखटके रहो, मैं इसका कुछ न कुछ किनारा किए बिना रहने का नहीं । क्यों भाई लीलाधर, हम लोगों ने बहुत कुछ देखा सुना है, आफत-विपद के समय हम लोगों को खबर करने से कुछ उपाय कर ही देंगे ।

लीलाधर—और नहीं तो क्या ?

गंगाशरण—सो उस समय सोच-विचार कर हम लोगों ने हरिबाबू को सलाह दी कि अपनी पतोहू को घृन्दावन भेज दो, उन्होंने फौरन यह नेक सलाह मान ली, और उस विधवा को घृन्दावन भेज दिया । अब बतलाओ तो सही किसकी मजाल है, जो इसकी चर्चा तक उठा सके । अरे भाई, आज-कल के छाकड़े सब मनमानी करने लगे हैं । धर्माधर्म, लोकताब का कुछ भय तो है नहीं, तो बैजनाथ जी, आप का इसमें क्या अपराध है ? मेरी बात सुनो, एक काम करो, अपनी साली को घृन्दावन भेज

दो, वहाँ जा कर जो जी में आये किया करे, कोई देखने तो नहीं जायगा और तुम्हारी निन्दा भी नहीं होगी ।

अब बैजनाथ जी से और बरदाश्त नहीं किया गया । बड़े कंपित स्वर से बोले । आप लोगों की बातों का मर्म मेरी समझ में ठीक नहीं आया । शिवनाथ ने प्रचलित रीति के विरुद्ध काम करने की राय जाहिर की है, मैं इसमें कहाँ तक राजी हूँ, यह तो फिर सोचा जायगा, पर आप लोग यदि यह समझते हों कि शिवनाथ था मेरी साली की चाल-चलन में कुछ फर्क आया है तो यह आपकी सरासर भूल है । इन दोनों के निर्मल चरित्र को कलंक छू नहीं गया है, और इन दोनों की तरह शुद्ध चाल-चलन के अदमी भी मैंने कम देखे हैं ।

गंगाशरण, लीलाधर और विद्याधर तीनों एक साथ बोल उठे—अजी नहीं जी नहीं, हमलोग क्या कोई कलंक लगाते हैं ? भला ऐसी बात भी कोई भला अदमी मुंह से निकालता होगा ?

गंगाशरण—भला ऐसी बात कोई मुंह से कहता होगा ? किसी गृहस्थ के घरमें कुछ हो भी जाय, तो क्या वह अपनी जवान से कहता है ? यही हरिबाबू ने क्या कुल बातें कही थीं, केवल एक बहाने से आफत बिदा की, हम लोग भी तो यही कहते हैं कि तुम्हरी साली ने अगर कुछ किया भी हो तो, रामराम भला क्या वह बात हम लोग जवान से निकल सकते हैं ? हम लोग ऐसे छिछारे नहीं हैं । पर बात यह है कि यह सब बखेड़ा चटपट मिटा डालना ही अच्छा है । इन सब बातों में सीधा-सादा रास्ता पकड़ना ही अच्छा है । सीधे मार्गही में धर्म है ।

विद्याधर—और नहीं तो क्या । और नहीं तो क्या, “यतो धर्मस्ततो जयः” शास्त्र भी यही कहता है । गंगाशरण जी

ने जो बात कही, वह बहुत ठीक है, इनमें कोई सन्देह नहीं। तुम होशियार लड़के हो, न हो इस बार ज्यों त्यों बात दबा दोगे। पर तुम भी अभी लड़के ठहरे, घरमें क्या युवती बिधवा को रखना मुनासिब है ? किस समय क्या हो जाय, उसका कुछ ठीक है ?

विद्याधर और नहीं तो क्या ? शास्त्रों ही में लिखा है कि सहस्राक्ष इन्द्र देवता भी स्त्रियों के गुप्त आचरण नहीं देख सकते, चतुर्मुख ब्रह्मा भी युवतियों के भेद को नहीं पा सकते। तुम तो अभी उस दिन के लड़के हो।

गंगाशरण — और नहीं तो क्या ? बहुत करोगे, इस बार दबा दोगे, पर शायद दैव की गति कौन जाने, यदि समया-नुसार युवती बिधवा को बालक पैदा हो जाय, तब क्या बात छिपाए छिपेगे ? एक तो लोग यों ही तिल का पहाड़ कर देते हैं फिर क्या ठौर-ठिकाना रहेगा ? अभी से ही लोग तरह तरह की चर्चा कर रहे हैं, इससे बृन्दावन भेज देना ही अच्छा है।

नाना प्रकार के उपदेश देकर बूढ़े चौधरी लोग सब विदा हुए। बैजनाथ जी गुस्से के मारे कुछ जबाब नहीं दे सके, जलती हुई आंखों से उन्होंने एक बूँद गरम आँसू पोंछा। इसके बाद श्यामलाल, लोकनाथ, कन्हैयालाल आदि नए युवक बैजनाथ जी को सलाह देने आए। इनमें से कोई ५५०५० तक पढ़ चुका था, कोई एन्ट्रेन्स तक पढ़कर स्कूल छोड़ चुका था, फिर घर ही पर बहुत कुछ पढ़-लिख कर विद्वान हो गये थे। किसी की चाल-चलन अच्छी थी, कोई सभ्य समाज के खेल-कूद हँसी-दिल्लगी की परीक्षा में पास हो गया था और आगे अध्ययन कर रहा था। पर सलाह देने में कम कोई नहीं था, सब ही बैजनाथ के परमहितैषी मित्र बने हुए थे। पहले तो ये लोग तरह तरह के शिष्टाचार की बातें करते रहे। श्यामलाल

बोले—क्या कहें भाई साहब, आज सबेरे एक बात सुन कर बड़ा दुःख हुआ। हम लोग कदापि इन बातों पर विश्वास नहीं करते। अपने मुहल्ले के एक विद्योत्साही युवक और सती साध्वी विधवा की झूठी अपकीर्ति हम लोगों से कदापि सही नहीं जा सकती। जिसने जब जब हमें यह बात कही, हमने उसे फौरन झूठा बतला दिया। आप की झूठी निन्दा का विरोध करना ही हम लोगों का एकमात्र कर्तव्य है, इस लिए असली हाल जानने के लिये आप के यहां आए हैं, पर आप यदि सब बातें बतलाना उचित न समझते हों, तो हम लोग भी बरजोरी आप की घरेलू बात जानने की इच्छा नहीं रखते, क्योंकि किसी के प्राइवेट मामले में दखल देना सभ्यता नहीं है, पर यदि सब बातें बतलाने में आप को कोई उअर न हो तो कहें।

इसी प्रकार भूमिका बहुत देर तक चलती रही, बैजनाथ जी बेचारे क्या करें। चारों तरफ निन्दा फैल गई। जब असली बात से कहीं सौ गुनी बढ़ कर झूठी निन्दा का प्रचार हो रहा है, तो इस हालत में असली बात छिपा कर ही क्या होगा ? अस्तु, इन बे बुलाए आए हुए युवकों की बातें यद्यपि उन्हें कुछ कड़वी लगीं पर तो भी धीरज के साथ उन्होंने कुछ असली हाल बयान कर दिया।

श्यामलाल—खैर, वह चाहे जो हो, हम लोगों को यह बात झूठ जान कर बड़ी खुशी हुई। इतनी भारी निन्दा का अधिकांश झूठा है, यह बड़े संतोष का विषय है। पर तो भी देखिये एक बात विचारने योग्य है। सब लोग तो चट से आप की बातों पर विश्वास करेंगे नहीं, और आप भी तो हरदम डेरे पर नहीं रहते, शिवनाथ भी बड़ा अहंकारी और स्वतंत्र प्रकृति का आदमी है, और स्त्री की लीला समझना भी हँसी खेल नहीं

है, इस लिए इस मामले में यदि लोग कुछ संदेह करें, काना-फूसी करें तो यह स्वाभाविक है। लोगों को तो कई बात मिलनी चाहिए, फिर दो के चार करते क्या देरी लगती है ? जो हो, आप अब तक इस विवाह में राजी नहीं हुए हैं, यही बड़े आनन्द की बात है।

कन्हैयालाल—बहुत ठीक बात है। और भी एक बात विचार कर देखिये। यदि समझिये कि हम समाज-सुधार कर रहे हैं, तो वास्तव में यह सुधार, सुधार नहीं कहला सकता। जिससे हम लोगों में एका फैले राजनीतिक और सामाजिक उन्नति हो वही काम करना चाहिए। आप यह न समझिए कि पुराने ख्यालात के लोगों की तरह हमें कुछ पुरानी बातों पर पक्षपात है किन्तु ऐसे कामों से हम लोगों में भगड़ा-द्वेष फैलने के अलावा और कुछ उपकार नहीं होगा। जो कुछ एका है भी वह भी, नष्ट हो जायगा। इस लिए हम लोगों की राय में यह काम अति अनुचित है।

लोकनाथ—केवल यहीं क्यों, (वैज्ञानिक) तौर से विचार कर देखिए, मेलथससाहस का कथन है कि आबादी जितनी जल्दी बढ़ती है, अन्न उतना जल्दी नहीं बढ़ता, इस लिए सभ्य देशों में बहुत से स्त्री-पुरुष क्वारें रहते हैं। इस देश में कोई क्वारा तो रहता नहीं, इस लिए कम से कम विधवाओं का तो फिर से विवाह न करना चाहिए, जिससे आबादी न बढ़ने पाये। एक तो यह देश यों ही कंगाल हो रहा है, फिर आबादी और बढ़ जायगी, तो सब लोग भूखे मर जायेंगे। इस लिए विधवाओं का विवाह होना कदापि योग्य नहीं है।

श्यामलाल—और आप से यह बात भी तो छिपी नहीं है कि स्वदेश उन्नति, भारतवर्ष की उन्नति ही हम सभी का एक

मात्र उद्देश्य है, अस्तु यह काम विधवा-विवाह से नहीं हो सकता । अपनी सामान्य कोशिश से जो कुछ चन्नति हो सकती है, मैं बाकी ही नहीं रखता । मैंने एक लाइब्रेरी खोली है पुस्तकों के लिए भारत के सारे ग्रन्थ-कर्ताओं को पत्र भेजा है, और हर शनिवार को वहां दस-पाँच मिल कर राजनैतिक विषयों पर बहस करते हैं । यदि फुरसत हो तो अगले शनिवार को कृपाकर कर एकवार वहाँ अवश्य पधारिएगा । आपके आने से हम लोगों को बड़ा आनन्द होगा ।

कन्हैयालाल—एक और बड़ी भारी बात विचारने योग्य है, देखिए, हम लोगों के घरों में जो सुशीलता, सदाचार विद्यमान है क्या धनवान क्या गरीब सब लोगों के घर के भीतर जो मधुरता छिपी हुई है, वैसी आप किसी युरोपियन जाति के घर में खोज कर के भी नहीं पाइएगा । विदेशी आचरण की नकल मत कीजिये, नहीं तो हम लोगों को गृहस्थी का अमृत कुंड विषमय हो जायगा । भारत का सब कुछ जा चुका है केवल स्त्रियों का सदाचार, गृहस्थी का अमृतमय आनन्द अब तक मौजूद है, यह चाल चल जाने से वह भी जाता रहेगा । सनातन धर्म का टिमटिमाता दीया एक दम बुझ जायगा । यदि नकल ही करनी है तो युरोपीयनों की अच्छी बातों को नकल कीजिए जिस से कुछ कल्याण हो, हम लोगों के घरों का सदाचार, नम्रता, विनय, मधुरता, बचे बचाए सनातन धर्म पर कुठार मत चलाइए ।

कन्हैयालाल—ठीक कहते हैं । आप श्यामलालजी की बात जरूर मानिए । इनके ऐसे बुद्धिमान देश-हितैषी सज्जन आज के ल कम देखने से मैं आते हैं । इनकी एक एक बात लाख लाख रुपये की समझिए । और जिस निन्दा की बात सुनी है यदि

वह सच हो, लोग तो सच मानही लेंगे, पर इस लोग पूरा सबूत देखे बिना अपनी राय जाहिर किया नहीं चाहते—यदि यह बात सच हो, तो ऐसे युवक-युवतियों का दिल बढ़ने से भारत की उन्नति तो दूर रही, उलटी अधोगति होगी।

बैजनाथ जी को इन नीचाशय युवकों की बातों का जबाब देते भी नफरत मालूम हुई, चुपचाप बैठे रहे। थोड़ी देर बाद यह महाशयगण आप ही उठ कर चले गए।

इसके बाद बिरादरी के दो एक उच्चके बड़े बजार के एक बड़े भारी दिग्गज शास्त्री जी को लेकर बैजनाथ जी के बैठके में पधारे। शास्त्री जी कुछ ऐसे वैसे शास्त्री नहीं थे। घोर कृष्णवर्ण, दाढ़ा मूँछ मुड़ी हुई, माथेपर लंबा रामफटाका लगा हुआ, धोती उपरना ओढ़े, हाथ में मोटी लाठी लिए, नाक में सुंघनी झोकते चुटिया फरोंते, खोंखते बैजनाथ जी के सामने पलथी मार कर बैठ गए। शास्त्री जी क्या, मानो हिन्दू धर्म के मन्थूमेन्ट थे, इनकी धर्म-शास्त्र विद्या प्रशान्त महा-समुद्र की तरह अगाध, अगम्य थी। विद्या में शुण्डधारी गजानन और तर्क में साक्षात् वन्यवराह अवतार थे। वेद-वेदान्त, श्रुत-स्मृति, न्याय-दर्शन, पुराण-इतिहास, व्याकरण, कोष, सब इन्हें कण्ठस्थ था, सब में समान अधिकार था। बैजनाथ जी के बैठके में पैर रखते ही इन्होंने अपनी असीम विद्या समुद्र की तरंगों की बपेटों से उनका होश गुड़म् कर दिया। बैजनाथ जी बेचारे भकुवे से होकर चुपचाप बैठ रहे। बकते बकते जब शास्त्री जी का गला बैठ गया और बोलने की ताकत न रही तब खांसते खांसते उनकी जवान ने थोड़ी देर के लिए विश्राम लिया। इनके चुप होने पर बैजनाथ जी घीरे से बोले—शास्त्री जी महाराज, यह काम करने में मैं अब तक राजी नहीं

हुआ हूँ, इस लिए इसके लिए आपको विशेष कष्ट सहने की अभी कोई जरूरत नहीं है, पर मेरी छोटी बुद्धि और पुस्तकों के पढ़ने से मुझे जहाँ तक मालूम हुआ है, उससे यह सिद्धान्त निकलता है कि विधवा-विवाह के बारे में शास्त्रों में दो राय हैं। जब जैसा समय था, वैसीही चाल चलती थी। वैदिक समय में विधवा-विवाह की चाल थी, मनु आदि स्मृतिकारों के समय में भी यह चाल एक दम बन्द नहीं हुई थी, पर हाँ, धीरे धीरे उठती जा रही थी। पीछे से पौराणिक समय में यह चाल एक दम बन्द हो गई। मैं तो कोई शास्त्री नहीं हूँ, और न इतनी विद्या ही है कि शास्त्रालोचन करूँ, पर हाँ, दूसरे पण्डितों से जो सुना है, वही कहता हूँ। सुनते हैं कि, शास्त्रज्ञ पंडित शिरोमणि विद्यासागर महाशय भी कहते हैं कि विधवा-विवाह शास्त्रों में है।

वैजनाथ जी की बातें सुनते ही शास्त्री जी की जो अवस्था हुई वह कलम से लिख कर बतलाना कठिन है जिन्होंने कभी रात को सहसा भ्राम में आग लगते देखा है, आकाश की लाली देखी है, अग्नि की सर्व संहारिणी लपटें देखी हैं, वे ही इस समय इन दिग्गज शास्त्री जी की के चेहरे का भाव अनुमान कर सकते हैं। मानो कहीं अग्नि की ज्वाला गर्ज रही हो, ऐसेही स्वर से शास्त्री जी बोले—ऐं ! वह विधवा-विवाह फैलाने वाला विद्यासागर पंडित ? उसे पंडित कौन कहता है ? हूं ! वही लड़कों के पढ़ने की क, घ, की किताबें लिख कर पंडित हुआ है। एक नई चाल चलाने की चेष्टा करके देश का सत्यानाश करने बैठा है, धर्म पर कुल्हाड़ा चलाने को उद्यत हुआ है, मनुष्यों के कलेजे की तह तक बर्छी मारनेवाला, हिन्दू धर्म पर अमिट कलंक का दाग लगानेवाला, हिन्दू नाम, हिन्दू गौरव,

सनातन धर्म, चाल चलन को अतल समुद्र में डुबाने वाला वह पण्डित है, धर्मद्वेषी, स्तेच्छों का नक्काल, विधर्मियों का पक्षपाती, धर्म शून्य, धर्माभिमानशून्य, आर्य्य वंश का कुल-बोरन है।

शास्त्री जी उठ खड़े हुए, बोले—“चलो जी, चौधरी साहब, अब इस घर में पल भर भी नहीं ठहरूँगा, यहां पैर रखना अधर्म है। जो सुना था सब ठीक है। यदि वह छोकड़िया पेट गिरावे तो फौरन थाने में खबर कर देना।

बैननाथ जी को क्रोध नहीं आया, वरन् दिग्गज शास्त्रीजी का क्रोध और नाक मुँह का भाव देख कर वह जरासा हंस पड़े। इस दिन दिनभर बैजनाथ जी के सलाहगीर आते रहे। रोग, दुःख दारिद्र्य के समय बैजनाथ जी ने इनमें से एक का भी मुँह नहीं देखा था। उन्हें अब तक यह पता नहीं था कि कलकत्ते में उनके इतने हितैषी हैं। बड़ा बजार से उड़ती हुई यह खबर शोभावजार तक जा पहुँची। विजयनारायण जी के इन्द्र पुरी तुल्य बैठके में अन्तरंग मित्रों की मजलिस जुटी हुई थी, नाच-गाना, खाना-पीना चल रहा था, वहाँ इस दरिद्र की चर्चा छिड़ी। विजयनारायण जी तो अपनी साली का कलंक मुनकर कुछ बोले नहीं, केवल जरासा मुसकुरा कर चुप हो रहे। पर उनकी सभा और धर्मध्वजी महाशय-गण एक दम चकित और स्थम्भित हो रहे, हिन्दू धर्म के स्तम्भ हरिशंकर जी स्थम्भित हो रहे। उनके हाथ से शराब का गिलास गिर कर सौ सौ टुकड़े हो गया, बड़ी लंबी सांस ले कर बोले—हा धर्म राज ! तुम्हे क्या सब ने बिसार दिया ? ऐं ! भले आदमियों के घरों में यह क्या हो रहा है। हाय ! सनातन धर्म शायद रसा-तल को चला।

गोकुल बाबू के हाथ से कांटा-चमचा छूट पड़ा, सामने की रिकाबी में गोजिह्वा बिन चखेही पड़ी रही विश्वम्भर जी, सिद्धेश्वर जी, गृद्धेश्वर जी पुश्तैनी रईस सभी अपनी अपनी कुर्सी पर बैठे हुए कांपने लगे। यह महा अधर्म की बात सुन कर इन लोगों का मुँह बन्द हो गया। आज कल के कलियुगो छोकड़ों की भरपेट निन्दा कर अपने जमाने के धर्मानुष्ठान की सौ सौ मुख से बड़ाई करने लगे।

यूरोपीयन सभ्यता के साक्षात् अवतार मिस्टर बैनरजी ने अपनी बहुमूल्य सम्मति प्रकट की। वे बोले “इस तरहका ब्याह पश्चिमी सभ्यता के बिलकुल विरुद्ध है। यह तो केवल युरोपियन सभ्यता का छीछालेदर करना ठहरा। विधवा बाहर परदे से निकल कर जगत्-संसार के सामने आ खड़ी हो, सुन्दर विद्वान युवकों से मेलमिलाप करे, कि लंबी कोर्टशिप के बाद एक सुपुरुष को चुनकर ब्याह करे, यही तो भाई युरोपियन सभ्यता है। पिंजड़े में बन्द की हुई विधवा का ब्याह कर देना पश्चिमी सभ्यता का सरासर अपमान करना है।

मिस्टर बैनरजी का लेक्चर सुन कर सभा की स्त्री-सभा-सद सभ एक स्वर से बोल उठीं—क्यों जी, हम लोगों ने जगत्-संसार सभ कुछ देखा, सुन्दर ऊँचे विचार वाले युवकों से मेलमिलाप किया, फिर हमें पश्चिमी सभ्यता क्यों नहीं मिलती हम लोगों का विवाह क्यों नहीं होता?—इस मजलिस में शराब के ग्लासों के साथ स्त्री और पुरुष दोनों सभासदों में इस मजेदार दिल्लगी का सिलसिला बहुत देर तक जारी रहा।

सारे संसार के ताने निन्दा-कलंक, सलाह-मंत्रणा, सुनते सुनते बैजनाथ जी घबड़ा उठे। शाम को बसन्ती के पास जा कर बोले—सभ लोग एक स्वर से विधवा-विवाह का विरोध

कर रहे हैं इस लिए यह काम करने की मेरी इच्छा नहीं है। विद्वान, मूर्ख, भले-बुरे, मान्य-अमान्य, सब मिलकर एक स्वर से इस काम को मना कर रहे हैं।

बसन्ती—और इसके अलावा इस काम में कितना कलंक, कैसी निन्दा होगी। यह काम करने से निन्दा के मारे हम लोग किसी को मुँह दिखाने लायक नहीं रहेंगे।

वैजनाथ—नहीं, इसका तो कुछ ऐसा डर नहीं है। विरादरी, के लोग अड़ोसी-पड़ोसी, जान-पहचान के लोग सब कृपा करके हम लोगों के नाम से जो कलंक फैला रहे हैं और विश्वास करा रहे हैं, उससे और अधिक कलंक होने की सम्भावना नहीं है। विधवा-विवाह में कोई अधर्म नहीं है, पर हमारे हितैषी महात्मा सब विशेष कृपा कर शिवनाथ और सरला बालिका चम्पा के बारे में जो पाप सूचक अफवाह उड़ा रहे हैं, उस पाप को यथा साध्य छिपा रखने ही से इन लोगों की राय में धर्म रक्षा हो सकती है !

—:❀:—

२२

जिस चम्पा के विवाह की चर्चा से अड़ोसी-पड़ोसियों की अहार निद्रा छूट गई है, चलो पाठक, एक बार उस अनजान बालिका का भी तो कुछ समाचार ले आवें। देखें वह क्या कर रही है। वैजनाथ और बसन्ती ने बहुत चाहा कि चम्पा

को यह सब हाल कुछ मालूम न होने पावे, पर सब चेष्टा व्यर्थ हुई। भला, जिस बात की चर्चा घरघर सारे शहर में हो रही थी, वह क्या कभी छिप सकती थी। इसके अलावा जिस घर में दाई मजदूरनी हों वहाँ किसी खबर का पहुँचना भी दुष्कर नहीं है। उन घर वालों को अखबार की भी जरूरत नहीं रहती। पर हाँ दाईजी ने बसन्ती के कहने का इतना भर मान रखा, कि चम्पा को सब खोल कर नहीं कहा। चम्पा की चाल-चलन के बारे में जो निन्दा उठी थी, उसका ब्यौरा उससे छिपा रखा, पर 'शिवनाथ तुमसे ब्याह करने के लिए पागल हो रहे हैं, इसके लिए, रोरो कर तेरी बहन के पैरों पर पछाड़ खा खा गिरे थे, कुल मुहल्ले, सारे शहर में यह चर्चा फैल गई है' दाई भी ने अकेले में एक रोज चम्पा को यह सब हाल कह दिया। लज्जा और यातना से लड़की बेचारी काँप गई। "ओः हाय ! हाय ! ऐसे अघर्म की, सर्वनाश की बात, सारे शहर में फैल गई। अब मैं लोगों को यह पापी मुँह क्योंकर दिखलाऊँगी ? हाय ! हाय ! कामिनी बहन के सामने, शिवनाथ जी की माँ के सामने, देवी बाबू के, गोपाल बाबू के घर में अब मुझसे क्योंकर मुँह दिखाया जायगा ? हाय ! फूटे करम ! अब कौन मुँह लेकर कुन्दनपुर जाऊँगी ? छिः ! छिः ! हाय ! शिवनाथ जी, तुमने यह क्या किया ? अनाथिनी विधवा को लज्जा-सागर में क्यों डूबो दिया ? इस रास्ते में औरतें क्या बात करती जा रही हैं ? शायद मेरे ही कलंक की चर्चा कर रही हैं ! जीजाजी बहन से एकान्त में चुपके चुपके क्या बात कर रहे हैं ! शायद इसी हतभागिनी का रोना रो रहे हैं।" मारे शर्म, दुःख और चिन्ता के लड़की बेचारी अधीर हो गई। किसी से मुँह खोलकर दो बात भी नहीं कह सकती। सारा दिन तकिए में मुँह छिपा

कर रोती रही। शाम को बिना कुछ खाए पीए, भूखी, मलीन मुख रोती हुई, जाकर सो रही। ओफ ओः ! शिवनाथ जी ने क्यों ऐसा काम किया ? बेचारी दुखिनी विधवा के गाम यह कलंक क्यों फैलाया ? पर लाख निराशा और दुःख में भी मनुष्य का हृदय जिस तरह एक आशा रूपी सूर्य की किरण की तरफ दौड़ता है, अभागिनी चम्पा का सूखा हृदय भी वैसेही, इतनी लज्जा और यंत्रणा को लांघ कर आशा की एक क्षीण ज्योति की तरफ दौड़ चला। निराशा के घोर समुद्र में भी उसे एक आधार की छाया दिखाई देने लगी।

शिवनाथ जी ने ऐसा काम क्यों किया ! उनके न आने से जैसे मैं उनका आसरा देखती रही हूँ, सन्ध्या को अकेली बैठी हुई जैसे उनकी बात सोचती रतती हूँ, वह भी शायद कभी कभी मुझे याद करते हैं। शायद रात-दिन वह यही लज्जा की बात सोचते रहते हैं, इसीलिए अधीर होकर उन्होंने बहन से यह लज्जा की बात कह डाली। मालूम होता है शायद इसके लिए उनका दिल बहुत दुखता रहा है, नहीं तो क्या बहन से, मुँह खोल कर ऐसी बात कह सकते थे ? दाई कहती थी कि वह बड़े दुबले हो गए हैं, हाय ! इसी अभागिनी के लिए वह उतनी तकलीफ पा रहे हैं ? मेरी बड़ी इच्छा है कि उन्हींके दोनों चरणों पर अपना हृदय रख दूँ। यह, क्या होगा ? विधाता ने क्या मेरे फूटे करम में ऐसा सुख लिखा है। उन्होंने जो बात कही है, वह क्या हो सकती है ? ओफ ! यह बड़े पाप की, लज्जा की बात है, इसे मन में नहीं लाना चाहिए।

धीरे धीरे चम्पा की आंखों से एक एक बूँद आंसू टपक पड़ा। छोटे छोटे कोमल कर-पल्लवों से आंसू पोंछ कर चम्पा

फिर सोचने लगी—अच्छा, उन्होंने जो बात कही है, यदि सचमुच ही वैसी हो जाय ? यह दरिद्र बालिका यदि सचमुच ही उनकी स्त्री हो जाय ? तब सबेरे पहले उठकर वह कुन्दनपुर का उनका घर भाड़ बुहारू देकर साफ-सुथरा करेगी, बरतन मांज देगी, तन मन से उनकी मां की सेवा करेगी, अपने हाथ से उनकी रोटी पका कर भोजन के समय थाल में परोस कर उनके पास बैठी रहेगी, उनके लिए ऊख छिल कर गंडेरी ठंडे पानी में भिगो रखेगी, उनके लिए बेल का शरबत बना कर रखेगी, मिसरी का पन्ना अपने हाथ से उन्हें पिलावेगी ।

सहसा किसी के पांव की आहट आई, चम्पा चौंक पड़ी । शायद उसके मनकी यह बात कोई जान न जाय ! पापिनी की पापचिन्ता किसी को मालूम न हो जाय । और यदि कहीं परदेश में उनकी नौकरी लगेगी, तो मैं भी दासी की तरह उनके साथ परदेश जाऊँगी । तन-मन से उनकी सेवा में लगी रहूँगी । एक छोटी सी भोपड़ी में हम लोग डेरा करेंगे । इस कुटिया के किनारे दो लौवे के और दो कोंहड़े के पेड़ लगाऊँगी, और चार पौधे फूलों के अपने हाथ से रोपूँगी । कलकत्ते में, वही जो उस रोज कालीघाट में देख आई थी, जो देवी देवताओं की तसवीरें चार चार पैसे को बिकती थीं, उन्हीं से मैं सोने का कमरा सजाऊँगी । पार्वती जी, सिंह पर चढ़ कर मैके जा रही हैं, पार्वती जी की माँ कन्या को देख सहसा दौड़ कर दोनों हाथ पसारे उन्हें गोद में लेने के लिए आगे बढ़ रही हैं, दासियां सब, कोई पंखा कोई भोजन की थाली, कोई पानी की झारों कोई फूलों की माला लिए दौड़ी आ रही हैं । या अंचरे में जंगल के बीच पति प्राण दमयन्ती

सोई हुई है, राजा नल उठकर बैठकर गाल पर हाथ रखकर सोच रहे हैं। या वृन्दावन के कुंजवन में राधिका जी गाल पर हाथ रखकर सोच रही हैं, चंद्रावती उनके पास आकर कृष्ण जी का समाचार सुना रही है, सुनकर उनकी आंखों से आँसुओं की धारा बह रही है। इस प्रकार की तरह तरह की देवी-देवताओं की तस्वीरों से घर सजाऊँगी, अच्छी तरह से झाड़ू-बुहारू देकर बिछौना बिछा रखूँगी, संध्या को दीया जलाकर उनका आसरा देखती हुई बैठी रहूँगी। जब संध्या को वे घर आवेंगे, तो पानी का लोटा लेकर अपने हाथ से उनके पैर धो दूँगी, उन्हीं चरणों को पकड़ कर आंखों में आसू भर कर कहूँगी—हे नाथ ! तुम्हारी दया, तुम्हारे यत्न का बदला मैं अनाथ अबला कैसे दूँ ? मेरा जीवन सर्वस्व जो कुछ है, तुम्हारा ही है, गरीबनी पर जरा सनेह रखना ।

जब चिन्ता एक बार शुरू होती है तो फिर समाप्त नहीं होती। सवेरे घर का धन्धा करती हुई चंपा यही सोचती रहती थी, दोपहर को दिन भर खिड़की में बैठी हुई यही सोचा करती, संध्या को जब वैजवाथ जी और बसन्ती बैठकर बातचीत करते, चम्पा भी उनके पास बैठती, पर उनका मन दूसरी तरफ लगा रहता ! बुद्धिमती बसन्ती समझ गई कि चम्पा को सब मालूम हो गया है, रात दिन सोचती रहती है ! चम्पा अब वह अधखिली सरला बालिका न रही। जवानी शुरू होते ही, जवानी के सुख-स्वप्न से उसका हृदय भर गया है। रात दिन अनमनी रहती है; कभी कभी शिवनाथ जी का नाम सुनते ही, चम्पा का मुँह लज्जा से लाल हो जाता है, काम-धन्धे के बहाने वहाँ से उठकर अन्यत्र चली जाती है।

२३

भारतवर्ष का दिवाली का त्योहार भी क्या ही सुन्दर है। क्या धनो, क्या निर्धन सब लोग अपना अपना घर झाड़ पोंछ, साफ सुथरा करके दीपावली से हुसजित करते हैं। इस दिन मानों पृथ्वी में एक और ही चमकते नक्षत्र पुंजों की सृष्टि हो जाती है। एक ओर असंख्य दीपक मानो रत्नों की उज्ज्वल माला की तरह शोभा देते हैं, तो दूसरी ओर घोर अमावस्या की रात्रि में आकाश के नक्षत्र पुंज और भी उज्ज्वलतर होकर पृथ्वी तल की अपनी प्रकृति को निहार निहार कर हँसते हैं। धनवानों के यहाँ झाड़ फूँस, दीपमालिका की बहार रहती है, गरीब गृहस्थ दो-चार मिट्टी के मामूली दीये हो जलाकर द्वार पर रखकर इस त्योहार को मनाते हैं। वास्तव में इसके ऐसा साफ सुथरा, उज्ज्वल, मन मुग्धकारी दूसरा हिन्दू त्योहार नहीं है। कुछ लोग ऐसा भी कहते हैं, कि भगवान् रामचन्द्र जब रावण को मार कर अयोध्या लौटे थे, उस समय उनके अयोध्या पहुँचने और राज्य पर बैठने की खुशी में सारे भारत वर्ष में यह रोशनी की गई थी, तभी से यह प्रथा चली आती है। आहा ! क्या ही खुशी का जमाना रहा होगा जब एक मात्र आर्य सम्राट का डंका हिमालय के शिखर से लेकर कन्याकुमारी तक बजता था और उसके राजतिलक के उत्सव में यह सार्वजनिक आनन्द मनाया गया था। वही भारत संतान आजदिन भी उस स्मराक को धारण किए हुए हैं, भूले नहीं हैं। कैसे भूलते ? सुख स्वप्न क्या जल्दी बिसारा जाता है।

ब्रिटिश इन्डिया की एक छत्र राजधानी कलकत्ता महानगरी का कहना ही क्या है? सारी कलकत्ता नगरी असंख्य दीपावलियों से चमक दमक कर अद्भुत छटा दिखा रही थी। घर घर में आतिशबाजी, छूट रही थी मानो टाउनहाल के लेकचरारों की नकल कर रही हो। गले की आवाज के साथ ही उनका काम भी तमाम हो जाता था। उष्णभिलाषी, यशेलुब्ध युवकों की तरह आशमानतारा बड़ी तेजी से आकाश की ओर जाता था, और ऊपर जाकर तेजी से निकलते ही उलटे मुँह धरती पर गिर पड़ता था, जिसके सिर पर गिरता उसी की मिट्टी की खराबो थी। हिन्दी के अगणित उपन्यासकारों की तरह चारों तरफ से पटापट पटाकों की आवाज आ रही थी। बस एकही आवाज में इसका सब उद्यम समाप्त था।

आज रात दस बजे के बाद शिवनाथजी, बैजनाथ के घर आ पहुँचे। इच्छा थी कि बसन्ती बहन से भेंट करेंगे। पर पहले आते ही बैजनाथ जी को द्वार पर खड़े पाया। बैजनाथ जी बोले—आओ, भाई, मैं तो तुम्हारा आसरा ही देख रहा था, यह कहते हुए उनका हाथ पकड़ कर के भीतर ले गए। लज्जा और घबराहट से कांपते हुए शिवनाथ जी उनके पीछे पीछे घर के भीतर जाकर मुँह नीचा करके बैठ गए। मुँह से आवाज नहीं निकली।

बैजनाथ जी दीये की बत्ती उकसा कर धीरे से बोले—शिवनाथ, मेरी स्त्री से तुमने जो बात कही थी, वह सब सुन चुका हूँ।

शिवनाथ जी ने बड़ी मुस्किल से रुँधे हुए कण्ठ से जबाब दिया—‘यदि मेरा कोई अपराध हुआ हो तो अपनी उदारता से यह अपराध क्षमा कीजिए।’

बैजनाथ—नहीं शिवनाथ, तुम्हारा कोई कसूर नहीं है।

तुमने अपने ऊंचे विचार के उपयुक्त ही काम किया है। यदि सारा संसार तुम्हारी निंदा करे तो भी मेरा मन तुम से तिलमिल भी इधर उधर होने का नहीं।

शिवनाथ जी से कुछ जबाब नहीं बन पड़ा। केवल आँखों से आँसू बहा कर उन्होंने अपनी कृतज्ञता प्रकट की। वैजनाथ भी समझ गए।

वैजनाथ—मेरी स्त्री बचपन से तुम्हें बहुत चाहती है, छोटे भाई सा स्नेह करती है, उसने तुम्हारी बात का कुछ भी बुरा नहीं माना है। हम लोग पहले तुम्हें जैसा चाहते थे, मानते थे, वैसेही यावज्जीवन मानते रहेंगे।

शिवनाथ—आप लोगों की यह दया मैं इस जन्म में नहीं भुलूँगा—थोड़ी देर तक दोनों चुप रहे, फिर शिवनाथ जी बड़े कष्ट से दिल की घबराहट दबा कर धीरे से बोले—मेरी बात के बारे में आपने कुछ सोचा? यह कह कर, दम रोक कर जबाब का आसरा देखने लगे, मानो इसी जबाब पर उनका जीवन मरण निर्भर हो।

वैजनाथ—हाँ, इसी का जिकर कर रहा हूँ। तुम ने क्या सब तरफ आगा-पीछा सोच विचार कर यह बात कही है?

शिवनाथ—मेरी छोटी समझ में जहाँ तक आता है, इसमें किसी की कुछ हानि नहीं है। जहाँ तक हो सका, मैंने बहुत सोच विचार ही के बाद यह बात मुँह से निकाली है।

वैजनाथ—शिवनाथ, तुम पढ़े-लिखे हो, मूर्ख नहीं हो, पर तो भी अभी लड़के ही हो, इस लिए दो एक बात तुम्हें याद दिला देता हूँ। जानते हो, इस विवाह में कैसी निन्दा होगी?

शिवनाथ—बहुत सी निन्दा बरदाश्त कर चुका हूँ, और आगे चल कर जन्म भर और निन्दा सहने को तैयार हूँ, तब क्या निन्दा के डर से अपनी जिन्दगी के सारे सुख को तिलांजलि दे दूँ ?

वैजनाथ—लोग तुम्हें जाति से बाहर कर देंगे ।

शिवनाथ—यदि भिरादरी को यही अच्छा लगता हो तो यही करें मैं उसकी कृपा का कंगाल नहीं हूँ ।

वैजनाथ—तुम्हारे निष्कलंक कुल में दाग लग जायगा ।

शिवनाथ—क्या कलंक ? यही कि मैंने विधवा से विवाह किया है । यदि वह पाप का काम नहीं है, तो यह कलंक मुझको स्पर्श नहीं करेगा । जिसकी खुशी आये जो कहे, मुझे क्या ? पर हाँ, यदि आप इस काम को दूषित समझते हों तो आज्ञा दीजिए, मैं इससे हट जाऊँ ।

वैजनाथ—विधवा-विवाह शायद हमारे प्राचीन शास्त्र के विरुद्ध नहीं है, पर हाँ आजकल की प्रचलित रीति के विरुद्ध अवश्य है ।

शिवनाथ—तीस वर्ष पहले समुद्र यात्रा का भी रिवाज नहीं था, आज दिन देखिए, हजारों यात्री जहाजों पर बैठ कर जगन्नाथ गंगासागर आते जाते हैं । आप को भी गोपाल बाबू की बात याद होगी । जिस दिन उन्होंने कहा था, कि जीवित जाति आपही बुरे रिवाजों का सुधार कर लेती है । आगे बढ़ना ही जीवन की पहचान है । जहाँ के तहाँ पड़े रहना, मौत की निशानी है ।

वैजनाथ—शिवनाथ, तुम समझदार हो, हरेक बात को सोचने विचारने वाले हो, तुमसे एक बात खोल कर कहूँगा । खूब सोच कर जबाब देना । देखो, मन की चाल हमेशा एक

सो नहीं रहती, आज जिस प्रेम से हम पागल हैं, दो वर्ष बाद हो तो उसका वेग कम हो जाता है, हम भूल जाते हैं । विचार कर देखो, यदि चम्पा पर तुम्हारा ऐसा प्रेम, यह रन्मत्तता हमेशा न रही तो फिर तुम्हारे मन में पछतावा होगा कि नहीं ? नहीं जवाब मत दो, जो मैं कहता हूँ सुनते जाओ । तुम बिरादरी से निकाले जाओगे, दोस्त-यार, भाई-बन्धु किसी आनन्द-उत्सव दुःख सुख में तुम्हारे घर में पैर न रखेंगे, तुम्हारी कन्या हुई तो उससे कोई ब्याह नहीं करेगा, तुम्हारे लड़के-बालों को कोई अपने यहाँ कभी नहीं बुलावेगा संसार में तुम अकेले पड़ जाओगे । उस समय कभी तुम्हारे मन में यह पछतावा होगा कि हाय ! क्यों नहीं लड़कपन में आगे पीछे विचार करके मैंने काम किया, जल्दबाजी करके क्यों सारी जिन्दगी के लिए आफत सिर पर ओढ़ी, अपने कलेजे के टुकड़े स्नेह के पात्र बाल बच्चों को जन्म दुःखी क्यों बनाना ? शिवनाथ ! खूब विचार कर देखो, जिस काम का ऐसा नतीजा हो सकता है, उसमें क्या एका-एक हाथ डालना चाहिए । जवानी में जरा सोच-समझ कर काम करके क्या बुढ़ाई की चिन्ता दूर करना उचित नहीं है ? चम्पा की तरह गौर वर्ण, सुन्दरी, पढ़ी लिखी, तेरह-चौदह वर्ष की क्वारी सरला बालिका क्या अपनी बिरादरी में दुर्लभ है, वे लोग तुम्हारे ऐसे दामाद को पाकर अपने को धन्य मानेंगे । ऐसी जगह विवाह करने से मैंने माना कि अभी तुम्हें कुछ कष्ट हो पर आगे तो सुखी होगे । शिवनाथ, तुम बुद्धिमान हो सोच-समझ कर कोई काम करो, क्षणिक लालसा के वश न होकर जिसमें आगे सुखी हो सको वैसे काम करो ।

शिवनाथ—आप सच जानिए, मैंने केवल क्षणिक लालसा

के बश हो कर यह काम करना नहीं चाहता है, वरन् सारी जिन्दगी आनन्द से कटेगी, इसी आशा, से भावी सुख, पवित्र गृहस्थी आश्रम में जीवन बिताने की इच्छा से यह प्रस्ताव किया है। यह मत समझिए कि आपने जो ऊंचनीच समझाया, वह मैंने सोचा नहीं, मैं इन सब बातों पर खूब विचार कर चुका हूँ, एक बार नहीं, सैकड़ों बार मन ही मन इन बातों को उलट पलट कर विचारा है और जो आप यह कहते हैं, कि इस काम में पीछे से पछतावा होगा, सो यदि विधवा-विवाह पाप, अधर्म या अन्याय कार्य है, तो तो पछतावा हो सकता है, यदि ऐसा नहीं है तो मुझे यावज्जन्म कभी पछतावा नहीं होगा, आपही बतलाइए, इस संसार में कौन सा बुद्धिमान पुरुष कोई सत्कार्य करके पीछे से पछताता है ? क्या आप से छिपा है कि कितनेही महान्-पुरुष केवल इसी लिए जातिसे निकाले गए कि उन्होंने मिथ्या विश्वास की जगह सच्चाई फैलानी चाही थी, कई महापुरुष जन्मभूमि के कल्याणार्थ विदेश जाकर जाति पतित हुए, आपही बतलाइए इन तेजस्वी पुरुषों ने क्या कभी पूर्वकृत कर्मों को अधर्म समझ कर पछतावा किया है। नहीं नहीं, पछतावा तो दूर रहा, बल्कि उनकी आत्मा उनके सिर पर महान् गौरव का छत्र डलाती है, एक बड़े जरूरी रस्म का सुधार मेरे द्वारा हुआ, मैंने ही पहला नमूना दिखा कर कम हिम्मती भाइयों के लिए रास्ता खोल दिया, यह विचार, 'यही चिन्ता-बुद्धि में इनकी शान्ति का कारण होती है'। क्या हुआ, यदि उस समय लोगों ने उनका आदर नहीं किया, आज दिन कौन सभ्य हिन्दू संनान इन महापुरुषों को जाति पतित कहने की हिम्मत कर सकता है ? जाति पतित कहना तो

दूर रहा, सब लोग उनकी श्रद्धा करते, उनके नाम पर भाक्त से पुष्पांजलि चढ़ाते हैं। थोड़ा समय और बीतने दीजिए। ऐसे लोगों को लोग भुजा खोलकर गोद में लेंगे। इसी तरह रस्म रिवाजों का सुधार होता है, यों ही जीवित समाज के हानिकारक रस्म-रिवाज सब एक धक करके दूर होते हैं। बैजू भैया ! पीछे से पछतावा करने के लिए मैं यह काम नहीं करना चाहता वरन् जन्मभर सुखी होऊँगा, परमात्मा की इच्छा से जन्म-दुःखिनी चम्पा को सुखी करूँगा, इसी लिए इस काम पर उतारू हुआ हूँ। चम्पा का मन मैं खूब जान गया हूँ, उसकी सिधार्ह, उसका स्वच्छ, पवित्र, स्नेहपूर्ण हृदय, आत्म-विसर्जन स्वार्थत्याग की शक्ति, यह सब मैंने विशेष कर के लक्ष्य किया है। वह यदि मेरी धर्मपत्नी होगी तो मेरी जिन्दगी अमृत मयी हो जायगी। बैजनाथ भैया ! मन की लालसा उद्वेग की कहानी सुना कर अब आप को ज्यादा तंग नहीं करूँगा, बस इसी से समझ लीजिये कि यदि इस विवाह में आप लोग राजी नहीं हुए, तो आज से मेरे जन्मभर की कुल आशा, उद्यम, चेष्टा, उत्साह, यही समाप्त हुआ समझिए, कलेजे में बरछी बिंध कर के मजदूर मेहनत नहीं करते।

बैजनाथजी जरा मुसकुरा कर बोले—क्या कहते हो शिवनाथ, भला एक साधारण लड़की के लिए तुम्हारे ऐसे उत्साही युवक का उत्साह जाता रहेगा ? एक मामूली निराशा से तुम्हारे ऐसे बुद्धिमान, ऊँचे विचार वाले युवक की जन्मभर की चेष्टा यहीं से समाप्त हो जायगी ! नहीं। ऐसा नहीं हो सकता।

बड़ी ही निराशा के स्वर से शिवनाथ बोले—बिना एक सहारे के आदमी का उत्साह, उद्यम धर्म-अधर्म कुछ भी नहीं रहता। ओह ! आज मेरा वह सहारा जाता रहा। पर आप को

यह बात क्योंकर समझाऊँ ? समझाने की शक्ति भी नहीं रखता। अच्छा, तो आप लोग यह तय कर चुके हैं कि यह विवाह नहीं करेंगे।

वैजनाथजी शिवनाथ के दोनों हाथ पकड़ कर हँस कर बोले—शिवनाथ, तुम अच्छी तरह समझ बूझकर सोच विचार कर यह काम कर रहे हो कि नहीं, यही देखने के लिए मैंने तुमसे इतनी बातें कहीं। जाओ, ऊपर जाओ मेरी स्त्री की जबानी तुम्हें मालूम हो जायगा कि इस विवाह में हम लोग बिलकुल राजा हैं। अभागिनी चम्पा का भारी जीवन परमात्मा की दया से सुखपूर्ण हो इससे भला हम लोग इनकार कर सकते हैं ? जाओ परमात्मा तुम दोनों को सुखी करें।

शिवनाथजी कुछ जबाब नहीं दे सके। उनकी आंखों से आसूओं की धारा बहने लगी। उन्होंने चुपचाप वैजनाथ जी के दोनों हाथ उठा कर अपने सिर पर रख लिये फिर वे ऊपर गए। सोने के कमरे में दीया जलाकर एक चटाई बिछाकर बसन्ती बैठी हुई थी। शिवनाथ जी एकाएक उस कमरे में जाकर उसके दोनों चरण पकड़ कर अश्रुधारा से भिगोते हुए बोले—बसन्ती जीजी, तुमने मुझे प्राणदान दे दिया। किस मुंहसे तुम्हारी दया, तुम्हारे स्नेह का बखान मैं करूँ। इसका बदला तो सौ जन्म में भी नहीं दे सकूँगा।

बसन्ती—ऐं ! ऐं ! शिवनाथ, यह क्या कहते हो ? छोड़ो, छोड़ो, छिः छिः जिसको पैर पकड़ना है आपही आकर पकड़ेगी हमें क्यों ? छिः छिः छोड़ो, छोड़ो। शिवनाथजी जग लज्जित से होकर बोले—बसन्ती जीजी, तुमने वैजनाथ भैया को ममझा बुझा कर इस काम के लिए राजी किया है, इसके लिए मैं जन्म भर तुम्हारा कृतज्ञ रहूँगा।

बसन्ती—अरे राजी न हों तो क्या करें ? जब वरपक्ष और कन्यापक्ष दोनों तरफ के मुखिया राजी हो गए तब भला मैं क्यों कर मना कर सकती हूँ ।

शिवनाथ—वरपक्ष और कन्यापक्ष के मुखिया कौन हैं ?

बसन्ती—मुखिया और कौन होगा ? मैं तो देखती हूँ कि दोनों आपही आप मुखिया बन बैठे हैं । वर आकर कन्या देख गया, पसंद कर गया, और कन्या ने भी लुक छिप कर वर देख लिया, पसंद कर लिया, बस, समन्ध ठीक हो गया ।

शिवनाथ—नहीं बसन्ती जीजी, हँसी मत करो, सच सच संकोच छोड़कर बतलाओ कि तुम राजी हो कि नहीं । चम्पा तो अभी कल की लड़की है, वह भला राजी नराजी क्या समझती है ? यह कुछ लड़कखिलवाड़ थोड़े ही है ?

बसन्ती—अजी नहीं, नहीं, वह निरी नासमझ लड़की नहीं है । अब खूब पक्की हो गई है । तुम्हें शायद मालूम नहीं, वह एकान्त में बैठी बैठी ब्याह की बात सोचा करती है ।

शिवनाथ—तुम्हारे पैरों पर गिरता हूँ जीजी, बहुत हुआ, अब हंसी छोड़ो । एक बार अपने मुंह से कहकर मेरी आत्मा ठंडो करो ।

बसन्ती—नहीं भाई, कहीं भूल से हाथ-पैर पकड़ मत लेना, नहीं तो कहीं चम्पा देख लेगी । तुम तो भलेमानुष बनकर चलोगे, और हम दोनों बहिनों में झगड़ा मच जायगा । नहीं भाई, दूसरे को आफत कौन सिर ओढ़े ।

शिवनाथ—तुमसे सकना मुश्किल है, बसन्ती जीजी, मैंने हार मानी, मैंने सोचा था कि तुमसे सलाह बात करके सब ठीक ठाक करूँगा सो देखता हूँ कि आज कुछ भी नहीं हुआ ।

बसन्ती—ठीक ठाक और क्या करोगे ? बस अब ती खाली

नाई पुरोहित बुलाना ही बाकी है, सो बड़ी जल्दी हो तो कहो अभी बुला दूँ। क्या जानूँ भाई, आजकल के कालेज के लड़के आपही नाई-पुरोहित का काम कर लेते हैं क्या ? अरे भाई, औरतों के जो कामकाज हैं, लोगों को करने होंगे कि चम्पा ही सब सुद कर लेगी। अच्छा न हो, चम्पा को यहीं बुलाए देती हूँ। अरे चम्पा, ओ चम्पा, जरा इधर तो आओ बहिन, शिवनाथ तुम्हे बुला रहा है, जरूरी काम है, जल्दी आ।

शिवनाथ जी हार मान कर उठ खड़े हुए, बसन्ती हँसती हुई उठ खड़ी हुई। तब शिवनाथ जी बसन्ती के दोनों हाथ पकड़ कर बोले—बसन्ती बहन, तुम लड़कपन से मुझ पर बड़ा स्नेह रखती हो, मेरी एक बात सुनो। इस काम में तुम राजी हो, बैजनाथ भैया मुझ से पहले ही कह चुके हैं, एक बार अपने मुँह से कह कर अशीर्वाद देकर मुझे तृप्त करो।

बसन्ती धीरे धीरे कहने लगी—शिवनाथ, नारायण जी बहिन के सुख का उपाय कर रहे हैं, इसमें भला मैं असम्मत हो सकती हूँ ? भगवान् तुम्हें सुखी करे, तुम्हारे सब उद्यम सफल हों, तुम्हें नाम और इज्जत मिले। अभागिनी चंपा का नारायण जी कल्याण करें, वह चिर पतिव्रता होकर आनन्दमयी गृहस्थी की रानी हो।

आंखों से आंसू भर कर शिवनाथ जी बोले—और क्या कहूँ, बसन्ती जीजी, भगवान् तुम्हारी इस दया का पुरस्कार देंगे। तुम लोगों की ऐसी दया माया, अच्छे कामों में असोम साहस, अतुल्य स्नेह, इस संसार में दुर्लभ है। लोगों के कहने सुनने, निन्दा-स्तुति का कुछ ख्याल मत करना। बड़े बड़े विद्वानों की राय है कि विधवाविवाह शास्त्रविरुद्ध नहीं है।

बसन्ती—शिवनाथ, मैं औरत जाति ठहरी, मैं शासत्र

उसतर क्या जानूँ । मेरी छोटी सी अकल में तो यही आता है कि नन्हीं सी बच्ची को जन्मभर जलाने की बात हम लोगों के सासतर में कभी नहीं लिखी होगी, और अनाथ नाथ दयालु परमेश्वर की भी ऐसी इच्छा नहीं है !

संसार में अपने को सब से भाग्यवान समझते हुए शिवनाथ जी, नाचे आँगन में आए, उन्होंने देखा कि चम्पा भंडार-घर का ताला बन्द करके हाथ में दीया लिए बाहर आ रही है । चम्पा ने इधर प्रायः दो महीने से शिवनाथ जी को नहीं देखा था, इन्हें देखते ही वह सहसा चौंक पड़ी, उसका सारा शरीर थरथर कांपने लगा ।

एँ ! क्या यह लावण्यमयी पवित्र-हृदया, स्वर्गीय कन्या मेरी होगी ? क्या इन निर्मल काले स्नेहपूर्ण नेत्रों को मैं चुम्बन करूँगा ? क्या उस कोमल मृणालवत् बाहुलता का स्पर्श मेरे भाग्य में बदा है ? क्या इस कमनीय अपूर्व सौन्दर्यविभूषित देहलताको मैं हृदय से लगाऊँगा ? क्या मेरी छोटी सी कुटिया में यह सुन्दर पुष्प रात दिन खिला रहेगा ? सबेरे की पौ फटने की रोशनी के साथ यह मुहब्बत का चिराग मेरी जिन्दगी को रोशन करेगा ? संध्या के समय यह स्नेहप्रदीप मेरी छोटी सी अँधेरी कुटिया में उजियाला फैलावेगा ? जिन्दगी की अनगिनत कोशिशों, काम-काज मेहनत और तकलीफ में यह स्नेहमयी स्त्री मेरे जीवन को शान्तिपूर्ण करेगी ? इस प्रकार एक के बाद एक चिन्ता की तरंगें शिवनाथ जी के हृदय में उथल पुथल करने लगीं, उनके मुँह से एक शब्द भी नहीं निकल सका चम्पा ने उ्योंही दरवाजे की कुन्डी चढ़ा कर पीछे मुड़ कर देखा तो शिवनाथ जी को खड़े पाया । मारे शरम के उसका, गोरा मुँह लाल हो गया, उसने सिर नीचा करके घूँघट काड़

लिया। ऐं यह क्या ? शिवनाथ जी से घँघट क्यों ? यह सोचकर और भी शर्मिन्दी हुई। दोनों आँखे आप से आप बन्द हो आईं। आँखों की पपड़ी तक लज्जा से लाल हो आई। चम्पा और खड़ी न रह सकी, दौड़ कर भाग गई।

चम्पा का यह लज्जा से लाल सुन्दर मुखमण्डल बहुत दिनों तक शिवनाथ जी के हृदय में अंकित रहा। जब जब कोई पीड़ा या कष्ट होता, या निराशा की काली घटा उनके जीवन को अन्धेरा कर देती, तब तक बालिका की यह मूर्ति उन्हें याद आ जाती थी।

खुशी खुशी चंचलमन से शिवनाथ जी घर आए। क्या सचमुच ही शिवनाथ जी के भाग्य में यह स्वर्ग का सुख बड़ा है ? या आज की रात की दीपावली को भाँति यह सुख को आशा एकाएक बुझ जायगी ? बहुत सुख अक्सर मनुष्यों के भाग्य में नहीं होता, बहुत सुख प्राप्त होने के समय अक्सर मनुष्यों के हृदय में यह खटका आ मौजूद होता है।

घर आतेही नौकर ने शिवनाथ जी के हाथ में एक चिट्ठी दी। उनका दिल एकाएक कांप गया न जाने क्यों ?

ऊपर जाकर मोमबत्ती जला कर शिवनाथजी ने देखा कि उनकी माँ की चिट्ठा है। माता जी ने कुल पुरोहित से लिखवाकर भेजी है। वे पढ़ने लगे:—

बेटा शिवनाथ, तुम भले-चंगे आराम से रहो, तुम्हारी चेष्टा सफल हो, तुम सुखी हो, रात दिन यही भगवान् जी से मांगा करती हूँ।

बेटा, आज एक निन्दा की बात सुनकर मेरे मन में बड़ी पीड़ा हुई है। बेटा शिवनाथ, तुम भले लड़के हो, मैं निन्दा

को इन बातोंपर विश्वास नहीं करती । तुम अपनी अभागिनी माता को तकलीफ देने वाले नहीं हो । लोग कहते हैं कि तुमने चम्पा से ब्याह करने की इच्छा प्रकट की है । बेटा, यह अधर्म का काम है । यह काम करके अपने पिता के निर्मल कुल में कलंक मत लगाना । तुम्हारी माँ जो इने गिने दिन जीती है, उसे कष्ट मत देना बेटा, तुम तो बड़ों की बात अमान्य करने वाले नहीं हो ।

बेटा शिवनाथ, मैंने बहुत कुछ कष्ट सहा है । तुम्हारे बाबू जी मुझे रुला कर चले गए, कामिनी बेचारी की हालत भी तुम से छिपी नहीं है । तुम्हीं एक मात्र मेरे कलेजे के टुकड़े हो । तुम्हारी ही आशा से मैं जीती हूँ । अब इस उमर में मुझे मत रुलाना, बेटा, मैं अब अधिक दिन नहीं बचूँगी । मेरे सिर के केशों की तरह तुम्हारी उमर हो । नारायण जी दुनिया में तुम्हें सुखी करें, धर्म में तुम्हारी मति हो, यह अभागिनी और क्या असीस दे सकती है ?

शिवनाथ जीने यह चिट्ठी पढ़ी । हाथ, सारा शरीर थर थर कांपने लगा, कमजोर हाथों से चिट्ठी गिर पड़ी, शिवनाथ जी मुर्च्छित हो कर धरती पर गिर पड़े ।

इस दिन रात भर शिवनाथ जी के मन में जो पीड़ा होती रही, वह लिख कर बतलाना कठिन है। निराशा की काली घटा उनके हृदय पर छा गई। लज्जा और घृणा से उनका दिल फोड़े ऐसा दुखने लगा। ओफ ! मैंने अपने परम मित्र का सर्वनाश किया है। सैकड़ों बिच्छुओं की तरह यह चिन्ता उन्हें डंक मारने लगी। ओह ! क्या करूँ ? क्या, जिस सुख-स्वप्न को छः महीने से हृदय में धारण कर रहा हूँ, उसे आज तिलजांलि दे दूँ। माताजी की आज्ञा का पालन करने के लिए मैं इसके लिए तैयार हूँ। सारी जिन्दगी दुःखमय उद्देश्य रहित, निराशा से पूर्ण, मरुभूमि, की तरह उजाड़ और निराश हो जायगी। जीना एक बोझासा हो जायगा। हो जाय माता के लिए मैं यह भी करूँगा। पर नहीं, मेरे परम मित्र बैजनाथ जो और उनकी साध्वी स्त्री बसन्ती जो मुझे लड़कपन से छोटे भाई सा स्नेह करती है, उनके नाम से आज जो कलंक फैला है, विरादरी उनसे नफरत करेगी, गाली गलौज देगी, उनपर अंगुली दिखावेगी। नहीं, यह मुझसे नहीं सहा जायगा। लोग कहेंगे कि इन दोनों ने एक नष्ट विधवा को शिवनाथ से ब्याह देना चाहा था, शिव नाथ ने सोच समझ कर नामंजूर कर दिया, वह बैजनाथ के घर में ही है, हाय ! हाय ! यह कलेजे को चीर देने वाली बात क्या मैं बरदाश्त कर सकूँगा। जो बसन्ती अपनी सगी बहिन से भी ज्यादा मुझे चाहती है उससे ऐसा बर्ताव करूँगा ? जो बैजनाथ जी अपनी उदारता से मुझे छोटे भाई से भी ज्यादा

चाहते हैं, लोकनिन्दा बिरादरी से निकाले जाने, सारे विरोधों की कुछ भी परवाह न करके केवल मेरे और चम्पा के आगे के सुख की इच्छा से मेरे इस बिषम प्रस्ताव से भी राजी हुए थे ओफ ! उन्हें क्या दुनिया भर के तिरस्कार और घृणा का पात्र बनाऊँगा ! जिस स्नेहपूर्ण निष्कलंक परिवार में प्रवेश करके मैंने शान्ति पाई, आज उसे कुटिल नीच विषैले सर्प की तरह दंशन करके चला आऊँगा । इस काल यिष से यह परिवार, सत्यानाश हो, चौपट हो, अमिट कलंक के समुद्र से डूब जाय मैं बिना संकोच के उन्हें त्याग दूँगा । नहीं ? नहीं, माताजी ! माताजी ! मुझे क्षमा करो, मैं यह नहीं कर सकता ! यह कह कर शिवनाथजी सहसा चिल्ला उठे ।

हाँ ! और वह धर्मपरायण पवित्र हृदया अभागिनी चंपा—हाय छः महीने पहले वह निरी सीधीसादी लड़की थी, प्रेम प्रणय किसे कहते हैं नहीं जानती थी, विवाह की बात उसने कभी स्वप्न में भी नहीं सोची थी । इसी छः महीने के अन्दर मैंने उसे प्रणय, प्रेम सिखा दिया । सरला बालिका के हृदय में नए भाव, नई चिन्ता नई आशा जगा दी । अहा ! सवेरे की पौ फटने के साथ ही उषा का उजियाला जिस तरह चुपचाप सोए हुए जगत् में धीरे धीरे फैलता जाता है, यह नई आशा भी उसी तरह इस अनाथ विधवा के हृदय में धीरे धीरे समा गई है, आज वह लज्जाशील नम्रमुखी विधवा पियासे चातक की तरह प्रेमवारि की ओर निगाह लगाए हुए है, ओफ ! इस समय क्या मैं उसे धोखा दूँ । सदा के लिए हतभागिनी कर दूँ । कलंक का दाग लगा कर उसे इस निर्दय जगत् में अकेली छोड़ दूँ । शायद वह इस असह्य अपमान और कलंक से महादुःखी होकर अकाल मृत्यु का

प्राप्त हो जायगी, या यदि सर्वदा के लिये यह निर्दय बर्छी की नोक हृदय में धारण कर जीवन्मृत हो रहेगी। शिवनाथ जी और अधिक सोच नहीं सके और बरदाश्त न कर सके। धरती पर लोट कर साधारण बालिका की तरह रोने लगे।

कमरा बड़ा गरम मालूम होने लगा। शिवनाथ जी उठकर खिड़कीके पास आए, पिछली रात की ठंडी हवा उनके सिर और केशों पर लगी, जलता हुआ मुख कुछ ठण्डा हुआ। सारा संसार घोर निद्रा में चुपचाप सोया हुआ है। अमावस की रात अपने अन्धकार से सारी पृथ्वी और आकाश को ढाके हुए है, खाली आकाश के अनगिनत उज्ज्वल तारे इस पापपूर्ण संसार की तरफ चुपचाप देख रहे हैं।

माता जी ने लिखा है कि दो एक दिन में वह यहाँ आवेंगी। अच्छा, उन्हें यह सब बातें समझा कर कहूँगा तो क्या वह समझ जायँगी? इस काम में राजी होंगी? नहीं, वृथा आशा! उन्हें खूब जानता हूँ बुढ़ौती में, वैधव्य में, वह इस काम में कभी भी राजी नहीं होंगी, या मेरी जिद से उन्होंने जवान से कह भी दिया तो मन ही मन बड़ी दुखी होंगी, अपने एकमात्र पुत्र के इस आचरण से अकाल मृत्यु की प्राप्त हो जायँगी। ओफ! इसके बाद हाथ जोड़ कर आकाश, नीले आकाश, की तरफ देख कर आँखों से आँसू बहाते हुए, शिवनाथ जी बोले—पुण्यमयी माता! ऐसा अशीर्वाद दो जिससे मैं पुत्र का कर्त्तव्य न भूलूँ, तुम्हें दुखी न करूँ, तुम्हारी अन्तिम दशा को दुःखपूर्ण न करूँ। इसी चिन्तारूपी बिच्छू के दंशन से शिवनाथ जी सारी रात छटपटाते रहे। जब उषा काल की ठंडी हवा चलने लगी, तो उनके शरीर में कुछ ठंडक

पड़ी। उन्होंने अपना कर्तव्य स्थिर कर लिया। शोक सन्तप्त, पर शान्त हृदय से प्रातःकाल का आसरा देखने लगे।

सवेरे की ठंडी हवा से इनकी आँखें लग गईं। कितनी देर तक सोप यह उन्हें मालूम नहीं, पर उन्हें मालूम पड़ा कि कोई अपना कोमल हाथ मेरे शरीर पर फेर रहा है। आँख खोल कर देखा तो अपनी स्नेहमयी माता को सिरहाने बैठी हुई, स्नेह से अपने शरीर पर हाथ फेरते पाया। शिवनाथ जी उठ बैठे। उठते ही माता बोली—बेटा शिवनाथ, तू इतना दुबला हो गया है, बेटा अहा, बिना बिछौने के खाली जमीन पर क्यों पड़ा हुआ है। चल उठ, बिछौने पर आकर सो रह।

शिवनाथ—नहीं माँ ! मैं खूब सो चुका हूँ, अब नींद नहीं आवेगी। तुम कब आई ? माँ ! आने का समय मुझे लिखना था। स्टेशन से आने में कुछ तकलीफ तो नहीं हुई।

माता—नहीं बेटा, तकलीफ कुछ नहीं हुई। मेरे साथ पुरोहित जी आए हैं। उन्होंने गाड़ी ठीक कर दी थी।

शिवनाथ—माँ ! मैंने बिना समझे बूझे जो अपराध किया है, तुम्हारे मन को क्षमा दिया है, उसे क्षमा करो ! तुम्हारी चिट्ठी पाकर मैंने अपनी मनसा छोड़ दी है। माता जी, मैं तुम्हारी बात अमान्य कभी नहीं करूँगा, यदि तुम्हारे मनमें मैंने कुछ पीड़ा दो हो तो अपने बच्चे का सन्तान का यह अपराध क्षमा करो। माँ, तुम तो मेरे सब अपराध बराबर क्षमा करती रही हो। वृद्धा की आँखों से आँसू की धारा बहने लगी, स्नेह से गद्गद् होकर बोली—बेटा, शिवनाथ, तेरा मुँह मोठा हो, तूने मेरी बात मान कर मेरी अत्मा ठंडी कर दी, बेटा, मैं तो जानती थी कि तुम मेरी बात जरूर मानोगे, तुम

तो मेरे अबाध्य पुत्र नहीं हो, बेटा ! अहाहा ! भगवान तुम्हारा बलयाण करें ।

माता के दोनों हाथ अपने सिर पर रखकर शिवनाथजी आंसू बहाने लगे । माँने अपने आंचल से अपने इकलौते प्यारे पुत्र का आंसू पोंछ दिया, माँ के स्नेह से पुत्र का हृदय शान्त हुआ ।

—०—

२५

यद्यपि चम्पा और शिवनाथ के ब्याह की बात छूट गई है तो भी औरतों की मजलिसों में बहुत दिनों तक इस बात की चर्चा रही । नाना प्रकार के मनगढ़न्त कलंकोंका प्रचार एक-दम रुका नहीं, भला ऐसी मजेदार बात क्या रोज रोज मिलती है । कामिनी को चचियासासों को तो एक आध बान मिलने ही से हुआ, फिर जब कभी घर के काम-धन्धे से फुरसत मिलती या कामिनी को बकने झकने की मनसा होती, तो फोरन यही चर्चा ले बैठती थी ।

छोटी—हाँ, हाँ, ब्याह छूट गया है, कौन कहता है छूट गया है, ऊपर से छूटा है, भीतर ही भीतर सब काररवाई जारी है । समझिन कलकत्ते आई हैं कि नहीं । बस इसीसे छोकड़ा विचारा क्या करे, कुछ दिन के लिए चुप कर गया है । बस उनके आंख बन्द करने की देर है । फिर देखना चटपट उसी अभागिनी छोकड़ी से ब्याह कर लेगा ।

ममली—हाँजी हाँ, समधिन जी बड़ी भली हैं । जो दुख किया है उसी मुँहझौंसी ने तो किया है । अब हम लोगों के डर के मारे बात दबाई जा रही है । हमारे घर उसने लड़की दी है, उस मुँहझौंसी को क्या अपने प्राण का डर नहीं है । यह ब्याह हो जाता तो क्या मैं कामिनी को जीती छोड़ती । जैसी बेहया माँ वैसी ही बेहया लड़की भी पैदा हुई । ऐसे छोटे लोगों को लड़की व्याहना चाहिये ! हाय-हाय ! हम लोगों के ऐसे कुल में कलिख लगा दी ।

छोटी—और वह औरत भी कैसी बेहया है, ऐं उस बैजनाथ की जोरु को भी जरा हया शरम नहीं हैं । विधवा बहिन का ब्याह करने को राजी हो गई । राम ! राम ! छिः छिः चौदह पुरुषों को एक दम कलंक में डुबो दिया । ऐसी लड़की का जीने-से मर जाना ही अच्छा है । पैदा होते ही माँने नमक चटा कर मार क्यों नहीं डाला ।

ममली—और वह कलकी कीड़ा छोकड़ी भी देखो कैसी बेहया है । ऐसी विधवा को क्या घरमें रखना होता है ? और कोई होता तो काशी या वृन्दावन अथवा सिर मुंडा कर वैरागियों के अखाड़े में भेज देता । छिः ! छिः ! भले मानुषों के घर में ऐसी लज्जा की बात ?

छोटी—तो निकाल क्यों नहीं देते ? उसे निकाल बाहर करें, इतना नखरा क्यों ? निकाल कर बाजार में बैठा क्यों नहीं देते ?

ममली—अरे ! अभो नखरा क्या हुआ है ! अभी तो और भी होगा । अरे, बहिन तुम्हें तो सब दास्तान मालूम नहीं है, मैं सब सुन चुकी हूँ । अब देखो न क्या होता है देर नहीं है । तब देखेंगे न किस तरह छिपाती है । थाने में खबर भेजवाऊँ

तो ठीक हो। ऐसे समझी रहने से न रहना ही भला है, ऐसे कुटुम्बों के मुंह में लूका।

छोटो—और देखो जरा, समझिन जी ने यहां आकर कामिनी को बुलवाया। जरा शरम हया नहीं हैं।

अमली—अरे हया-शरम ही होती तो क्या मुंहमौसी लड़के का ऐसा नाता ठीक करती ? क्यों न हो। भला इस अभागो कुल में और क्या होगा। उंह ? बहू को लेने आवेगी। जलती हुई लकड़ी से पीट पीट कर पीठ की हड्डी तोड़ दूंगी। कामिनी जरा जाने का नाम ले तो सही। उसकी पीठ की खाल न उतार ली तो मैं ब्राह्मण की बेटी नहीं। छिः ! छिः ! ऐसे घर में कोई बहू को भेजता होगा, उन्हें छूने से हम लोगों के सात पुरखों की जाति मारी जायगी। क्या ही समझ मारी गई है, कि ऐसे डोम चमारों के घर जाकर कैलाश-नाथ ब्याह कर आया। छिः छिः ! छिः ! इसी प्रकार अपने कुल की, जाति की, पुरखाओं की खुशनामी, शिव-नाथ बसन्ती और चम्पा का बखान, कामिनी को हर रोज कितनी बार सुननी पड़ती थी, इसका कुछ अन्त नहीं था, पर दैव बस इन अमृत भविष्यियों के मंठे वचन कुछ दिनों के लिए मुलतबी हो गए, क्योंकि कामिनी के स्वामी की बीमारी एकाएक बहुत बढ़ गई, अब तब की हालत हो गई; सब लोग उन्हीं की चिन्ता में व्याकुल हो गए।

कामिनी की चबिया सास सब बहुत डर गई, इतने भारी घराने को संभालने वाला और कोई दूसरा मर्द उस घर में नहीं था। कामिनी बेचारी मारे डर और चिन्ता के सूख कर कांटा हो गई, न खाने का होश, न सोने की चिन्ता बस रात-दिन बावली सी अपने स्वामी की तबीयत का हाल जनाने के

लिए छटपटाया करती थी। बहनोई की कड़ी बीमारी का हाल सुनकर शिवनाथ जी आए, आकर कई दिन उस घर में रहे। उन्हें देख कर लोग कानाफूसी करने लगे, पर उन्होंने किसी की कुछ परवाह नहीं की। बैजनाथाजी भी रोज सवेरे से आकर दो पहर तक रहते। उन्हें देख कर शिवनाथ जी कुछ लज्जित होने लगे, पर उस उदार हृदय सज्जन ने उन्हें एक कोने में बुला कर कहा शिवनाथ, अब तुम हमारे घर क्यों नहीं आते ? तुमने तो कुछ बुरा काम नहीं किया है। फिर शरमाते क्यों हो ? इस ब्याह में तुम्हारा माँ राजी नहीं हैं तुमने अपनी माता के कहने मुताबिक काम किया है, तो बेजा क्या किया ? तुम यदि अपनी माता की असम्मति से विवाह करना चाहते भी, तो हम लाग राजी नहीं होते। शिवनाथ, तुम्हारा कुछ अपराध नहीं है। तुमने कुछ बुरा काम नहीं किया। फिर डर किस बात का है। लाग जो चाहें कहें, हम परवाह नहीं करते, तुम भी परवाह मत करो।

बैजनाथ की बातें सुनकर शिवनाथ जी विस्मित हो रहे। जिस बाल्य सखा को उन्होंने दुनिया भर की घृणा का, निन्दा का पात्र बनाया, जिसकी पवित्र गृहस्थी में उन्होंने कलंक लगाया, वही ऋषि-तुल्य मनुष्य आज आप ही आकर उनका हाथ पकड़ कर उनके सारे अपराध क्षमा कर रहा है। शिवनाथ कुछ बोल न सके, कृतज्ञता से उनकी आंखों में आंसू भर आये, मन ही मन बोले—अब तक आपको बड़ा भाई समझ कर भक्ति करता था, आज से देवता मानकर पूजा करूँगा।

बैजनाथ और शिवनाथ ने यथाशक्ति रोगी की बहुत कुछ सेवा की, कालीजी का प्रसाद बन्द करवा दिया, रुपए की कुछ भी परवाह न करके कलकत्ते के सर्वोत्तम वैद्य-

डाक्टरों को दिखाया, उनके कहने मुताबिक परहेज वगैरह में कुछ फर्क न आवे देखने के लिए दिन-रात रोगी की शय्या के पास बैठे रहे, पर इतने पर भी कुछ नहीं हो सका। एक हफ्ते तक उत्कट पीड़ा सह कर कामिनी के स्वामी का परलोकवास हो गया।

एक तो पहले ही से कामिनी का शरीर चिन्ता के मारे आधा हो गया था, इस खबर के सुनते ही वह चिल्ला कर रोती हुई मूर्च्छा खाकर धरती पर गिर पड़ी। शिवनाथ जी बहुत कुछ पानी छिड़क कर पंखा भाल कर अपनी बाहिन को होश में लाए। होश में आते ही अन्तिम बार स्वामी को एक बार देखने के लिए कामिनी चिल्लाने लगी। शिवनाथ ने रोकने की बहुत कोशिश की पर वह न मानी। केश बिखराए बावल ऐसी दौड़ती हुई कामिनी अपने स्वामी के कमरे में जा पहुँची, मृत स्वामी के दानों चरणों को सिर पर रखकर हाहा-कार ध्वनि से विलाप करके, सबका हृदय बिलखाने लगी। आज तक कामिनी को स्वामी के प्रेम का ज्ञान नहीं हुआ था, आज उसकी आंखें खुलीं पुण्य-हृदया विधवा बेचारी स्वामी के चरणों पर बार बार लोट कर बिलख-बिलख कर रोने लगी। एक एक बार मृत स्वामी के मुख की तरफ देखती, और बिलख उठता, बहुत कुछ विलाप और रोने धोने से भी दिल का बुखार नहीं निकलता था, रोती-रोती फिर मूर्च्छित हो गई। कामिनी के अचेतन शरीर, दुबला-पतले शरीर को दोनों हाथ से उठा कर शिवनाथ जी दूसरे कमरे ले गए। कई रोज के बाद कामिनी के ससुरार वाले सब लोग बाँकीपुर को रवाना हो गए। शोक-विह्वला विधवा तुलापट्टी में भाई के घर आकर माता का स्नेहपूर्ण गोद में सिर रख कर कुछ शान्त हुई।

कामिनी की उम्र अभी पचीस की भी नहीं हुई थी, पर उसके सिर के सामने के सब केश उड़ गए थे, आंखें दोनों गड़हे में धँस गई थीं, शरीर सूखकर काँटा हो गया था। दुःख और शोक से नाना प्रकार की बीमारियों का घर हो रहा था। देखने से चौतिस बरस की, सदा की रोगिनी स्त्री मालूम होती थी। सदा की दुखिया को माता की गोद में सिर रख कर कुछ शान्ति मिली।

बड़ा घराना अच्छी जाति देख कर कामिनी का विवाह किया गया था, पर अच्छा घराना शुद्ध वंश होने ही से सब समय सुख प्राप्त नहीं होता।

—:~:—

२६

एक अभागिनी की कथा पहले परिच्छेद में लिखी गई है, अब दूसरी हतभागिनी का वृत्तान्त इस अध्याय में लिखना पड़ा। इच्छा तो यही थी कि अब रोग-शोक रोने-धोने का दास्तान नहीं लिखेंगे, पर क्या करें जब दुनियादारी का हाल लिखने बैठे हैं, तो दुःख शोक की कहानी भी लिखनी ही पड़ेगी, क्योंकि बिना इसके एक तरफ का चित्र सूना रह जायगा। खैर, तो भाँ थोड़े ही में सब हाल बयान किए देते हैं। कामिनी के पति की बीमारी के समय बराबर बैजनाथ हरदम वहीं रहते थे, इसलिए बसन्ती को घर से बाहर निकलने का अवकाश नहीं था, और इनके अड़ोसा-पड़ोसियों ने इनके नाम से जैसी निन्दा, कलंक की बात फैला रखा थी उससे कहीं बाहर अन्दर जाने को बसन्ती का जी भी नहीं चाहता था। पर हाँ, तारा

का समाचार जानने के लिए वह बड़ी बिकल रहती थी। तीसरे चौथे, आदमी भेजकर उसकी तबीयत का हाल मंगवाने लगी। आदमी की जबानी हाल सुन कर उमे बड़ा भय हुआ। अस्तु, कई दिन बाद पालकी पर सवार होकर वह खुद तागा के घर गई। वह मन ही मन सोचती जा रही थी कि वहाँ पहुँचते ही ताई जी इतने दिन तक न आने के लिए जरूर बर्केंगी, पर वहाँ जाकर ताईजी की जो हालत देखी, उससे आँखों में पानी भर आया। ताईजी का सदा का हँसमुख चेहरा सूख गया है, बड़ी बड़ी काल आँखें गढ़हे में धँस गई हैं काले म्रमर ऐसे केश जगह-जगह सफेद हो गए हैं। मोटा-ताजा गोल गाल शरीर दुबला हो गया है। लडकी की सेवा टहल के लिए रात जागने से, उसकी दिली तकलाफ के लिए रात-दिन रां-रोकर और सोच-सोच कर तारा की माता अकाल ही में बुढ़ौती को प्राप्त हो गई थी।

बसन्ती के आते ही ताईजी रोकर बोली—आओ बेटी, तुम लोग एक एक करके आती जाओ, बेटी तारा को जरा देखो भालो, जो करना हो करा मुझसे तो अब होता नहीं। मन में नाना प्रकार की चिन्ता और सांच करती हुई बसन्ती ताईजी के साथ तारा के कमरे में गई। तारा को देखते ही उसका जी काँप गया। तारा के मजीन सूखे हुए पीले चेहरे पर मौत की छाया पड़ चुकी थी।

बसन्ती जीजी को देखकर रोगी का चेहरा कुछ हरा हुआ। बसन्ती की तरफ तारा ने हाथ बढ़ाया। बसन्ती उसी हाथ को पकड़ तारा के पास बैठ कर चुपचाप आँखों से आंसू बहाने लगी। मनमें लड़कपन की बातें याद आने लगों। बसन्ती जब बहुत छोटी थी, ताईजी के घर खेलने जाती, तारा के साथ

न जाने कितने तरह का खेल खेलती, अपना लड्डू तोड़ कर तारा आधा बसन्ती को देती, अपने खिलौने में से एक उसे देती। इसके बाद जब बसन्ती ताईजी के घर उनके आश्रय में रही, तब भी दोनों जनी एक संग खेलतीं, गरीब की लड़की का तारा अनादर नहीं करती थी।

इसके बाद दोनों का विवाह हुआ। दोनों एक से दूर अलग-अलग बिछुड़ गईं, पर बचपन का प्यार नहीं भूलीं, जब कभी ताईजी के यहाँ दोनों की मुलाकात होती, तो कैसा आनन्द होता, अभी छः महीने भी नहीं बीते हैं, ताईजी के यहाँ दोनों का मिलाप हुआ था, हाय ! आज वह आनन्द कहाँ है ? गोल-गोल गोरी-गारो बाहों में वह हारे के कड़े जड़ाऊ अनन्त, जोशन कहाँ ? हंसमुख सरला ताईजी का वह दर्प पूर्ण चेहरा और मीठी-मीठी बातें कहाँ ? धन-दौलत का गर्व दुनियादारी का घमंड यह सब कहाँ है ? हाय ! यह सारा सुख अब गया बीता ही गया, तारा के भाग्य में अब वह सुख फिर नहीं आनेका। वह सारी सुखलीला स्वप्न हो गई, साथ ही साथ तारा की जीवन-लीला, खेल-कूद, सुखभोग, धन-यौवन, खूबसूरती, नाजो अदा सब, समय से पहले ही निर्वाण होने को है।

बड़ी देर के बाद, बड़ी धीमी आवाज से तारा बोली—
बसन्ती जीजी, बहुत दिनों के बाद तुम्हें देखा, मिलकर जी ठण्डा हुआ।

बसन्ती—कामिनी के पति बहुत ज्यादा बीमार हो गये थे, उसीमें हम लोग बेतरह फंसे हुए थे, इसीलिए तारारानी तुम्हें देखने हम नहीं आ सके।

तारा—बीमारी अच्छी हुई।

बसन्ती धीरे से बोली—कामिनी विधवा है ।

तारा चुप हो गई । सूखे गालों पर एक बूँद आँसू गिर पड़ा । थोड़ी देर बाद फिर बोली—कामिनी है कहाँ ।

बसन्ती—शिवनाथ के यहाँ है । उसकी माँ भी वहीं हैं । कलकत्ते आ गई हैं ।

तारा—कामिनी से कहना कि जी शान्त होने पर मुझ से मिल जाय । मरने के पहले उसे एक बार देखने की बड़ी इच्छा है ।

बसन्ती—छिः तारा रानी ! ऐसी बात कोई मुँह में लाता होगा ! तुम्हें कड़ी बमारी हुई है, तो क्या हुआ ? डाक्टर इलाज कर रहा है, दस-पाँच दिन में आगे पीछे आराम हो जाओगी । छिः ! यह सब बातें मनमें मत लाया करो ।

तारा—आराम होकर क्या होगा ?

बसन्ती—आराम होकर फिर घर-गृहस्थी करना । आदमी के क्या सब दिन समान रहते हैं । आज जो तकलीफ है, कल नहीं रहेगी । सुख-दुःख तो सभी को लगा हुआ है । अच्छी होकर आनन्द से पति पुत्र के साथ गृहस्थी करना ।

तारा ने कुछ जवाब नहीं दिया, होठ के कोने में जरा सी हँसी दिखाई दी, थोड़ी देर तक कान लगाकर मानो कुछ आवाज सुनने लगी, फिर—बोली इस खिड़की से झाँक कर देखो ।

बसन्ती और उसकी ताईजी दोनों उठकर खिड़की से देखने लगीं । देखा कि एक जोड़ी आकर फाटक पर खड़ी हुई, विजय और एक दूसरे बाबू उससे उतरे । फाटक पर एक बुढ़िया खड़ी हुई थी, दोनों जने न जाने क्या उससे बात करने लगे । बातचीत करते हुए तीनों ऊपर चढ़ गए ।

बसन्ती ने पूछा - ताईजी, विजय नारायण के साथ यह दूसरा बाबू कौन है।

ताईजी---अरे, वही तो मेरे जमाई का शनीचर है। बसका नाम छन्नू बाबू ना तो क्या है। कलकत्ते के सब बड़े आदमियों के यहां जा जा कर यह मुँहभौंसा योंही हँस हँस कर बात बनाता है, और जितनी तरह की बुरी चालचलन है सिखा सिखा कर आँख में धूल भोंक कर रुपया ठगता है। भगवान जाने जमाई का कितना रुपया इसने ठग लिया है। ऐसे मुँहभौंसों को क्या यमराज याद नहीं करता।

बसन्ती - और वह बुढ़िया कौन है, जो हंस-हंस कर बतियाती हुई विजय के साथ ऊपर गई।

ताई—न जाने कौन है। देखती तो हूँ कि आज कई दिन से जोंक की तरह मेरे दामाद के पंछे चिपटी हुई है। न जाने क्या-क्या जाल फैला रही है।

बड़े धरे से तारा बोली—मैं जानती हूँ माँ, थोड़ी देर में तुम लोग भी जान जाओगी, इतना कह कर तारा करवट बदल कर चुप हो गई। तारा की आँख लग गई है, यही अनुमान करके बसन्ती उस दिन बिदा होकर घर आई।

इस दिन से हर होज बसन्ती तारा को देखने आती। पर उसका स्नेह, माता की सेवा सब वृथा हुई। रोगी के मनमें सुख नहीं, आशा नहीं, जीने की इच्छा नहीं, ऐसी हालत में क्या हो सकता था। खाँसी और भी बढ़ गयी, साथ ही आँव, खून का दस्त भी जारी हो गया, कमजोरी से बोला भी नहीं जाता था। डाक्टरों ने भी जबाब दे दिया। आज-कल, अब तब, यही हालत हो गई। अन्त को एक रोज कामिनी को साथ लेकर बसन्ती तारा के यहाँ आई। अभागिनी को विधवा वेष

में देख कर रोगी की आँखों से अश्रुधारा बहने लगी। कम-जोरी के कारण मुँह से कुछ बोल न सकी। कामिनी भी तारा का एक हाथ पकड़ कर रोने लगी।

बीमारी बहुत बढ़ गई। शाम को नाड़ी बहुत धीमी चलने लगी। चलती भी है कि नहीं जल्दी पता नहीं लगता था। डाक्टर देखने आया, देख कर उसका मुँह गम्भीर हो गया। कई खुराक दवा देकर कह गया कि सारी रात दो-दो घण्टे पर खिलाना सबेरे फिर आऊँगा। तारा की माँ आज कई दिन से रात जाग रही थी। बसन्ती बोली—ताई जी, आज तुम सोओ, मैं रात को तारा के पास बैठी रहूँगी।

रात नौ बजने के बाद बसन्ती ने एक खुराक दवा खिलाई। बड़े धीमे स्वर से तारा बोली—अब दवा क्यों! मैं चली। चलते-चलाते तुम लोगों का मुँह देख पाया, यही बड़ा सुख है। बसन्ती बहन, कामिनी बहन, मुझे भूलना मत। बसन्ती और कामिनी रोगी के दोनों हाथ अपने कलेजे पर रखकर चुपचाप आँसू बहाने लगीं।

आधे घण्टे के बाद बड़ी ही धीमी आवाज से तारा ने बुलाया—माँ, माँ! तारा की माँ पास ही में सो गई थी, नींद नहीं आई थी। आवाज सुनते ही, बेटी के पास आई। तारा ने दोनों हाथ उठाकर माँ का गला पकड़ लिया, कुछ बोल नहीं सकी। ऊर्ध्वश्वास चलने लगा। दम रुक रुक कर आने जाने लगा, हाथ-पैर ठण्डे हो गए, आँखें पथरा गईं। माता की गोद में स्नेहमयी कन्या मृत्यु को, चिर शान्ति को प्राप्त हुई। रात दोपहर के बाद तारा की भाता, बसन्ती और कामिनी पालकी पर सवार होकर इस घर से बाहर निकलीं। नीचे फाटक पर

आकर देखा कि छन्नू बाबू और वही बुढ़िया विजय से मिल कर नीचे उतर रहे हैं। बसन्ती ने पूछा—ताई जी, तुम्हें कुछ पता लगा कि यह बुढ़िया कौन है ?

पहले तो उन्होंने कुछ जवाब नहीं दिया, फिर बसन्ती के दो-तीन दफे पूछने बोली, इस बुढ़िया की एक भतीजी है, या भानजी है, वह थैटर में सीता, सावित्री राधा, न जाने क्या क्या तो स्वांग सजती है। छन्नू बाबू उसको एक रोज विजय के पास लाए थे, और उसके नाम से दस-पन्द्रह हजार रुपया भी ठग कर ले गया है, भगवान जानें और क्या क्या पट्टी पढ़ा गया है। तारा बेटी के रहते उसे घर लाकर नहीं रखता था, अब शायद लाकर रखेगा, उसके लिए हजारों रुपया लगा कर मकान सजाया गया है।

*

*

*

*

धनवान, गुणी, स्वरूपवान विजयनारायण जी कलकत्ते के रईसों में एक आदरणीय रत्न हैं। सभा-समाज सोसाइटी सब जगह उनका समान आदर है। सब लोग उनकी तारीफ करते, उनका यश गाते हैं। उनके मंत्रीगण, पार्षदगण उनकी उदारता की प्रशंसा करते हैं, एड्यूकेटेड क्लास उनकी रुचि पर लट्ठ हो रहे हैं, ब्राह्मण पुरोहित, पञ्च चौधरी उनकी हिन्दुआनी, धार्मिकता की प्रशंसा करते नहीं अघाते लड़की वाले उन्हें दामाद बनाने के लिए दम पर दम पैगाम भेज रहे हैं। और अफसर लोग, धनी, उदार जमीन्दार विजयनारायण जी को राजा की उपाधि से विभूषित करने की सोच रहे हैं।

ऐसा सुनने में आता है कि चतुर, बुद्धिमान, विद्वान् छन्नू बाबू आज-कल में आनरेरी मैजिस्ट्रेट होने वाले हैं। वह महा

प्रभु, अफसरों से अक्सर मिलते जुलते रहते हैं। इस बार लेभी दरबार में भी गए थे। उनके शिष्टाचार सभ्य-भव्य आचरण और बातों से सब लोग बड़े सन्तुष्ट हुए। और कुछ चाहे न हो छन्नू बाबू के पास गाड़ी-घोड़ा, मांजी घसी घसाई बुद्धि और मन हर लेने वाली मीठी बातों का भण्डार जरूर है, यह अफसरों, कर्तारों को खुश रखते, बड़े आदमियों का मन हाथ में लिए रहते और धीरे धीरे अपनी तरकी करते जाते थे। यह भी सभ्य समाज के सिरताजों में गिने जाते थे।

—*—

२७

शिवनाथजी की परीक्षा के दिन बहुत निकट आ गए। वे रात दिन पोथी लिए पढ़ा करते थे। घरके भीतर जाने को भी फुरसत नहीं थी। रात-दिन पढ़ पढ़ कर शिवनाथजी बहुत दुबले हो गए, यद्यपि उनकी माँ और बहिन उनकी बहुत कुछ सेवा करतीं, उनके खाने-पीने का विशेष ध्यान रखतीं, जिसमें उनका शरीर कुछ फिरे। पर शिवनाथ का मुँह कुछ भी फिरा नहीं, बड़ी मेहनत करने लगे, रात रात भर जागरण करके सोने के कमरे में पोथी लिए अकेले बैठे रहते, दिन पर दिन और भी कमजोर और पीले पड़ने लगे।

शिवनाथ जी की माता उनका यह हाल देखकर बोलीं—
बेटा, इतना पढ़ पढ़कर क्या बीमार होगे ? रहने दो परीक्षा देने की कोई जरूरत नहीं। चलो, हम लोग कुन्दनपुर चलें।

वहीं अपने पिता की जगह-जमीन जो है, वही देखना भालना, आराम से रहना, कलकत्ते की जलवायु तुम्हें सहती नहीं ।

शिवनाथ बोले—नहीं माँ, इस उमर में पढ़ाई छोड़ देना अच्छा नहीं । अब परीक्षा को भी अधिक दिन नहीं हैं । एक बार कोशिश करके देख तो लें । कामिनी ने पहले ही से शिवनाथ का ब्याह बांकीपुर में एक जगह ठीक किया था । उसने समझा कि घर में बहू आने से शिवनाथ का मन बहल जायगा, शरीर, चेहरा-मोहरा फिर जायगा । अस्तु, एक दिन कामिनी ने ब्याह की बात उनके सामने छेड़ी । शिवनाथ केवल यही बोले—बहन ! पढ़ने के समय तंग क्यों करती हो ?

बसन्ती की ताई जी इन दिनों बसन्ती ही के यहाँ रहती थीं, अभी तक कुन्दनपुर गई नहीं थीं । वह अकसर शिवनाथ की माँ से मिलने आतीं और दिन भर बैठकर बात-चीत किया करती थीं । और मन में दुःख कर कर के रोती थी । तारा की माँ कहतीं—बहन, उस समय यदि लोगों की बातों पर न चलकर हम लोग जरा सोच समझ कर काम करतीं तो क्या यह दिन देखने पड़ते, ब्राह्मण पुरोहितों की बात पर बड़ा घराना, अच्छा कुल देखकर लड़का ब्याही, मैंने भी अड़ोसी-पड़ोसी की बात सुन कर बड़े पैसे वाले के यहाँ बेटी का ब्याह किया, उसका आज यह फल मिला । भगवान् की जो इच्छा, इसमें अपना क्या बस है, मन का सोचा तो होता नहीं । अच्छा बहन ! जो होना था, हुआ, पर तुम शिवनाथ का खूब ख्याल रखना । ओह ! बेचारा पढ़ पढ़ कर दुबला हो गया है । शिवनाथ को पढ़ा लिखा कर ब्याह शादी करके बहू घर लाओ, बहू का मुँह देखकर दुःख लेश सब भूल जायगा ।

शिवनाथ की माँ बोली—मेरा भी यही इरादा है, बच्चा

ऐसा दुबला हो गया है, देख देख कर चिन्ता के मारे मेरा जी उड़ा जाता है। मैं भी समझता हूँ कि ब्याह होने से बच्चे का शरीर कुछ फिर जायगा। पर वह तो ब्याह करना चाहता ही नहीं। और तिस पर लोगों ने जो एक कलंक फैला रखा है, सोचते भी दुख होता है।

तारा की माँ—अरे राम ! राम ! वह बात अब जवान से मत निकालो। मैं उन दिनों लड़की की बीमारी में फँसी हुई थी। कुछ ऐसा देख सुन नहीं सकी, नहीं तो क्या यह सब होने पाता ? बसन्ती बेटो भी तो अभी लड़की ही ठहरी। बैजनाथ और शिवनाथ भी तो अभी कल के बच्चे हैं। अभी उन दिनों इक सभों को अपने हाथ से मैंने पाला-पीसा है, उन्हें अभी बुद्धि ही कितनी है। समझ क्या है ? अगर कुछ समझ ही हाती तो ऐसा काम करते ? खैर जो होना था हुआ, बसन्ती अब उस बात का जिक्र तक नहीं करती, तो क्या हुआ इससे तुम्हारे लड़के का ब्याह अटका थोड़े ही रहेगा। जितनी निन्दा कलंक है। सब औरतों ही के लिए है। जो कुछ दुख शोक निन्दा कलंक सब बेचारी बसन्ती और चम्पा ही को भोगना पड़ेगा। हाय ! हाय ! अभी वह कलकी दूधपीती बच्ची है, कुछ नहीं जानती, बिल्लो के बच्चे से खेलती, लम्घी से जंगलों में अमरूद तोड़ तोड़ कर खाती दौड़ती फिरती थी, उसे ऐसे कलंक में डुबाना ? अहा ! बेचारी का शरीर सूख कर सांक ऐसा हो गया है, मुँह सफेद हो गया है, आँखें गड़हे में धँस गई हैं। कल की बच्ची भला इतना भारी कलंक सह सकती है ? क्या करे, बेचारी, नसीब में निन्दा लिखा है, कौन दूर करे, बतलाओ ?

शिवनाथ की माता—अहा बेचारी चम्पा बेटो की बात

याद आने से छाती फट जाती है। कल की बच्ची विधवा हो गई, अहा ! उस बेचारी के भाग्य में जो कष्ट है हमीं जानते हैं, वह दूधपाती बच्ची क्या जानेगी ? तिस पर से यह निन्दा ! ऐं जीं जो लोग निन्दा करते हैं उन्हें जरा तरस भी नहीं आती है, जरा सोचते-समझते भी नहीं हैं। चम्पा ने क्या किया था ? उसका इसमें क्या अपराध है। बतलाओ। और दोष भी किसको दूँ ? बसन्ती बेचारी ने भी तो कुछ बुरा समझ कर यह काम नहीं किया था, शिवनाथ ने चम्पा से ब्याह करना चाहा। कलकत्ते में कई ऐसे ब्याह हुए भी हैं, चलो यह भी ब्याह हो जाय। यही तो कि लोग दस बात कहेंगे, कहेंगे तो कहें, शिवनाथ और चम्पा तो सुखी होंगे यही सोच कर बसन्ती ने यह काम करना चाहा था, कुछ बुरा समझ कर नहीं किया था। बसन्ती बेचारी को मैं बचपन से जानता हूँ, उसके ऐसा लड़की हम लोगों के गांव भर में नहीं है। अच्छा, बसन्ती अब हम लोगों के यहां आती क्यों नहीं ? उससे आने के लिये कह देना, उसे देख कर जी ठंडा होता है।

तारा की माँ—अजी मैं, तो सदाही कहती हूँ, पर रात-दिन गृहस्थी के धन्धे में फँसो रहती है, इस लिए आ नहीं सकती। चम्पा बेचारी तो अब कुछ काम-काज कर सकती नहीं, जैमी दुबली हो गई है, मैं उसे ज्यादा मेहनत नहीं करने देती। मैं भी दुःख-शोक के मारे कुछ कर धर नहीं सकती। तरकारा बनाते ही तारा याद आती है, भात उबालते तारा याद आती है। आंगन में खड़े होते तारा याद आती है अहा, बेटो, इसी उमर में माँ को छोड़ कर कहाँ चली गई। दोनों थोड़ी देर तक रोईं। उसी समय

कामिनी भीतर आई । तारा की माँ ने पूछा—ऐरे कामिनी ! तेरा भाई ऐसा क्यों हो गया है ? जरा देखना सुनना बेटी जरा खाने-पीने का ख्याल रखना, पढ़ पढ़ कर क्या बीमार होगा ?

कामिनी—मैं तो सेवा-टहल में कुछ कसर नहीं रखती, पर न जाने क्यों सदा पोथी लिए बैठा रहता है, खाने-पीने की तरफ कुछ ध्यान नहीं है, इसी से दुबला हुआ जाता है ।

तारा की माँ—ब्याह का जिक्र किया ?

कामिनी—एकबार, कई बार कर चुकी हूँ ।

तारा की माँ—क्या कहता है ?

कामिनी—सुनी अनसुनी कर जाता है, कहता है कि ब्याह करने की इच्छा नहीं है । बहुत कुछ जिद करती हूँ, माँ का नाम न लेकर कहती हूँ तो कहता है कि माँ से कहना, उनकी यदि ऐसा हो इच्छा हो तो मैं ब्याह कर लूँगा । पर उससे मैं सुखी न होऊँगा ।

तारा की माँ—अरे, सब लड़के यों ही कहते हैं, फिर ज्योंही बहू का मुँह देखते हैं सब भूल जाते हैं । मैं तो समझती हूँ कि ब्याह कर देना ही अच्छा है ।

शिवनाथ की माँ—नहीं बहन, शिवनाथ, मुझसे कभी मन की बात नहीं छिपाता । मैं डरता हूँ कि जबरदस्ती ब्याह कर देने से बेटा शिवनाथ दुःखी न हो जाय । मेरा करम तो योंही बहुत दिनों से फूट चुका है, कामिनी बेचारी पर भी विधाता निष्ठुर हो गए । अब खाली एकमात्र शिवनाथ ही मेरा भरोसा है, उसे यदि दुःख हुआ तो इन आंखों से देख न सकूँगी ।

तारा की माँ—हाय, हाय, मैं जल जाऊँ, शिवनाथ दुःखी

क्यों होने लगा। अच्छा, अभी ब्याह नहीं करता न सही। पढ़ने लिखने में मन है, पढ़े, अच्छा ही है।

शिवनाथ को माँ—बहन पढ़ाई-लिखाई भी कुछ ऐसी विशेष हो रही है, मुझे तो मालूम नहीं पढ़ता, शिवनाथ तो सदा हो से पढ़ता-लिखता है, उसके लिए ऐसा दुबला होते तो मैंने कभी नहीं देखा।

तारा की माँ उस दिन बिदा होकर घर गई। कामिनी बोला माँ! तो फिर शिवनाथ के लिए क्या करूँ? डाक्टर दिखाऊँ?

माँ—बेटी, मन की चिन्ता का डाक्टर क्या करेगा? डाक्टर के पास इस रोग का इलाज नहीं है।

कामिनी—तब क्या होगा? बसन्ती बहन से एक दिन सलाह करके देखूँ? हम लोगों को जब कभी कोई तकलीफ आ पड़ती थी तो बसन्ती बहन सलाह देती थी।

माँ—बसन्ती इस बारे में कुछ सलाह नहीं देगी।

कामिनी—देगी क्यों नहीं माँ? जरूर देगी। मैं एक दिन उसके यहाँ जाऊँगी।

जाड़े के दिनों में शिवनाथ जी को परीक्षा हुई। उनके क्लास के और सब लड़के कहने लगे कि इस वर्ष शिवनाथ न हो दर्जे का और एक लड़का कुंजबिहारी फर्स्ट होगा महाने भर बाद रिजल्ट निकला। कुंजबिहारा फर्स्ट हुआ, पर सभी को यह देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि पास हुए लड़कों की सूची में शिवनाथ का नाम कहीं भी नहीं है।

तब शिवनाथ की माता ने उन्हें बुलाकर कहा—बेटा, इतना पढ़ पढ़ कर हड्डा सुखाकर भा तो तुम पास न हो सके। अब क्या करोगे?

शिवनाथ जी धीरे से बोले—माँ, इस बार नहीं हो सका, फिर एक बार कोशिश करके देखूँगा—बढ़ी कठिन परीक्षा है, बहुतेरे एक बार में पास नहीं होते ।

कामिनी भी कई एक दिन बसन्ती के घर गई, पर बसन्ती कुछ सलाह न दे सकी. बोली कि अपनी माँ से कहना कि ताई जी से सलाह करके शिवनाथ के लिए जो मुनासिब समझें करें । मैं लड़की ठहरी, इन सब बातों में क्या कुछ सलाह दे सकती हूँ ? कामिनी ने घर आकर यह सब बातें माँ से कहीं ।

माता — चम्पा को कैसी देखी बेटी ?

कामिनी—चम्पा अच्छी है । पर कलकत्ते आकर एकदम बदल गई है, पहचानी नहीं जाती । लम्बी हो गई है, शरीर भी कुछ दुबला हो गया है, पर घर का काम-धन्धा मजे में कर रही है । शरीर का रंग भी अब लडकपन जैसा चम्पा ऐसा नहीं रहा, जरा श्यामता आ गई है. अब यह कुन्दनपुर की दूध-पीती बच्ची नहीं है । बुद्धिमती शिवनाथ की माँ कुछ बोली नहीं । सारा दिन मन ही मन सोचती रही, कई दिन तक अकेली बैठी हुई सोचा करती । अन्त में एक दिन रात को सोने जाते समय मन ही मन बोला —बेटा शिवनाथ, माता के प्रति जो कर्तव्य है, तुमने पूरा किया । नागायण जी सहाय हों । अब पुत्र के प्रति जो कर्तव्य है मैं करूँगी ।

दूसरे दिन सवेरे शिवनाथ की माता पालकी पर सवार होकर भवानीपुर के उत्तर तरफ बेहाला नामक गांव में जा उपस्थित हुईं। एक छोटी सी कुटिया के सामने पालकी रखी गई साथ में जो दाई थी वह कुटिया के भीतर गई।

थोड़ी देर में उसी दाई के साथ एक वृद्धा ब्राह्मण बाहर आए। इनकी उम्र का पता लगाना तो कठिन था, पर हाँ सिर के बाल सब उड़ गए थे जो थोड़े से थे भी, बगुले के पर की तरह सफेद हो रहे थे। रंग गोरा था, पर शरीर पर झुर्रियाँ पड़ गई थीं, देखते ही मालूम पड़ता था कि इनकी आयु का दो हिस्सा बीत चुका है। यह वृद्ध ब्राह्मण कुन्दन पुर के बाजपेयी घराने के कुलगुरु थे, इनके साथ एक तेजस्वी ब्रह्मचारी भी बाहर आए। यह हाल ही में काशी से आए थे।

गुरु—पुत्रो, आज यहाँ किस अभिप्राय से आगमन हुआ ? चलो, कुटिया के भीतर चलें। शिवनाथ की माता इस ब्राह्मण के साथ कुटिया के भीतर गईं; बैठने पर बोलीं—गुरुदेव कुशल से तो हैं ?

गुरु—हां, पुत्री, परमात्मा की कृपा से मेरा शरीर आरोग्य है। अपना मंगल कहो।

शिवनाथ की माता—भगवान् ने जीवित रखा है पर मन में सुख नहीं है। आज कई महीने हुए, मेरी कन्या कामिनी विधवा हो गई है।

गुरुदेव ने चुपचाप आंखों से एक बूंद आंसू गिराया,
१६

गिराकर बोले—पुत्री, रुदन मत करो, जो परमात्मा की इच्छा होती है, वही होता है । उसकी काररवाई में दखल कौन दे सकता है ।

शिवनाथ की माता—आप का कहना सच है, पर कामिनी के ब्याह के समय मैंने अड़ोस-पड़ोस के ब्राह्मण पुरोहितों के कहने के मुताबिक सब काम किया । आप ने उसी समय मना किया था, आप की बात सुनती तो यह कष्ट सहना नहीं पड़ता । बेचारी कामिनी को भी पानी में बहाना नहीं पड़ता, इसीदुःख से रात-दिन मेरा जी जला करता है ।

गुरु—अपने को धिक्कार मत दो । इन बातों में आदमी का कुछ चारा नहीं है, और न हम लोगों की सलाह ही में कुछ विशेष फल होता है । हमलोग बहुत कुछ सांच विचार कर दस बुद्धिमानों से सलाह लेकर काम करते हैं, क्षण भर में सब उलट पुलट हो जाता है, कल्पना वृथा हो जाता है, परमात्मा अपनी इच्छा के अनुसार सब काम करते हैं ।

शिवनाथ की माँ—तो भी भले बुद्धिमानों की सलाह से किया हुआ कोई काम बिगड़ भी जाय तो मन में दुःख तो नहीं रहता, गुरुदेव ! इसी लिए आज एक बात के लिए आप से सलाह लेने आई हूँ । एक अनुष्ठान क्रिया जानने आई हूँ ।

गुरु—पुत्री, तुम्हें तो खूब मालूम है कि मैंने क्रिया कर्म-काण्डों में आना-जाना बहुत दिनों से छोड़ दिया है, किसी प्रकार के शास्त्र की व्यवस्था देने में भी असमर्थ हूँ । मुझ से अधिक विद्वान, शास्त्री, पण्डित, काशी, कलकत्ता, नवद्वीप में मौजूद हैं, जो रात दिन शास्त्रालोचन क्रिया करते हैं, कर्म-काण्ड में भी वे लोग दक्ष हैं, व्यवस्था देने में भी पूरे विचार-

शील हैं। मैंने तो यह सब काम बहुत दिनों से छोड़ दिया है, केवल परलोक सुधारने के लिए देवार्चन करता हूँ और मन बहलाने के लिए जब जो इच्छा होती, एक आध पुस्तक देखता हूँ, वह भी कोई बहुत साधारण पुस्तक होती है।

शिवनाथ की माता—गुरु जी, यदि खाली एक इसी कृपा के लिए आप की व्यवस्था लेने की जरूरत होती तो मैं आप को तंग करने नहीं आती, पर आप मेरे पति के पुत्रैनी कुल-गुरु हैं, आप मेरे श्वसुर जी के परम मित्र थे, मेरे स्वामी पर परम कृपा रखते थे, यदि इस कुल में कुछ आफत विपद आ पड़ेगी तो आप के सिवा और किससे सलाह पूछने जाऊँगी। इस घराने के लिये आप जैसा यत्न करेंगे दूसरा क्या वैसा करेगा, हम लोगों का और मुख्बी कौन है ?

गुरु—पुत्री, रोओ मत। मैं तुम लोगों के लिए अपनी यथाशक्ति कुछ बाकी नहीं रखूँगा, पर इस बुढ़े की सामर्थ्य भी कम है और विद्या भी कुछ ऐसी नहीं है।

शिवनाथ की माँ—गुरु जी, जो लोग बहुत विद्या का घमंड करते हैं, उनसे व्यवस्था लेने को मेरा जी नहीं चाहता। आप में जो विद्या है, वह इस देश में किसी से छिपी नहीं है, नहीं तो इस एकान्त गाँव में काशी मथुरा ऐसे दूर देशों से विद्यार्थी पढ़ने नहीं आते। गुरुदेव, आप को ज्ञान ही मेरे लिए वेद-वाक्य है।

गुरु—पुत्री तुम्हें भ्रम हुआ है। मेरी विद्या यत्सामान्य है। समुद्र तुल्य आर्य शास्त्रों से मैं एक आध चुल्लू भी पी सका हूँ कि नहीं इसमें सन्देह है। विद्यार्थियों से बात-चीत करने में मुझे बड़ा आनन्द आता है। उनके प्रति स्नेह करने को जी चाहता है, इसी लिए दो एक यहाँ आ

जाते हैं। आज कल काशी से यह ब्रह्मचारी महाराज पधारे हुए हैं।

शिवनाथ की माँ—गुरु जी, उसी स्नेह की लालसा से मैं भी आई हूँ, अपनी पुत्री पर स्नेह कर के आज एक सलाह दीजिए।

गुरु—कहो पुत्री कहो, तुम्हें जो कहना हो कहो, मैं तुम्हारे स्वामी कुल वालों से बहुत दिनों से परिचित हूँ। मेरी सामान्य शक्ति से जो कुछ हो सकेगा मैं करूँगा।

शिवनाथ की माता धीरे धीरे कहने लगी—गुरु जी, मेरे लड़के शिवनाथ के साथ एक बाल-विधवा के ब्याह की बात चीत हो रही है। उसी के लिए आप की व्यवस्था, सलाह, आप का आशीर्वाद लेने आई हूँ।

गुरुदेव शिवनाथ की माँ को बचपन से जानते थे, सनातन धर्म में उसकी पर्याप्त आस्था का उन्हें पूरा पता था। उसके मुँह से यह बात सुनकर उन्हें कुछ आश्चर्य हुआ, कहने लगे—पुत्री विधवा-विवाह ! हम लोगों की रीति के विरुद्ध है, प्रचलित शास्त्र, प्रचलित धर्म सब के विरुद्ध है, तुम क्या नहीं जानती ? इसमें तो ब्राह्मण पुरोहित सब एक मत है, जिम्मे से तुम पूछती सब बतला देते, केवल यही बात पूछने के लिए तुमने मेरे पास आने का कष्ट क्यों किया ?

शि० मा०—मैं ब्राह्मण पुरोहितों की व्यवस्था जानना नहीं चाहती, उसके लिए आपके पास नहीं आई हूँ। केवल आपकी मनसा आपकी सलाह लेने आई हूँ। जो मैं कहती हूँ सुनिए। यह कह कर शिवनाथ की माता ने आदि से अन्त तक अपने दुःख की सारी कहानी कह सुनाई। बसन्ती की माँ का वृत्तान्त, बसन्ती और बैजनाथ की बात, उनके कलकत्ते आने का हाल,

चंपा और शिवनाथ के पवित्र प्रणय का वृत्तान्त, लोगों की निन्दा, कलंक की कहानी, निराश्रय निर्दोष अबला चंपा के कलंक, अपमान, असह्य यातना और शरीर की दुर्गति का हाल सदा की दुखिया कामिनी की कथा, अभागिनी तारा की सारी कथा, उन्होंने सविस्तर वर्णन किया। सुनते सुनते गुरुदेव की आंखों में आंसू की धारा बहने लगी, काश के ब्रह्मचारी की आंखों से चिनगारोसी निकलने लगी, शरीर कांपने लगा अन्त में शिवनाथ की माता बोली—गुरुदेव, इस समय हम लोगों पर चारों तरफ से आफत घिर आई है, आपके सिवा और किसके सलाह लेने जाऊँ, लोगों की बातों पर भूल कर तारा की माँ ने बड़े धनी घराने में तारा का ब्याह किया, पर बचपन ही में दुःख और शोक से तारा ने प्राण त्याग दिए। गांव के ब्राह्मण पुरोहितों की बात पर आपकी नेक सलाह को कुछ परवाह न कर मैंने बड़े कुलीन घराने में लड़की ब्याही, भगवान ने उस पाप का दंड हाथो हाथ दिया। बेचारी कामिनी बच्ची का मुँह देख कर कलेजा फटा जाता है। दुनिया में मेरा और कोई नहीं है, सुख की सारी आशा भी जा चुकी, बच्चा शिवनाथ के अलावा दूसरा सहारा नहीं है, बसन्ती और चम्पा हैं। वे भी मेरे पेट की बच्ची की तरह हैं उनकी अभागिनी माता मरते समय उन्हें मुझे सौंप गई थी। गुरु देव, अब आपही इनके एक मात्र बड़े हैं, मुरब्बी हैं, इन बच्चों का भार लीजिए, जो मुनासिब समझिए कीजिए, यह अनाथ विधवा अब और यह बोझा संभाल नहीं सकती।

इतना कहकर शिवनाथ की माता प्रबल वेग से आंसुओं की धारा बहाने लगी। पितृ तुल्य गुरु देव के सामने दुःख की कहानी कहकर मानो शोक कुछ कम हुआ।

शिवनाथ की माता की कहानो सुनते सुनते वृद्ध की आंखें कई बार आंसू से भर गई थीं। अस्तु, निराश्रय विधवा को रोते देख उनकी आंखों से भी आंसू टपकने लगे। देर तक मन को वश में न कर सके, थोड़ी देर बाद बोले—पुत्री, तुम्हारी बातों से मेरा मन बड़ा विचलित हो गया है। अब क्या पूछती हो, कहो।

शि० मा०—मैं केवल यही पूछती हूँ कि विधवा विवाह क्या महापाप है ?

गुरुदेव—पुत्री, पापपुण्य का निर्णय परमात्मा कर सकते हैं, हम लोग तो केवल शास्त्रों की कुछ थोड़ी बहुत बात बतला सकते हैं।

शि० मा०—अच्छा, वही बतलाइए। हम लोगों के सनातन हिन्दू शास्त्रों में क्या यह बात नहीं मिलती ? लोगों के कहने सुनने निन्दा अपयश की बात मैं नहीं पूछती। मुझे अब बहुत दिन जीना नहीं है। लोक निन्दा से मेरा कुछ विशेष बिगड़े सुघरेगा नहीं।

गुरु—पुत्री, शास्त्र तो एक नहीं है और सब शास्त्र एक समय के बने हुए भी नहीं हैं, और सभी में एक ही तरह का लेख भी नहीं है। जिस जिस समय हिन्दुओं का जैसा आचार-व्यवहार रहा है, उसीका निचोड़ सार भाग हम लोगों का शास्त्र है।

शि० मा०—गुरुजी, मैं औरत ठहरी, यह सब क्या समझूँ। मैं केवल यही जानना चाहती हूँ कि सनातन शास्त्रों में विधवा-विवाह निषिद्ध है कि नहीं, खाली इतना बतला दीजिए।

गुरुदेव—इस समय यह चाल निषिद्ध है, इस लिए

आज कल के शास्त्र से भी यह बात निषिद्ध ही है। इसमें और पूछना क्या है ?

शि० मा०—गुरुजी, आज कल के शास्त्र और पुराने शास्त्र का भगड़ा मैं नहीं जानती। मैं मूर्ख, अनपढ़ अबला हूँ। आप सब पढ़ चुके हैं, हमारे धर्म के जो मूल शास्त्र हैं उनका निचोड़ इस अबला को समझा दीजिए। मेरा मन बड़ा व्याकुल हुआ है। सुनती हूँ कि कलकत्ते के किसी बड़े भारी पंडित के मत में विधवा विवाह शास्त्रानुकूल है, पर आप के मुंह से सुने बिना मुझे विश्वास नहीं आता। आपका वचन ही मेरा वेदवाक्य है।

गुरुदेव बहुत देर तक सोचते रहे। अन्त में धीरे-धीरे कहने लगे—पुत्री, जब तुम पूछती हो तो तुमसे सब साफ साफ कहूँगा। तुमने जिन पंडितों की बात कही, वे मेरे गुरुभाई थे, उनकी पण्डिताई, शास्त्र-विद्या, सचाई मुझे सब मालूम है। एक दिन की बात है कि यही विधवा विवाह के सम्बन्ध में मुझसे और विद्यासागर महाशय से खूब तर्क-वितर्क हुआ। मैं खूब भगड़ता रहा। उस समय मुझे विद्या का बड़ा अभिमान था। पर नहीं पुत्री, बचपन से मैं उस पण्डित श्रेष्ठ को जानता हूँ। वे झूठे नहीं हैं, ठग भी नहीं हैं। उनके कथन का एक एक अक्षर सत्य है। विधवा-विवाह सनातन हिन्दूशास्त्र में निषिद्ध नहीं है। मेरे परम मित्र रामप्रसाद सरस्वती का भी यही मत है, वह भी अपनी सम्पत्ति प्रकट करके तुम्हें सन्तुष्ट करेंगे।

शि० मा०—गुरुजी, आपने अपनी अनाथ कन्या का जी जैसा ठंडा किया है, उसके बदले नारायण जी आपका सौ सौ जन्म तक मंगल करेंगे। मैं अब और किसी से शास्त्र की

व्यवस्था, रीति-रस्म की बात पूछने नहीं जाऊँगी। पर हाँ, इतना और जानना चाहती हूँ कि नारायणजी की आंखों में यह बात भली है कि बुरी। आप दोनों महा विद्वान पण्डित इस जगह हैं। कृपा करके इसका जवाब देकर मेरी आत्मा का बोझ हलका कीजिए।

रामप्रसाद सरस्वती—पुत्री ! संसार के बड़े से बड़े पण्डित भी इस बात का जवाब नहीं दे सकते। मैं किस गिनती में हूँ, परमात्मा के मन में क्या है उसका अणुमात्र जानना भी आदमी की शक्ति से बाहर है। पर हाँ इतना जरूर कह सकते हैं कि जो करुणा के सागर हैं उन्होंने बालविधवा को जन्म भर की वैधव्य यंत्रणा भोगने के लिए पैदा किया है, मेरी छोटी सी बुद्धि में तो यह बात नहीं आती।

सरस्वती महाराज की स्थिर गम्भीर पुण्यमय वाणी इस छाटी सी कुटिया में गूँजने लगी। सरस्वती महाराज कौन हैं ?

उपसंहार

वैशाख महीने में पहले पहल कुन्दनपुर के गांव से हमारी और बैजनाथजी की सपरिवार मुलाकात हुई थी। यद्यपि इनसे जान-पहिचान हुए अभी एक बरस भी नहीं हुआ है, पर न जाने क्यों इनसे अपने घरवालों की तरह प्रीति हो गई है। फिर वैशाख महीना आया, पाठक चलो फिर कुन्दनपुर की कुटिया में जाकर इनसे बिदा हो आवें।

बैजनाथजी की नौकरी-चाकरी कुछ नहीं लगी, और न उनकी गरीबी गई। बरस भर कलकत्ते रहकर अपनी खेती-बारी देखने के लिए वह गांव में लौट आए। गोपाल बाबू ने हाईकोर्ट के दफ्तर में उनके लिए एक काम ठीक किया

था । कोई भी समझदार युवक ऐसा मौका हाथ से जाने नहीं देता । पर शायद हमारे बैजनाथजी की बुद्धि उतनी तेज नहीं थी । उसमें जरा गांव-गवई की हवा लगी हुई थी, इसीलिए उन्होंने वह काम लेना नहीं चाहा । वे अपने गांव पर लौट आए । शिवनाथ जी ने और दो-चार महीने कलकत्ते रहने के लिए उनसे बहुत कहा, पर वे बोले—नहीं शिवनाथ, कलकत्ता खूब देख लिया अब देखने की रुचि नहीं है ? बसन्ती अपना पूर्ववत आम की चटनी बनाने और घर का धन्धा करने लगी । घर के धन्धे में अब एक और सुविधा भी हो गयी थी । बसन्ती की ताई के तारा के अलावा और कोई सन्तान नहीं था । तारा के मरने के बाद उनका मन भी सदा दुःखी रहता था । इसलिए दोपहर के समय हर रोज बसन्ती के यहां आ बैठती, बसन्ती के बच्चों को खिलाती या खिलावन की स्त्री से गप्प-सप्प इधर-उधर की बात-चीत करती थीं । खिलावन की स्त्री भी ताईजी और बसन्ती दोनों के केशसंवार दिया करती थी और बसन्ती सारी दुपहरिया हाथ में लगघी लेकर पेड़ों से कच्चे आम तोड़ती फिरती थी । ताईजी कहा करतीं—बसन्ती लड़की अच्छी है पर अभी तक उसकी बुद्धि पकी नहीं ।

रमानाथ जी की एकलौती कन्या मर चुकी है, पहले तो कुछ दिनों तक उन्हें जरा गम हुआ, पर वह रोजगारी काम-काज के आदमी ठहरे, यह शोक थोड़े ही दिन में भूल गए । अमीनगिरी का काम भी पूरे उत्साह से कर रहे थे, विशेष कर बांकीपुर की कलकटरी में सिरिस्तेदारी की जगह खाली होने वाली थी । रमानाथ उसी पर ताल लगाए बैठे थे । इसलिए उनकी जिन्दगी भी लक्ष्य से खाली नहीं थी ।

शिवनाथ को मां, आंखों आंसू बहाती हुई बहू चंपा को घर लाकर बुढ़ौती उमर में ठंडी हुई। ब्याह कलकत्ते ही में हुआ था, ब्याह में कोई आए कोई नहीं आए। परन्तु इसके लिए काम रुका नहीं रहा। जो लोग इस काम के प्रधान उद्योगी थे उन लोगों ने भी इसकी कुछ ऐसी परवाह नहीं की। सदा के हंसमुख ठंडे मिजान देवी बाबू जाएं कि न जाएं इसी असंपंजस में पड़े हुए थे। गृहणी जी से उन्होंने चर्चा की तो वह ऐसी बिगड़ी कि फिर आने-जाने की बात मुंह से भी नहीं निकली। मुहल्ले के ब्राह्मण पुरोहित, पंच चौधरी महाशयों ने खूब हल्ला मचाया, ब्याह में विघ्न डालने की भी यथासाध्य चेष्टा की, बड़े उछले कूदे, पर अब वह जमाना नहीं रहा कि इन लोगों के विरोध से कोई काम रुक जाय। हाँ, इन लोगों का माहात्म्य अवश्य जाहिर हो जाता है। गोपाल बाबू अपने बीसों शिक्षित दोस्तों के साथ इस विवाह में शामिल हुए न्योता खाने आये, और भी कलकत्ते के दस-पांच भले आदमी इस विवाह में शामिल हुए। बड़ी हंसी-खुशी से यह शुभ कार्य निर्विघ्न समाप्त हुआ। विवाह में विद्यासागर के पक्षवाले पण्डित लोग आवेंगे, इसी डर से मुहल्ले के पण्डित शास्त्रियों ने उधर भाँकने की हिम्मत नहीं की। मुहल्ले के देशहितैषी हिन्दू कुल तारक युवकगण जो इस अहिन्दू कार्य में विघ्न डालने और ढेला मारने आए थे, वे दरवाजे पर एक लाल मुंह के अहिन्दू सार्जन को देखकर चुपचाप जेब का ढेला जेबही में लिए हुए वापिस गए।

शिवथानके ब्याह के बाद बैजनाथ गांव में आए, पहले लोगों ने इनसे खान-पान का सब सम्बन्ध छोड़ दिया। परन्तु अन्त में ताईजी के बहुत कुछ कहने-सुनने से रमानाथ जी ने

सबको बुलाकर एक फैसला कर दिया। फैसला यह हुआ कि शिवनाथ प्रायश्चित्त करें, पर शिवनाथ को कालेज की हवा लग चुकी थी। वह ऐंठ बैठा। बोला—मैंने यह काम कुछ अधर्म समझ कर नहीं किया है, इसलिए प्रायश्चित्त कदापि नहीं करूँगा। अन्त को उनकी मां ने एक दिन ब्राह्मण भोजन करा दिया। रमानाथ जरा दिल्लगीबाज थे, हंस कर शिवनाथ से बोले, अरे भाई, तुम लोग निरे लड़के हो, कुछ समझते बूझते नहीं, अरे बरसात का पानी चाहे जहाँ से हो कर जाय आखिर जायगा तो नदी ही में न। तुम विधवा से व्याह करो या किसी की बहू बेटी निकाल लाओ, बस ब्राह्मणों के पेट में कुछ पड़ने ही से हुआ, सब बखेड़ा मिट जाता है। वही तो आज कल की बिगदरी हुई है, पंचायत हुआ है, तुम लोग मानो चाहे मत मानो। शिवनाथ जी ने जबाब दिया—बिरादरी पंचायत की ऐसी दुर्दशा हो गई है, इसीलिए तो सुधार की सख्त जरूरत है, जिस बिरादरी में न्याय-अन्याय का विचार नहीं, उसका नाश भी शीघ्र ही हो जाता है इत्यादि इत्यादि।

खिलावन की स्त्री मनहीमन चंपा पर बेहद नाराज हुई, पर माया नहीं छोड़ सकी, फिर छिपा कर चोरी से चीनी वाला दही शिवनाथ जी के यहां ले जाने लगी। थोड़े ही दिनों में फिर से दोनों में पहले सा मेल हो गया।

शिवनाथ की मां पहले की तरह अपने पूजा-अर्चण में लगी रहती, गृहस्थी के धन्धे से कुछ मतलब नहीं रखती थी। कामिनी ही घर का सारा इन्तजाम करती। इतने दिन बाद उसके हाड़ में जरा हवा लगी। कामिनी ही भंडार की चीज-वस्तु का इन्तजाम करती, रसोई करती और गृहस्ती चलाती थी। चम्पा बड़ी भक्ति से अपनी सास की पूजा करती। कामिनी

बहन से स्नेह करती और उसकी आज्ञा पालन कर अपने धन्य समझती थी। घर में, आंगन में भाँड़ देती, तालाब जल भर लाती, मसाला पीसती, तरकारों बनाती दूध गर करती और तालाब पर जा कर बरतन माँजना उसे बड़े अच्छा लगता था। तालाब के किनारे आम, के कटहर के आम और फलों के भी कई पेड़ थे, जो फल पकता, चम्पा तोड़ लाती और कामिनी के पास रख देती थी।

एक दिन संध्या के समय चम्पा इन्हीं पेड़ों के बीच खड़ी हुई थी। न जाने क्या सोच रही थी, मालूम नहीं कहां से एक एक शिवनाथ पीछे से आ कर बोले क्या सोच रही हो ?

चम्पा जरा शरमा कर घुँघट काढ़ कर बोली—ना बतलाती।

शिवनाथ—हाँ, बतलाओगी क्यों नहीं ? बतलाओ न।

यह कह कर शिवनाथ जी ने धीरे से उसके पास जा कर उस फूल धनुष सराखे कोमल देहलता को हृदय से लगा लिया और लज्जा से नाँचे मुँहे हुए मुख को उठा कर गुलाब ऐं लाल लाल होठों का गाढ़ चुम्बन किया। उनके स्पर्श से चम्पा का सारा शरीर काँपने लगा। और भी अधिक लज्जित हो कर वह बोली—छिः यह क्या करते हो, छोड़ो छोड़ो।

शिवनाथजी छोड़ कर बोले—अच्छा, अब बतलाओ ?

चम्पा जरा मुसकुरा कर बोली—लड़कपन में जब तुम्हारा यहाँ आती तो इसी अमरुद के पेड़ से तुम अमरुद तोड़ तो कर मुझे खिलाते थे, वही याद कर रही थी।

शिवनाथ जी हँस कर बोले—अच्छा, वही बचपन का प्यार अभी तक नहीं भूला हो। हमें लिखते लज्जा आती है कि शिवनाथ जी उसी अमरुद के पेड़ पर चढ़ गये, और चम्पा

नीचे अमरुद बटोरने लगी। इसी समय तालाब के घाट पर न जाने किसकी आहट आई, कामिनी बहन किसी काम से इधर ही आ रही है, मारे लज्जा और डरसे चम्पा धबरा गई जब शिवनाथ भागें क्योंकर ? कोई रास्ता नहीं पर चम्पा स्वामी के सब गुण नहीं जानती थी। शिवनाथजी एक छलांग में बाग का घेरा लांघ कर बाहर जा पड़े और क्षण भर में आंखों से ओमल हो गए।

इसी वर्ष वे एफ० ए०, और दो वर्ष बाद बी० ए० की परीक्षा में भी सम्मान के साथ पास हुए। एक जगह अच्छी सरकारी नौकरी भी उन्हें मिल गई, पर बसन्ती हमेशा यही दुःख किया करती थी, कि उनकी पेड़ पर चढ़ने की आदत नहीं छूटी।



हमारा नया प्रकाशन

दुर्गेश नन्दिनी	२)	नेकर	१
वैदिक लोक व्यौहार	III)	मरीच	१
शिक्षा	III)	दहेज	१
चार्य वैदिक ससंग	I=)	नारी धर्म शिक्षा	
गति शीलविचार	II)	कन्या शिक्षा दर्पण	
व्योहार भानु	I=)	कुत्सित जीवन	१
वििलास	१)	ब्रह्मचर्य की महिमा	१
ग्राम गीतांजली	II)	तीन साथी	१
जापान की राज नीतिक-		लेन देन	
	४II)	मौसेरे भाई	
रत सिंह	२)	सौभाग्यवती	
गार वेदान्त	१II)	पाक विज्ञान	
स्य नीति	III)	राजपूत नन्दिनी	१
भारतीय विज्ञान	२)	दृष्टान्त सागर भाग १, २	
श्री कृष्ण जन्मोत्सव	II)	विंदु बासनी	
बापू के विचार	II)	माहेश्वरी जाति का	
अखण्ड भारत	१)	इतिहास	
गंगा जमुना	१II)	कलकत्ते का कत्ले आम	
घरेलू विज्ञान	२I)	वात्सयान काम सूत्र	
ममता	२II)	संसार की भीषण राज्य	
दिवानो दुनियाँ	२II)	क्रांतियाँ	
ऋषिब्रत कथा	I=)	आत्म दर्शन	

पुस्तक मिलने का पता—

वैदिक पुस्तकालय,

नीचीबाग, बनारस

